फ्रेडरिक एंगेल्स

परिवार, निजी सम्पत्ति और राज्य की उत्पत्ति

ल्यूईस मौर्गन की खोज के सम्बन्ध में

प्रगति प्रकाशन
मास्को

विषय-सूची

प्रकाशकीय

यह पुस्तक एंगेल्स के दो महीनों–मार्च, १८८४ के अन्त से मई, १८८४ के अन्त तक के परिश्रम का परिणाम है। मार्क्स की पांडुलिपियों का अध्ययन करते हुए उनमें प्रगतिशील अमरीकी विद्वान एल० जी० मौर्गन की पुस्तक 'प्राचीन समाज' के विशद नोट मिले, जिन्हें मार्क्स ने १८८०–१८८१ में तैयार किया था। साथ में मार्क्स की अपनी आलोचनात्मक टिप्पणियां, अपनी धारणाओं की रूपरेखाएं और अन्य स्रोत-सामग्रियों की टीपें भी थीं। इन नोटों का अध्ययन करने के बाद एंगेल्स को विश्वास हो गया कि मौर्गन की पुस्तक इतिहास की भौतिकवादी समझ तथा आदिम समाज विषयक मार्क्स की और उनकी अपनी धारणाओं की पुष्टि करती है। अतः उन्होंने मार्क्स द्वारा छोड़ी हुई सामग्री और मौर्गन की पुस्तक में उपलब्ध कतिपय तथ्यात्मक सामग्री एवं निष्कर्षों को आधार बनाकर एक विशेष पुस्तक लिखने का निर्णय किया। अपनी दृष्टि में वह इस प्रकार "कुछ मानों में मार्क्स की एक अंतिम अभिलाषा की पूर्ति" भी कर सकते थे। प्रस्तुत पुस्तक को लिखने में एंगेल्स ने यूनान, रोम, प्राचीन आयरलैण्ड, प्राचीन जर्मनों, आदि के इतिहास से संबंधित अपनी गवेषणाओं के दौरान संकलित विविध सामग्री को भी इस्तेमाल किया।

'परिवार, निजी संपत्ति तथा राज्य की उत्पत्ति' में एंगेल्स मार्क्सवादी साहित्य में पहली बार ऐतिहासिक भौतिकवाद के दृष्टिकोण से परिवार के आविर्भाव और विकास के प्रश्न का विवेचन करते हैं। परिवार को एक ऐतिहासिक अवधारणा मानते हुए वह प्राचीन यूथ-विवाह से लेकर निजी संपत्ति के आविर्भाव के साथ प्रतिष्ठित एकनिष्ठ परिवार तक उसके विभिन्न

रूपो के समाज के विकास के विभिन्न चरणों के साथ आंगिक संबंध और उत्पादन के ढंग पर इन रूपों की निर्भरता को उद्घाटित करते हैं। वह दिखाते हैं कि कैसे उत्पादक शक्तियों के विकास के साथ-साथ सामाजिक व्यवस्था पर गोत्र व्यवस्था के बंधनों का प्रभाव कम होता गया और निजी स्वामित्व की विजय के साथ-साथ एक ऐसे समाज का उदय हुआ जिसमें पारिवारिक ढांचा पूर्णतः संपत्ति के संबंधों पर आधारित था।

एंगेल्स पूंजीवादी परिवार की कटु आलोचना करते हैं। वह निजी स्वामित्व के बोलबाले की परिस्थितियों मे पुरुषों के समक्ष स्त्रियों की असमानता के आर्थिक आधार का उद्घाटन करते हैं और दिखाते हैं कि पूंजीवादी उत्पादन पद्धति के उन्मूलन के फलस्वरूप ही स्त्रियों को वास्तविक अर्थों मे मुक्त कराया जा सकता है। वह बताते हैं कि केवल समाजवादी समाज मे ही, जिसमे स्त्रियो को सामाजिक उत्पादन में व्यापक तौर से भाग लेने का अवसर दिया जायेगा, सामाजिक जीवन के सभी क्षेत्रों मे वे पूर्णत. पुरुषो के समकक्ष होंगी और उन्हे घरेलू कामकाज के बोझ से छुटकारा मिलेगा (यह बोझ समाज उत्तरोत्तर अपने कंधो पर लेता जायेगा), दोनो लिंगों की समानता, परस्पर आदर तथा वास्तविक प्रेम पर आधारित नये, उच्च प्रकार का परिवार अस्तित्व मे आयेगा।

एंगेल्स की रचना का काफी अंश स्वामित्व के विभिन्न रूपों के आविर्भाव तथा विकास और विभिन्न सामाजिक व्यवस्थाओ की उन पर निर्भरता की गवेषणा से संबंध रखता है। वह अकाट्य तौर पर प्रमाणित करते हैं कि निजी स्वामित्व की प्रथा अनादि-अनन्त नही है और आदिमकालीन इतिहास मे एक लंबे समय तक उत्पादन के साधन सामूहिक संपत्ति थे। वह विस्तार से दिखाते हैं कि कैसे उत्पादक शक्तियो के विकास और श्रम-उत्पादकता की वृद्धि के साथ अन्य जनों के श्रम के फलों को हथियाने की संभावना और फलत:, निजी स्वामित्व तथा मानव द्वारा मानव का शोषण पैदा होते है और कैसे इस प्रकार समाज-विरोधी वर्गो में बट जाता है। राज्य की उत्पत्ति इसी का प्रत्यक्ष परिणाम थी।

राज्य की उत्पत्ति और सार की समस्या एंगेल्स की रचना का मुख्य विषय, मुख्य बिंदु है। एंगेल्स द्वारा इस समस्या का सर्वतोमुखी विवेचन राज्य-विषयक मार्क्सवादी विचारधारा के विकास का एक महत्त्वपूर्ण चरण था और इस दृष्टि से उनकी पुस्तक मार्क्स की 'लूई बोनापार्त की अठारहवी

ब्रूमेर', 'फ़्रांस में गृह-युद्ध' और स्वयं एंगेल्स की 'ड्यूहरिंग मत-खंडन' जैसी क्लासिक रचनाओं की श्रेणी में आती है।

इस पुस्तक में एंगेल्स ने उन विद्वानों का विरोध किया है, जो राज्य को एक ऐसी वर्गोपरि शक्ति के रूप में चित्रित करते हैं, जिसका उद्देश्य सभी नागरिकों के हितों की समान रूप से रक्षा करना है। प्राचीन एथेंस, प्राचीन रोम और जर्मनों में राज्य के उदय का उदाहरण देते हुए वह स्पष्टतः और विश्वासोत्पादक ढग से दिखाते हैं कि राज्य अपने उदय के काल से ही सदैव उन वर्गों के प्रभुत्व का साधन रहा है, जो उत्पादन के साधनों के स्वामी हैं। एंगेल्स राज्य के विभिन्न ठोस रूपों का, विशेषतः पूंजीवादी-जनवादी गणराज्य का, जिसे पूंजीवाद के हिमायती जनवाद का सर्वोच्च रूप कहते हैं, विश्लेषण करते हैं। एंगेल्स इस गणराज्य के वर्गीय सार को बेनकाब करते हुए दिखाते हैं कि इसके जनवादी मुखौटे के पीछे पूंजीवादी वर्ग का प्रभुत्व ही छिपा हुआ है।

संसदीय भ्रमों के विरुद्ध चेताते हुए, जिनका शिकार तब तक मजदूर आन्दोलन के अनेक नेता और विशेषतः जर्मन सामाजिक-जनवाद में व्याप्त अवसरवादी तत्त्व बन चुके थे, एंगेल्स बताते है कि जब तक पूंजी की सत्ता विद्यमान है, तब तक किसी भी प्रकार की जनवादी स्वतंत्रताएं अपने आप ही मेहनतकशों को मुक्ति नही दिला सकतीं। साथ ही वह जनवादी स्वतंत्रताओं को बनाये रखने और बढ़ाने में सर्वहारा की रुचि पर भी जोर देते हैं, जो समाज के क्रांतिकारी परिवर्तन के हेतु उसके मुक्ति संघर्ष के विकास के लिए अधिकतम अनुकूल परिस्थितिया तैयार करती हैं।

इन प्रश्नो की जांच करते हुए कि कैसे उत्पादक शक्तियों के विकास के साथ-साथ भौतिक संपदाओं के उत्पादन की पद्धति भी बदलती जाती है और कैसे एक चरण विशेष में निजी स्वामित्व का उदय तथा समाज का विरोधी वर्गों मे विभाजन अनिवार्य तथा नियमसंगत बन जाते हैं, एंगेल्स अपनी पुस्तक मे मार्क्सवाद के प्रणेताओं के इस निष्कर्ष का और विस्तार से प्रतिपादन करते हैं कि पूजीवादी समाज मे उत्पादक शक्तियों का आगे विकास भी निजी संपत्ति तथा शोषक वर्गों के अस्तित्व को अनिवार्यतः उत्पादन के विकास में बाधक बना देगा। यह सर्वहारा क्रांति को अवश्यंभावी बनायेगा, जिसे, जैसा कि मार्क्स और एंगेल्स ने अनेक बार बताया था, पूजीवादी वर्ग के पुराने शोषणाधारित [illegible]

स्थान पर नये प्रकार के राज्य, जनवाद के सर्वोच्च रूप – सर्वहारा के अधिनायकत्व – की स्थापना के जरिये ही संपन्न किया जा सकता है।

राज्य विषयक मार्क्सवादी प्रस्थापनाओं का, जिन्हें एंगेल्स ने इतने उत्कृष्ट ढंग से विवेचित किया था, आगे चलकर व्ला० इ० लेनिन ने अपनी महान रचना 'राज्य और क्रांति' में नये ऐतिहासिक युग के दृष्टिगत सर्वतोमुखी विश्लेषण किया।

१८६० में एंगेल्स अपनी पुस्तक के नये संस्करण की तैयारी करने लगे, क्योंकि तब तक आदिम समाज के इतिहास के बारे में बहुत-सी नयी सामग्री प्रकाश में आ चुकी थी। उन्होंने सारे नये साहित्य का, विशेषतः रूसी विद्वान म० म० कोवालेव्स्की की रचनाओं का अध्ययन किया, पहले संस्करण के मूलपाठ में बहुत-से परिवर्तन और सुधार किये और बहुत-सी नयी बातें जोड़ीं। सर्वाधिक परिवर्द्धन परिवार विषयक अध्याय में किया गया, क्योंकि तब तक पुरातत्त्ववेत्ता और नृवंशशास्त्री कई नई खोजें कर चुके थे (एंगेल्स द्वारा प्रकाशित चौथे संस्करण में किये गये परिवर्तनों को वर्तमान अनूदित संस्करण में फुटनोट के रूप में छापा गया है)। किन्तु इन परिवर्तनों और सुधारों ने एंगेल्स के निष्कर्षों को प्रभावित नहीं किया। उल्टे, नयी सूचनाओं ने उनकी पुनर्पुष्टि ही की। इन निष्कर्षों ने आगे चलकर भी अपना महत्त्व ज्यों का त्यों बनाये रखा। विज्ञान के परवर्ती विकास ने एंगेल्स की मूल प्रस्थापनाओं की सत्यता को प्रमाणित किया, हालांकि मौर्गन की पुस्तक से ली गयी कुछ बातें नवीनतम वैज्ञानिक सूचनाओं के प्रकाश में थोड़ा-बहुत त्रुटि-सुधार की अपेक्षा करती हैं (जैसे आदिमयुगीन इतिहास का मौर्गन द्वारा प्रस्तावित कालविभाजन और इस संबंध में प्रयुक्त शब्दावली, आदि)।

'परिवार, निजी संपत्ति और राज्य की उत्पत्ति' का एंगेल्स द्वारा संशोधित तथा परिवर्द्धित संस्करण १८६१ के अन्त में स्टुटगार्ट से प्रकाशित हुआ। आगे चलकर उसमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ। एंगेल्स ने इस संस्करण के लिए नयी भूमिका भी लिखी (देखिये वर्तमान संस्करण, पृ० १२)।

वर्तमान संस्करण १८६१ में प्रकाशित चौथे जर्मन संस्करण और पहले तथा चौथे संस्करणों की भूमिकाओं का अनुवाद है।

१८८४ के पहले संस्करण की भूमिका

निम्नलिखित अध्याय कुछ मानों में एक अंतिम अभिलाषा की पूर्ति हैं। स्वयं कार्ल मार्क्स की यह योजना थी कि मौर्गन की खोज के परिणामों को उन निष्कर्षों के साथ सम्बद्ध करते हुए पेश करें जिन पर वह—कुछ सीमाओं के अन्दर मैं कह सकता हूं कि हम दोनों—इतिहास का भौतिकवादी दृष्टिकोण से अध्ययन करने के बाद पहुंचे थे, और इस तरह उनके पूरे महत्त्व को स्पष्ट करें। कारण कि मौर्गन ने अपने ढंग से अमरीका में इतिहास की उस भौतिकवादी धारणा का पुनः आविष्कार किया था, जिसका मार्क्स चालीस साल पहले पता लगा चुके थे, और बर्बर युग तथा सभ्यता के युग का तुलनात्मक अध्ययन करके इस धारणा के आधार पर वह, मुख्य बातों में, उन्ही नतीजों पर पहुंचे थे जिन पर मार्क्स पहुंचे थे। और जिस तरह जर्मनी के अधिकृत अर्थशास्त्री वर्षों तक मनोयोग के साथ 'पूंजी' की नक़ल करने के साथ-साथ उसे अपनी ख़ामोशी के द्वारा दबा देने में बराबर ही लगे रहे थे, उसी तरह का व्यवहार इंगलैंड के "प्रागैतिहासिक" विज्ञान के प्रवक्ताओं ने मौर्गन के 'प्राचीन समाज'* के साथ किया। जो काम पूरा करना मेरे दिवंगत मित्र को न बदा था, उसकी कमी को मेरी यह रचना कुछ ही हद तक पूरा कर सकती है। परन्तु मौर्गन की पुस्तक से लिये लम्बे-लम्बे उद्धरणों के साथ मार्क्स ने जो आलोचनात्मक टिप्पणियां[1]

---

* «*Ancient Society, or Researches in the Lines of Human Progress from Savagery through Barbarism to Civilization*». By Lewis H. Morgan. London, MacMillan & Co., 1877. यह पुस्तक अमरीका में छपी थी और लन्दन में असाधारण कठिनाई से मिलती है। लेखक की, चन्द वर्ष हुए, मृत्यु हो गई। (एंगेल्स का नोट।)

लिखी थी, वे मेरे सामने मौजूद हैं और उनको मैंने, जहां भी सम्भव हो सका है, उद्धृत किया है।

भौतिकवादी धारणा के अनुसार इतिहास में अन्ततोगत्वा निर्णायक तत्त्व तात्कालिक जीवन का उत्पादन और पुनरुत्पादन है। परन्तु यह खुद दो प्रकार का होता है। एक ओर तो जीवन्-निर्वाह् के, भोजन, परिधान तथा आवास के साधनों तथा इन चीज़ों के लिये आवश्यक औज़ारों का उत्पादन होता है, और दूसरी ओर, स्वयं मनुष्यों का उत्पादन, यानी जाति-प्रसारण होता है। किसी विशेष ऐतिहासिक युग तथा किसी विशेष देश के लोग जिन सामाजिक व्यवस्थाओं के अन्तर्गत रहते हैं, वे इन दोनों प्रकार के उत्पादनों से, अर्थात् एक ओर श्रम के विकास की अवस्था और दूसरी ओर परिवार के विकास की अवस्था से निर्धारित होती हैं। श्रम का विकास *जितना ही कम होता है, तथा श्रम-उत्पादन की मात्रा जितनी ही कम होती है*, और इसलिये समाज की सम्पदा जितनी ही सीमित होती है, समाज-व्यवस्था मे रक्त-सम्बन्धो का प्रभुत्व उतना ही अधिक जान पड़ता है। लेकिन रक्त-सम्बन्धो पर आधारित इस समाज-व्यवस्था के भीतर श्रम की उत्पादन-क्षमता अधिकाधिक बढ़ती जाती है, उसके साथ निजी सम्पत्ति और विनिमय बढ़ते हैं, धन का अन्तर बढ़ता है, दूसरो की श्रम-शक्ति को इस्तेमाल करने की सम्भावना बढती है, और वर्ग-विरोधों का आधार तैयार होता है। नये सामाजिक तत्त्व बढ़ते हैं जो कई पीढियो के दौरान समाज की पुरानी व्यवस्था को नयी अवस्थाओं के अनुकूल ढालने की कोशिश करते है, यहां तक कि अन्त में दोनों के बेमेल होने के कारण एक पूर्ण क्रान्ति हो जाती है। रक्त-सम्बन्धो पर आधारित पुराना समाज नव-विकसित सामाजिक वर्गो की टक्करों में ध्वस्त हो जाता है; उसकी जगह राज्य के रूप में संगठित एक नया समाज ले लेता है, जिसकी नीचे की इकाइया रक्त-सम्बन्धो पर आधारित जन-समूह नही, बल्कि क्षेत्रीय जन-समूह होती हैं जिसमें पारिवारिक व्यवस्था पूरी तरह सम्पत्ति की व्यवस्था के अधीन होती है, और जिसमे वे वर्ग-विरोध तथा वर्ग-संघर्ष अब खूब खुलकर बढ़ते हैं, जो *अब तक के समस्त लिखित इतिहास* की विषयवस्तु हैं।

मौर्गन की महानता इस बात मे है कि उन्होंने मोटे रूप में हमारे लिखित इतिहास के इस प्रागैतिहासिक आधार का पता लगाया और उसका

पुनर्निर्माण किया। उनकी महानता इस बात में भी है कि उन्होंने उत्तरी अमरीका के आदिवासियों के रक्त-सम्बन्धों पर आधारित जन-समूहों के रूप में वह कुंजी ढूंढ निकाली, जिससे प्राचीन यूनानी, रोमन तथा जर्मन इतिहास की सबसे महत्त्वपूर्ण तथा अभी तक अबूझ बनी हुई पहेलियों को सुलझाया जा सकता था। परन्तु उनकी पुस्तक एक दिन का काम नहीं थी। लगभग चालीस वर्ष तक, जब तक कि वह अपनी सामग्री को पूरी तरह से समझ लेने में कामयाब न हो गये, वह उसके साथ जूझते रहे। यही कारण है कि उनकी पुस्तक हमारे काल की इनी-गिनी युगान्तरकारी रचनाओं में से एक है।

आगे के पृष्ठों में जो व्याख्या दी गयी है उसमें, पाठक आम तौर पर आसानी से यह पहचान लेंगे कि कौनसी बातें मौर्गन की पुस्तक में ली गयी हैं और कौनसी मैंने खुद जोड़ी हैं। यूनान और रोम की चर्चा करनेवाले ऐतिहासिक अंशों में मैंने अपने को केवल मौर्गन की सामग्री तक ही सीमित नहीं रखा, बल्कि मेरे पास जो मसाला मौजूद था, उसका भी इस्तेमाल किया है। केल्ट और जर्मन लोगों से सम्बन्धित हिस्से मुख्यतया मेरे अपने हैं; इस विषय में मौर्गन के पास जो सामग्री थी वह प्रायः दूसरों की सामग्री मूल रूप में उनकी अपनी न थी, और जहां तक जर्मन परिस्थितियों का सम्बन्ध है, एक टैसिटस को छोड़कर, उन्हें मूल सामग्री के रूप में केवल श्री फ़्रीमैन[2] की भ्रष्ट उदारपंथी झुठाइयां ही उपलब्ध थीं। मौर्गन के उद्देश्य के लिये आर्थिक तर्क भले ही पर्याप्त रहे हों, पर मेरे उद्देश्य के लिये वे बिलकुल अपर्याप्त थे; इसलिये उन्हें मैंने शुरू से नये सिरे से लिखकर प्रस्तुत किया है। और अंतिम बात, जाहिर है, कि उन हिस्सों को छोड़कर जहां मौर्गन को स्पष्ट रूप में उद्धृत किया गया है, वहां जो नतीजे निकाले गये हैं, उन सब की जिम्मेदारी मेरे ऊपर है।

२६ मई, १८८४, के क़रीब लिखित

Friedrich Engels. *Der Ursprung der Familie, des Privateigenthums und des Staats. Hottingen-Zürich*, 1884, मे प्रकाशित

१८६१ के चौथे संस्करण की भूमिका

इस रचना के पिछले बड़े संस्करण लगभग छः महीने से अप्राप्य हैं और प्रकाशक* कुछ समय से चाहते रहे हैं कि मैं इसका एक नया संस्करण तैयार करूं। कुछ ज्यादा जरूरी कामों में फंसा रहने के कारण अभी तक मैं इस काम को न कर सका था। पहला संस्करण निकले सात वर्ष हो गये हैं, और इस काल में परिवार के आदिम रूपों के विषय में हमारे ज्ञान में महत्त्वपूर्ण वृद्धि हुई है। इसलिये, आवश्यक था कि पुस्तक के मूल-पाठ में प्रवर्द्धन और सुधार का काम लगन के साथ किया जाये – खास तौर पर इसलिये कि इस नये पाठ के स्टीरियो-मुद्रण का विचार है जिससे आगे कुछ समय के लिये पुस्तक में और परिवर्तन करना मेरे लिये असंभव हो जायेगा।

अतएव, मैंने पूरी किताब को ध्यानपूर्वक संशोधित किया है और उसमें कई जगह नयी बातें जोड़ी हैं, जिनमें, मैं आशा करता हूं, विज्ञान की वर्तमान अवस्था का पूरा-पूरा ध्यान रखा गया है। इसके अलावा, इस भूमिका में, मैंने बाखोफ़ेन से लेकर मोर्गन तक, परिवार के इतिहास के विकास पर एक सरसरी नज़र डाली है। यह मुख्यतया इसलिये कि प्रागैतिहासिक काल के अंग्रेज इतिहासकार, जिन पर अंधराष्ट्रवाद का असर है, आज भी इस बात की भरसक कोशिश कर रहे हैं कि आदिम समाज के इतिहास की हमारी धारणाओं में मोर्गन की खोजों ने जो क्रान्ति की है, उसकी चुप्पी साधकर हत्या कर डाली जाये, हालांकि मोर्गन की खोजों

---

* जो० दीत्स। – सं०

के परिणामों को हथि[illegible] लेने में [illegible] भी नही हिच[illegible]चाते। अन्य देशों मे भी बहुत अक्सर अंग्रेज़ों के इस [illegible] का अनुकरण होता है।

मेरी रचना का कई [illegible] हो [illegible] पहले उसका इतालवी भाषा मे अनुवाद हु[illegible] *famiglia, della proprieta privata e dello stato, versione riveduta dall'autore, di Pasquale Martignelli* नाम से १८८५ में वेनेवेन्टो से प्रकाशित हुआ था। उसके बाद रूमानियाई अनुवाद *Origina familei, proprietatei private si a statului, traducere de Joan Nadejde* नाम से यास्सी से प्रकाशित होनेवाली पत्रिका *Contemporanul* में सितम्बर, १८८५ से मई, १८८६ तक निकला। इसके बाद डेनिश भाषा में इसका अनुवाद *Familjens, Privatejendommens og Statens Oprindelse, Dansk, af Forfatteren gennemgaaet Udgave, besörget af Gerson Trier* नाम से १८८८ में कोपेनहेगन से प्रकाशित हुआ। इस जर्मन संस्करण पर आधारित आरी रावे का किया हुआ फ़ासीसी अनुवाद छप रहा है।

* * *

सातवें दशक के प्रारम्भ तक परिवार का इतिहास नाम की कोई चीज़ थी ही नहीं। इस क्षेत्र में इतिहास विज्ञान उस समय तक पूरी तरह इंजील के उन पाच अध्यायो के असर में था, जिनमें मूसाई शरीअत का जिक्र है। इन अध्यायो मे विस्तार से वर्णित – उसका इतना विस्तृत वर्णन और कही नही मिलता – परिवार के पितृसत्तात्मक रूप को न केवल परिवार का सबसे प्राचीन रूप मान लिया गया था, बल्कि – बहु-पत्नी प्रथा को छोड़कर – उसे और वर्तमान काल के पूंजीवादी परिवार को एक ही चीज़ समझ लिया गया था, मानो परिवार वास्तव मे किसी ऐतिहासिक विकास से गुज़रा हो नही है। अधिक से अधिक बस इतना माना जाता था कि सम्भव है कि आदिम काल में यौन-स्वच्छन्दता का कोई युग रहा हो। इसमे शक नही कि एकनिष्ठ विवाह के अलावा उस समय भी लोगों को पूर्वीय बहु-पत्नी प्रथा और भारत-तिब्बतीय बहु-पति प्रथा का ज्ञान था। लेकिन इन तीन रूपों को किसी ऐतिहासिक क्रम में नही रखा जा सका था और वे साथ-साथ तथा असम्बद्ध रूप में मौजूद दिखाई पड़ते थे। प्राचीन काल की कुछ जातियो मे और आजकल के कुछ जागलियों मे भी

वंश पिता के नाम से नही, वल्कि माता के नाम मे चलता है, और इसलिये उनमे केवल स्त्री-परम्परा ही वैध मानी जाती है। वर्तमान काल की बहुत-सी जातियो में कतिपय निश्चित प्रकार के बड़े-बड़े समूहों में विवाह करने पर बधन लगा हुआ है, और यह प्रथा संसार के सभी भागो में पायी जाती है, हालांकि उनके विषय मे उस वक़्त तक अधिक निकट से खोज नही की गयी थी। इन तथ्यो की उस समय भी लोगों को जानकारी थी और उनके नित नये उदाहरण प्रकाश मे आ रहे थे। पर इन तथ्यों को लेकर क्या किया जाये, यह कोई नही जानता था। यहां तक कि ई० बी० टाइलर की पुस्तक *Researches into the Early History of Mankind, etc* (१८६५)[3] मे इन बातों को उसी तरह की "विचित्र प्रथाओं" की श्रेणी मे डाल दिया गया, जैसे कुछ जागलियो में जलती लकड़ी को लोहे के औजारो से छूने के निषेध की प्रथा या ऐसी ही अन्य धार्मिक मूर्खताओं को।

परिवार के इतिहास का अध्ययन १८६१ से आरम्भ हुआ जबकि बाखोफेन की पुस्तक "मातृ-सत्ता"[4] प्रकाशित हुई थी। इस रचना मे लेखक ने नीचे लिखी प्रस्थापनाओ को पेश किया है: (१) आरम्भ मे मानवजाति यौन-स्वच्छन्दता की अवस्था मे रहती थी जिसे लेखक ने दुर्भाग्य से "हैटेरिज्म" (hetaerism) का नाम दे दिया है; (२) इस स्वच्छन्दता के कारण किसी के भी बारे मे निश्चय के साथ नही कहा जा सकता था कि उसका पिता कौन था, इसलिये वंश केवल माता के नाम से—मातृ-सत्ता के अनुसार ही—चल सकता था, और शुरू मे प्राचीन काल की सभी जातियो मे यह बात पायी जाती थी; (३) चूंकि नयी पीढ़ी की केवल माताओ के बारे मे ही निश्चय हो सकता था, इसलिये स्त्रियो का बहुत आदर और सम्मान किया जाता था, जो बाखोफेन के विचार मे इतना बढ गया था कि पूरा शासन ही स्त्रियो के हाथ मे था (gynaecocracy); (४) एकनिष्ठ विवाह की प्रथा के, जिसमे नारी पर केवल एक पुरुष का अधिकार माना जाता था, जारी होने का अर्थ आदिम धार्मिक आदेश का उल्लंघन था (अर्थात् वास्तव मे, एक ही स्त्री पर अन्य पुरुषो के प्राचीन परम्परागत अधिकार का उल्लघन था), और इसलिये, इस उल्लघन की क्षतिपूर्ति के लिये या उसके प्रति सहिष्णुता का मूल्य चुकाने के लिये पति को स्त्री को एक निश्चित समय के लिये पर-पुरुषो के सामने समर्पित करना पड़ता था।

इन प्रस्थापनाओं का प्रमाण बाख़ोफ़ेन को प्राचीन काल के साहित्य मे मिला था जिसमे से उन्होने असाधारण अध्यवसाय के साथ ऐसे अनगिनत अश जमा किये थे। उनके मतानुसार "हैटेरिज़्म" से एकनिष्ठ विवाह मे और मातृ-सत्ता से पितृ-सत्ता में जो परिवर्तन हुआ, वह – विशेषकर यूनानी लोगो में – धार्मिक विचारों के विकास तथा पुराने दृष्टिकोण के प्रतिनिधि पुराने परम्परागत देवकुल मे नये दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करनेवाले नये देवताओं के प्रवेश करने के परिणामस्वरूप हुआ, जिन्होंने पुराने देवताओं को अधिकाधिक पीछे धकेलकर पृष्ठभूमि मे कर दिया। इस प्रकार, बाख़ोफ़ेन के मतानुसार, पुरुष और नारी की पारस्परिक सामाजिक स्थिति में जो ऐतिहासिक परिवर्तन हुए है उनका कारण उन ठोस अवस्थाओं का विकास नही है जिनमे मनुष्य रहते है, बल्कि उनका कारण मनुष्यों के दिमागों में जीवन की इन परिस्थितियो का धार्मिक प्रतिबिम्ब है। अतः बाखोफेन का कहना है कि ईस्खिलस के नाटक 'ओरेस्टीया' में पतनोन्मुख मातृ-सत्ता और विकासोन्मुख तथा विजयी पितृ-सत्ता के उस सघर्ष का चित्रण किया गया है जो वीर काल मे चला था। क्लिटेमनेस्ट्रा ने अपने प्रेमी एगीस्थस की ख़ातिर अपने पति एगामेम्नोन की हत्या कर डाली, जोकि अभी हाल मे ट्रोय के युद्ध से लौटा था; लेकिन उसका पुत्र ओरेस्तस, जो एगामेम्नोन से पैदा हुआ था, पिता की हत्या का बदला लेने के लिये अपनी मां को मार डालता है। इस पर मातृ-सत्ता की रक्षिकाएं एरिनी देवियां ओरेस्टस का पीछा करती हैं, क्योंकि मातृ-सत्ता के नियमों के अनुसार मातृ-हत्या सबसे जघन्य अपराध है जिसका कोई प्रायश्चित नही है। परन्तु एपोलो, जिसने अपनी मन्दिरवाणी के द्वारा ओरेस्टस को यह कृत्य करने के लिये उकसाया था, और एथेना, जिसे पच बनाया जाता है – ये दोनों पितृ-सत्ता पर आधारित नयी व्यवस्था के प्रतिनिधि है – ओरेस्टस की रक्षा करते है। एथेना दोनो पक्षों की बात सुनती है। ओरेस्टस और एरिनियों मे जो बहस होती है, उसमे इस पूरे विवाद का सार संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है। ओरेस्टस कहता है कि क्लिटेमनेस्ट्रा ने दोहरा अपराध किया है, क्योंकि अपने पति की हत्या करके उसने मेरे पिता को भी मार डाला है। इसलिये एरिनी देविया मेरे पीछे क्यों पड़ी हुई है; उन्होंने क्लिटेमनेस्ट्रा का पीछा क्यो नही किया, उसने तो कही बडा अपराध किया है। जवाब बहुत मार्के का है:

"जिस नर की उसने हत्या की,
नहीं रक्त का था उससे सम्बन्ध।"[1]

जिस पुरुष से उस पुरुष की हत्या करनेवाली नारी का कोई रक्त-सम्बन्ध नहीं है, भले ही वह उसका पति क्यों न हो, उसकी हत्या परिमार्जनीय है और इसलिये एरिनियों का उससे कोई वास्ता नहीं है। उनका काम तो रक्त-सम्बन्धियों की हत्याओं का बदला लेना है, और इनमें भी सबसे अधिक जघन्य हत्या, मातृ-सत्ता के नियमों के अनुसार, माता की हत्या है। अब ओरेस्टस की तरफ से एपोलो बहस में कूदता है। एथेना एरियोपेगाइटीज नामक एथेंस के जूरियों से मसले के बारे में अपना मत देने को कहती है। अभियुक्त को बरी कर देने के पक्ष में और सज़ा देने के पक्ष में बराबर-बराबर मत पड़ते हैं। तब अदालत की अध्यक्षा होने के नाते एथेना ओरेस्टस के पक्ष में अपना मत देती है और उसे बरी कर देती है। मातृ-सत्ता पर पितृ-सत्ता की विजय होती है। खुद एरिनी राक्षसियों के शब्दों में "छोटे वंश के देवता" एरिनी राक्षसियों पर विजय प्राप्त करते हैं और एरिनी देवियां अन्त में नया पद स्वीकार करके नयी व्यवस्था की सेवा करने के लिये कायल की जाती हैं।

'ओरेस्टीया' की यह नयी, लेकिन बिलकुल सही व्याख्या जिन पृष्ठों में दी गयी है, वे बाखोफेन की पूरी पुस्तक का सबसे अच्छा और सबसे सुन्दर अंश है। परन्तु साथ ही उनसे यह बात भी साफ़ हो जाती है कि खुद बाखोफेन को भी एरिनी देवियों, एपोलो और एथेना में कम से कम उतना ही विश्वास है जितना ईस्खिलस को अपने काल में था; लगता है कि बाखोफेन को वाकई यकीन है कि यूनान में वीर काल में इन्हीं देवताओं ने मातृ-सत्ता को हटाने और उसकी जगह पितृ-सत्ता को क़ायम करने का चमत्कारपूर्ण कार्य सम्पन्न किया था। ज़ाहिर है कि धर्म को विश्व-इतिहास का निर्णायक प्रेरक तत्त्व समझनेवाले इस दृष्टिकोण की परिणति अन्त में घोर रहस्यवाद में ही हो सकती है। इसलिये बाखोफेन का मोटा पोथा पढ़ जाना काफ़ी कठिन काम है और उसे पढ़ना सदैव लाभकर भी नहीं है। परन्तु इन सब बातों से एक अग्रगामी अनुसंधानकर्ता के रूप में बाखोफेन की महानता कम नहीं होती। कारण कि वह पहले आदमी थे जिन्होंने आदिम काल की उस अज्ञात अवस्था के विषय में, जिसमें स्वच्छन्द

यौन-व्यापार चलता था, मात्र शब्दजाल के बजाय यह साबित कर दिखाया कि प्राचीन चिरप्रतिष्ठित साहित्य मे इस अवस्था के बहुत सारे चिह्न बिखरे पडे हैं जिनसे पता चलता है कि यूनानी तथा एशियाई लोगों मे एकनिष्ठ विवाह की प्रथा जारी होने के पहले यह अवस्था वास्तव में पायी जाती थी और उसमें न केवल पुरुष एक से अधिक स्त्रियों के साथ सम्भोग करता था, बल्कि स्त्री भी एक से अधिक पुरुषों के साथ सम्भोग करती थी, और इससे प्रचलित प्रथा का कोई उल्लंघन नहीं होता था। उन्होंने साबित कर दिखाया कि यह प्रथा तो मिट गयी, किन्तु पर-पुरुषों के आगे स्त्रियों के निर्धारित अवधि तक आत्मसमर्पण के रूप मे अपना चिह्न छोड़ गयी, जिसके द्वारा स्त्रिया एकनिष्ठ विवाह करने का अधिकार खरीदने को मजबूर होती थी। उन्होंने साबित कर दिखाया कि उपरोक्त कारणो से शुरू मे केवल स्त्रियों के नाम से ही, एक माता के बाद दूसरी माता के नाम से ही, वश-परम्परा चल सकती थी, और निश्चित, या कम से कम मान्य पितृत्व के साथ एकनिष्ठ विवाह के प्रचलन के बहुत दिन बाद तक भी एकमात्र स्त्री-परम्परा की वैधता मानी जाती रही। उन्होंने साबित कर दिखाया कि शुरू में चूकि बच्चों की केवल माता के बारे मे ही निश्चय हो सकता था, इसलिये माता का, और आम तौर पर स्त्रियो का समाज में इतना ऊंचा स्थान था, जितना कि उनको बाद में कभी नही मिला। बाख़ोफ़ेन ने इन तमाम प्रस्थापनाओं को इतनी स्पष्टता के साथ नही रखा था, उनका रहस्यवाद उनके ऐसा करने मे बाधक हुआ। परन्तु उन्होने साबित कर दिखाया कि ये तमाम प्रस्थापनाएं सही हैं, और १८६१ में यह एक पूरी क्रान्ति कर डालने के बराबर था।

बाख़ोफ़ेन का मोटा पोथा जर्मन में, यानी उस जाति की भाषा मे लिखा गया था जो उस ज़माने में आधुनिक परिवार के प्रागैतिहासिक काल मे सबसे कम दिलचस्पी लेती थी। इसलिये वह अज्ञात ही बने रहे। इस क्षेत्र में उनके एकदम बाद के उत्तराधिकारी, जिन्होने बाख़ोफ़ेन का नाम भी नही सुना था, १८६५ मे सामने आये।

यह उत्तराधिकारी जी० एफ० मैक-लेनन थे। अपने पूर्ववर्ती के वह बिलकुल उल्टे थे। बाख़ोफ़ेन यदि प्रतिभाशाली रहस्यवादी थे, तो मैक-लेनन एकदम नीरस वकील। बाख़ोफ़ेन यदि कवि की उर्वर कल्पना से काम लेते थे, तो मैक-लेनन अदालत मे बहस करनेवाले वकील की तरह अपने तर्क

पेश करते थे। मैक-लेनन ने प्राचीन तथा आधुनिक काल की बहुत-से जांगल, बर्बर और यहां तक कि सभ्य जातियों में भी विवाह के एक ऐसे रूप का पता लगाया था जिसमे वर को, अकेले या अपने मित्रों के साथ, वधू का उसके सम्बन्धियो के यहा से जबर्दस्ती अपहरण करने का स्वांग रचना पड़ता था। *यह प्रथा अवश्य ही किसी पुरानी प्रथा का अवशेष है*, जिसमे एक क़बीले के पुरुष, बाहर की, दूसरे क़बीलो की, लड़कियों का वास्तव मे जबर्दस्ती अपहरण करके अपने लिये पत्नियां प्राप्त करते रहे होगे। तो फिर इस "अपहरण-विवाह" का आरम्भ कैसे हुआ होगा? जब तक पुरुषो को अपने ही क़बीले के अन्दर काफ़ी स्त्रिया मिल सकती थी, तब तक इस प्रथा को अपनाने का कोई कारण नही हो सकता था। लेकिन, इसी तरह से अक्सर हमे यह भी देखने को मिलता है कि अविकसित जातियों मे कुछ ऐसे समूह पाये जाते हैं (१८६५ में इन समूहो को और क़बीलो को एक ही चीज समझा जाता था), जिनके अन्दर विवाह करने की मनाही है, जिससे कि पुरुषो को अपने लिये पत्निया और स्त्रियो को अपने लिये पति इन समूहो के बाहर ढूढने पड़ते हैं। दूसरी ओर कुछ और जातियों मे यह प्रथा पायी जाती है कि एक समूह के पुरुषो को अपने समूह की स्त्रियो से ही विवाह करना पड़ता है। मैक-लेनन ने पहले प्रकार के समूहो को बहिर्विवाही और दूसरे प्रकार के समूहो को अन्तर्विवाही नाम दिये, और लगे हाथ बहिर्विवाही तथा अन्तर्विवाही "क़बीलो" को एक दूसरे का बिलकुल व्यतिरेकी बना दिया। और यद्यपि बहिर्विवाह प्रथा के बारे मे उनकी अपनी खोज से ही ठीक उनकी नाक के नीचे इस बात के अनेक सबूत आकर मौजूद हो जाते है कि, यदि सब या अधिकतर स्थानो में नही, तो कम से कम बहुत-से स्थानों में यह व्यतिरेक उनकी कल्पना मात्र है, तब भी वह उसे अपने पूरे सिद्धान्त का आधार बना डालते हैं। चुनाचे वह तय कर देते है कि बहिर्विवाही कबीले केवल दूसरे क़बीलों से ही पत्निया प्राप्त कर सकते हैं, और चूंकि जागल युग की विशेषता यह थी कि कबीलों मे सदा युद्ध चलता रहता था, इसलिये मैक-लेनन का विश्वास है कि केवल अपहरण करके ही पत्नियों को प्राप्त किया जा सकता था।

मैक-लेनन फिर प्रश्न करते हैं: बहिर्विवाह प्रथा का जन्म कैसे हुआ? रक्त-सम्बन्ध तथा अगम्यागमन की धारणाओं से इस प्रथा का कोई सम्बन्ध नही हो सकता, क्योंकि ये चीजें तो बहुत बाद की है। परन्तु लड़कियों

को पैदा होते ही मार डालने की प्रथा से जो बहुत-से जांगलियों में प्रचलित है उसका कोई सम्बन्ध अवश्य हो सकता है। इस प्रथा के फलस्वरूप हर क़बीले में पुरुषों की बहुतायत हो जाती थी और एक पर कई-कई पुरुषों का सम्मिलित अधिकार, यानी बहु-पति प्रथा इसका ज़रूरी तथा तात्कालिक परिणाम थी। फिर इसका परिणाम यह होता था कि बच्चे की माता का तो पता रहता था, पर कोई नही कह सकता था कि उसका पिता कौन है। इसलिये पुरुष-परम्परा को छोड़कर स्त्री-परम्परा से ही वंश चलता था। यह थी मातृ-सत्ता। क़बीले के अन्दर औरतो की कमी का, जो बहु-पति प्रथा से केवल कुछ कम होती थी, पर पूरी तरह दूर नही होती थी, एक और नतीजा ठीक यही होता था कि दूसरे क़बीलों की स्त्रियों का ज़बर्दस्ती अपहरण किया जाता था।

> "चूंकि बहिर्विवाह प्रथा तथा बहु-पति प्रथा का जन्म एक कारण से, यानी स्त्रियों और पुरुषों की संख्या का संतुलन ठीक न होने के कारण से हुआ, इसलिये हमें मजबूर होकर इस नतीजे पर पहुंचना पड़ता है कि **सभी बहिर्विवाही जातियों में शुरू में बहु-पति प्रथा का चलन था...** इसलिये हमें इस बात को निर्विवाद रूप से मानना चाहिये कि बहिर्विवाही जातियों में रक्त-सम्बन्ध की पहली व्यवस्था वह थी जो केवल माताओं के जरिये होनेवाले रक्त-सम्बन्ध को मानती थी।" (मैक-लेनन, 'प्राचीन इतिहास का अध्ययन', १८८६, 'आदिम विवाह', पृष्ठ १२४)।[6]

मैक-लेनन की तारीफ इसमें है, कि उन्होने उस चीज के बड़े महत्त्व और व्यापक प्रचलन की ओर ध्यान आकृष्ट किया जिसे उन्होने बहिर्विवाह प्रथा का नाम दिया था। परन्तु बहिर्विवाही समूहो के अस्तित्व का पता उन्होंने नही लगाया था; और यह कहना तो और बड़ी गलती होगी कि उन्होंने उनको समझा था। पहले के उन बहुत-से पर्यवेक्षकों के अलावा, जिनके अलग-अलग विवरणों ने मैक-लेनन के लिये सामग्री का काम दिया था, लेथम ने (१८५९ मे प्रकाशित 'वर्णनात्मक मानवजाति विज्ञान' में)[7] भारत के मगरो में यह प्रथा जिस रूप में थी उसका ठीक-ठीक और बिलकुल सही वर्णन किया था और कहा था कि यह प्रथा संसार के सभी भागों में मौजूद थी और उसका आम तौर पर चलन था। खुद मैक-लेनन ने उनकी पुस्तक के इस अंश को उद्धृत किया है। और हमारे मौर्गन भी, १८४७ में

ही, इरोक्वा लोगों के बारे में अपने पत्रों में (जोकि *American Review* मे प्रकाशित हुए थे), और १८५१ में 'इरोक्वा संघ'[8] नामक अपनी पुस्तक में बता चुके थे कि इस कबीले में भी यह प्रथा मौजूद थी, और उन्होंने इस प्रथा का बिलकुल सही वर्णन दिया था। इसके मुकाबले में, जैसा हम आगे चलकर देखेंगे, बाख़ोफ़ेन की रहस्यवादी कल्पनाओं ने मातृ-सत्ता के मामले मे जितनी उलझन पैदा की थी, उससे कही अधिक उलझन मैक-लेनन की वकीलों जैसी मनोवृत्ति ने इस प्रथा के विषय में पैदा कर दी। मैक-लेनन को इस बात का भी श्रेय है कि उन्होने इस बात को पहचाना कि माताओं के ज़रिये वंश का पता चलाने की प्रथा ही मौलिक थी हालांकि, जैसा कि बाद में उन्होंने भी खुद स्वीकार किया, बाख़ोफ़ेन उनसे पहले ही इस बात का पता लगा चुके थे। परन्तु इस मामले मे भी उनका मत बहुत अस्पष्ट है। वह बराबर "स्त्रियों के ज़रिये ही रक्त-सम्बन्ध" (kinship through famales only) की चर्चा करते रहते हैं और इस शब्दावली का, जो प्रारम्भिक अवस्था के लिये बिलकुल उपयुक्त थी, वह विकास की बाद की उन अवस्थाओं के लिये भी प्रयोग करते रहते है, जब वंश तथा विरासत का अधिकार तो अवश्य केवल स्त्री-परम्परा द्वारा निश्चित होता था, परन्तु रक्त-सम्बन्ध पुरुष-परम्परा द्वारा भी निश्चित होने और माना जाने लगा था। यह वकीलों जैसा एक संकुचित दृष्टिकोण है। वकील पहले अपने उपयोग के लिये एक बे-लचक क़ानूनी परिभाषा बनाता है, और फिर उसे बिना बदले उन परिस्थितियों पर भी लागू करता जाता है जो इस बीच में बदल गयी है, और जिन पर यह परिभाषा लागू नही हो सकती।

मैक-लेनन का सिद्धान्त ऊपर से देखने में विश्वास करने योग्य मालूम पड़ने पर भी लगता है कि खुद लेखक को भी वह एकदम पक्के आधार पर खड़ा नही जंचता। कम से कम, वह खुद इस बात को देखकर चकित है:

> "अपहरण (दिखावटी) की प्रथा सबसे अधिक स्पष्ट और प्रभावशाली रूप में उन्ही जातियों में देखी जाती है, जिनमें पुरुष के ज़रिये रक्त-सम्बन्ध निश्चित होता है (यानी जिनमें पुरुष-परम्परा कायम है।)" (पृ० १४०)

एक और जगह उन्होंने लिखा है :

"यह एक अजीब बात है कि जहा तक हमे ज्ञात है किसी भी समाज मे, जहा बहिर्विवाह के साथ-साथ रक्त-सम्बन्ध का प्राचीनतम रूप मौजूद है, शिशु-हत्या एक प्रथा के रूप मे नही पायी जाती।" (पृ० १४६)

ये दोनों तथ्य ऐसे है जो उनके सिद्धान्त का सीधे-सीधे खंडन करते हैं, और उनके मुकाबले मे वह यही कर सकते हैं कि नये, और पहले से भी ज्यादा उलझे हुए प्रमेय प्रस्तुत करे।

फिर भी, इंगलैंड में उनके सिद्धान्त का बडे जोरों से स्वागत हुआ और लोगों ने उसकी बड़ी तारीफ़ की। वहां आम तौर पर मैक-लेनन को परिवार के इतिहास का संस्थापक और इस क्षेत्र का सबसे अधिकारी विद्वान मान लिया गया। बहिर्विवाही और अन्तर्विवाही "क़बीलों" के बीच उन्होंने जो वैपरीत्य दिखाया था, वह उनके द्वारा स्वयं माने चन्द अपवादों और संशोधनों के बावजूद, प्रचलित मत के स्वीकृत आधार के रूप में क़ायम रहा। यदि इस क्षेत्र में स्वतन्त्रतापूर्वक खोज करना और परिणामस्वरूप, कोई निश्चित प्रगति करना असम्भव हो गया, तो इसका कारण यह था कि खोज करनेवालों की आंखों पर यह पर्दा पड़ा हुआ था। चूंकि इंगलैंड में, और उसकी देखादेखी अन्य देशो में भी, मैक-लेनन के महत्त्व को बहुत बढ़ा-चढ़ाकर बताना एक फ़ैशन-सा बन गया है, इसलिये हमारा कर्त्तव्य हो जाता है कि हम इसके मुकाबले में पाठकों का ध्यान इस बात की ओर आकर्षित करे कि बहिर्विवाही तथा अन्तर्विवाही "क़बीलो" में एक सर्वथा गलत विरोध दिखा करके मैक-लेनन ने जो नुकसान किया है, वह उनकी खोजों से हुए फायदे को दबा देता है।

इस बीच, बहुत-से ऐसे तथ्य सामने आ गये जो मैक-लेनन के बनाये हुए सुघड़ चौखटे में फिट नही बैठते थे। मैक-लेनन विवाह के केवल तीन रूपो से परिचित थे: बहु-पत्नी प्रथा, बहु-पति प्रथा और एकनिष्ठ विवाह। परन्तु जब एक बार लोगों का ध्यान इस प्रश्न की ओर आकर्षित हो गया तो इस बात के नित नये प्रमाण मिलने लगे कि पिछड़ी हुई जातियों में विवाह के ऐसे रूप भी पाये जाते थे, जिनमें पुरुषों का एक दल स्त्रियों के एक दल का सामूहिक रूप से स्वामी होता था; और लेब्बोक ने (१८७०

में प्रकाशित अपनी 'सभ्यता की उत्पत्ति' नामक पुस्तक में[9]) इस यूथ-विवाह (Communal marriage) को एक ऐतिहासिक तथ्य के रूप में ग्रहण किया।

इसके तुरन्त बाद ही, १८७१ में, मौर्गन नयी, और कई मानो में, निर्णयात्मक सामग्री लेकर सामने आये। उनको यह विश्वास हो गया था कि इरोक्वा लोगों मे रक्त-सम्बन्ध की जो अनोखी व्यवस्था मिलती है, वह सयुक्त राज्य अमरीका में रहनेवाले सभी आदिवासियों में समान रूप से पायी जाती है और इसलिये वह एक पूरे महाद्वीप में फैली हुई है, हालाकि वह वहा प्रचलित विवाह-प्रथा से उत्पन्न वंशक्रम की प्रत्यक्षत. प्रतिकूल है। तब उन्होंने अमरीका की संघ सरकार को इस बात के लिये राज़ी किया कि वह दूसरी जातियों में पायी जानेवाली रक्त-सम्बन्धों की व्यवस्थाओं के बारे मे सूचना संग्रह करे। इस काम के लिये उन्होने खुद प्रश्नावलिया और तालिकाएं तैयार की। उनके जो उत्तर प्राप्त हुए, उनमे मौर्गन को पता चला कि (१) अमरीकी इंडियनों में रक्त-सम्बन्धों की जो व्यवस्था मिलती है, वह एशिया के भी अनेक कबीलों मे पायी जाती है, और कुछ संशोधित रूपो मे अफ़्रीका और आस्ट्रेलिया मे भी पायी जाती है; (२) हवाई द्वीप समूह में, तथा अन्य आस्ट्रेलियाई द्वीपों मे पाये जानेवाले यूथ-विवाह के रूप मे, जोकि अब लुप्तप्राय है, इस व्यवस्था का पूरा स्पष्टीकरण हो जाता है, और (३) विवाह के इस रूप के साथ-साथ उन द्वीपों मे रक्त-सम्बन्धों की एक ऐसी व्यवस्था पायी जाती है जिसका कारण केवल यही हो सकता है कि इसके भी पहले वहां एक और प्रकार के यूथ-विवाह की प्रथा थी जो अब मिट चुकी है। मौर्गन ने जो सामग्री इकट्ठा की और उससे जो नतीजे निकाले, उनको उन्होने १८७१ में अपनी पुस्तक 'रक्त-सम्बन्धों और विवाह-सम्बन्धो की व्यवस्थाएं'[10] मे प्रकाशित किया और इस प्रकार उन्होंने बहस के क्षेत्र को पहले से कही अधिक विस्तृत कर दिया। रक्त-सम्बन्ध की व्यवस्थाओ को आधार मानकर उन्होंने उनके अनुरूप परिवार के रूपों का पुनर्निर्माण किया और इस तरह मानवजाति के प्रागैतिहासिक काल की खोज और अधिक दूरगामी गतानुदर्शन के लिये एक नया मार्ग खोल दिया। यदि यह प्रणाली सही मान ली जाये, तो मैक-लेनन द्वारा जोड़कर खड़ा किया गया सुघड़ सिद्धान्त हवा मे उड़ जाता है।

मैक-लेनन ने अपनी 'आदिम विवाह' के एक नये संस्करण मे ('प्राचीन इतिहास का अध्ययन', १८७५) अपने सिद्धान्त की रक्षा की। यद्यपि वह खुद केवल प्रमेयों के आधार पर परिवार का पूरा इतिहास बहुत ही बनावटी ढंग से गढ़ डालते है, तथापि लेब्बोक और मौर्गन से वह मांग करते हैं कि वे अपने प्रत्येक वक्तव्य के लिये न सिर्फ प्रमाण पेश करें, बल्कि ऐसे अकाट्य और निर्विवाद प्रमाण पेश करें जैसे प्रमाण ही स्काटलैंड की अदालतों मे स्वीकार्य हो सकते है। और यह मांग वह आदमी करता है जो जर्मनों में मामा-भाजे के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध होने से (टैसिटस, 'जेर्मेनिया', अध्याय २०), सीज़र[11] की इस रिपोर्ट से कि ब्रिटन लोगों में दस-दस बारह-बारह पुरुष सामूहिक पत्नियां रखते थे, और बर्बर लोगों में सामूहिक पत्नियों की प्रथा होने के बारे में प्राचीन लेखकों की अन्य तमाम रिपोर्टों से, बिना किसी हिचकिचाहट के, यह निष्कर्ष निकाल डालता है कि इन *तमाम लोगों में बहु-पति प्रथा का नियम था!* उनकी बातों को पढकर ऐसा लगता है जैसे कोई सरकारी वकील अपने पक्ष में बहस करते समय तो हर तरह की मनमानी करता है, पर बचाव पक्ष के वकील से माग करता है कि वह अपने हर शब्द को सिद्ध करने के लिये बिलकुल पक्के और क़ानूनी तौर से एकदम सही सबूत पेश करे।

यूथ-विवाह कल्पना की उड़ान भर है—मैक-लेनन कहते है, और इस तरह वह बाखोफेन की तुलना में भी बहुत पीछे चले जाते है। उनका कहना है कि मौर्गन ने जिन्हें रक्त-सम्बन्धो की व्यवस्थाएं समझा है, वे सामाजिक शिष्टाचार के नियमों से अधिक कुछ नहीं है और इसका प्रमाण यह है कि अमरीकी इंडियन अजनबियों, गोरे लोगों, को भी भाई या पिता कहकर पुकारते हैं। यह तो वैसी ही बात हुई जैसे कोई कहे कि चूंकि कैथोलिक पादरियों और भिक्षुणियों को लोग पिता और माता कहते हैं, और चूंकि मठवासी और मठवासिनियां, और यहां तक कि इंगलैंड में अलग-अलग धंधों के शिल्प-संघों के मेम्बर और फ़्रीमेसन भी सभा-सम्मेलनों में एक दूसरे को भाई-बहन कहते है, इसलिये पिता, माता, भाई, बहन शब्द सम्बोधन करने के अलग-अलग ढंगों के सूचक मात्र हैं और [illegible] का अर्थ नहीं है। संक्षेप में यह कि अपने पक्ष की पुष्टि में मैक-लेनन का तर्क बेहद कमज़ोर था।

परन्तु एक बात रह गयी थी जिस पर किसी ने मैक-लेनन को चुनौती नही दी थी। बहिर्विवाही और अन्तर्विवाही "कबीलो" मे उन्होने जो विरोध कायम किया था और जिसके आधार पर उनकी पूरी प्रणाली टिकी हुई थी, वह अभी तक जरा भी नही हिल पाया था। यही नही, बल्कि वह अब भी आम तौर पर परिवार के पूरे इतिहास की मुख्य धुरी माना जाता था। लोग यह स्वीकार करते थे कि इस विरोध का स्पष्टीकरण करने का मैक-लेनन का प्रयास अपर्याप्त था और यहा तक कि उन तथ्यों के भी खिलाफ जाता था जिन्हे खुद मैक-लेनन ने ही पेश किया था। परन्तु स्वय इस विरोध को, इस विचार को कि दो परस्पर अपवर्जी प्रकार के कबीलो का अस्तित्व था, जो एक दूसरे से पृथक तथा स्वतंत्र हैं, और जिनमे से एक प्रकार के कबीलों के पुरुष अपने कबीलो की ही स्त्रियो से विवाह करते है, मगर दूसरी प्रकार के क़बीलों मे इस तरह के विवाहों की सख़्त मनाही होती है—इसको लोग अकाट्य ब्रह्मवाक्य मान बैठे थे। मिसाल के लिये, पाठक जिरो-त्यूलों की पुस्तक 'परिवार की उत्पत्ति' (१८७४) और यहा तक कि लेब्बोक की रचना 'सभ्यता की उत्पत्ति' (चौथा संस्करण, १८८२)[12] को भी देख सकते है।

यही वह स्थान है जहा मौर्गन की मुख्य पुस्तक, 'प्राचीन समाज' (१८७७)[13], जिस पर मेरी यह किताब आधारित है, बहस मे दाखिल होती है। जिन बातो को १८७१ मे मौर्गन ने केवल अस्पष्ट कल्पना की थी, उनकी यहा पूरी समझ-बूझ के साथ विशद विवेचना की गयी है। अन्तर्विवाह और बहिर्विवाह मे कोई विरोध नही है; अभी तक कही भी कोई बहिर्विवाही "कबीला" नही मिलता है। परन्तु जिस समय यूथ-विवाह का चलन था—और संभवत: किसी न किसी समय यह प्रथा हर जगह प्रचलित थी—उस समय कबीले के अन्दर कई समूह, गोत्र, हुआ करते थे जिनमें से हरेक मे माता की ओर के रक्त-सम्बन्धी शामिल होते थे। उनके अन्दर विवाह करने की सख्त मनाही थी। इसलिये किसी भी गोत्र के पुरुष, क़बीले के अन्दर ही अपने लिये पत्नियां हासिल कर सकते थे, और आम तौर पर वे यही करते थे, पर उन्हें अपने गोत्र के बाहर ही पत्नियां हासिल करनी पड़ती थीं। इस प्रकार जहां कि गोत्र बहिर्विवाह के नियम का सख़्ती से पालन करता था, वहीं कबीला, जिसमें सभी गोत्र शामिल होते थे, उतनी ही सख़्ती से अन्तर्विवाह करने के नियम का पालन

करता था। इस प्रस्थापना के साथ मैक्लेनन ने जो महल बनावटी ढंग से बनाकर खडा किया था, उसकी एक ईंट भी बाकी न रह गयी।

परन्तु मौर्गन ने इससे ही सन्तोष नही किया। अमरीकी इंडियनों का गोत्र, उनके द्वारा अन्वेषण के इस क्षेत्र मे दूसरा निर्णायक कदम उठाने का साधन भी बन गया। उन्होंने पता लगाया कि मातृ-सत्ता के आधार पर सगठित गोत्र वह प्रारम्भिक रूप था, जिससे ही बाद का, प्राचीन काल के सभ्य लोगों में पाया जानेवाला, पितृ-सत्ता के आधार पर संगठित गोत्र विकसित हुआ। इस प्रकार यूनान तथा रोम के गोत्र, जो पहले के सभी इतिहासकारों के लिये पहेली बने हुए थे, अमरीकी इंडियनो में पाये जानेवाले गोत्र के प्रकाश मे समझ में आ गये, और इस प्रकार आदिम समाज के पूरे इतिहास के लिये एक नया आधार प्रस्तुत हुआ।

सभ्य जातियों के पितृ-सत्तात्मक गोत्र से पहले की अवस्था के रूप में आदिम मातृ-सत्तात्मक गोत्र के आविष्कार का आदिम समाज के इतिहास के लिये वही महत्त्व है जो जीवविज्ञान के लिये डार्विन के विकास के सिद्धान्त का, और राजनीतिक अर्थशास्त्र के लिये मार्क्स के अतिरिक्त मूल्य के सिद्धान्त का है। उसकी बदौलत मौर्गन पहली बार परिवार के इतिहास की एक ऐसी रूपरेखा तैयार करने में सफल हुए जिसमें कम से कम विकास की क्लासिकीय अवस्थाओ को सामान्यत: अस्थायी रूप से, जहां तक उस समय उपलब्ध सामग्री को देखते हुए यह सम्भव था, निश्चित कर दिया गया है। ज़ाहिर है, इससे आदिम समाज के इतिहास के अध्ययन में एक नये युग का श्रीगणेश हो जाता है। अब मातृ-सत्तात्मक गोत्र वह धुरी बन गया है जिसके चारो ओर यह पूरा विज्ञान घूमता है। इसका पता लगने के बाद से हमें इस बात का ज्ञान हो गया है कि हमे किस दिशा में खोज करनी चाहिये, किस चीज की खोज करनी चाहिये और खोज के परिणामो का वर्गीकरण किस प्रकार करना चाहिये। परिणामस्वरूप मौर्गन की पुस्तक के प्रकाशित होने के पहले की तुलना मे अब इस क्षेत्र मे बहुत तेज प्रगति होने लगी है।

मौर्गन ने जिन बातों का पता लगाया है, उन्हे अब प्रागैतिहासिक काल का अध्ययन करनेवाले अंग्रेज विद्वान भी मानने लगे हैं, या यों कहिये कि उन्होंने उन्हें अपना लिया है। परन्तु उनमे से शायद ही कोई खुले आम यह माने कि हमारे दृष्टिकोण में जो क्रान्ति हो गयी है, उसका श्रेय मौर्गन

को प्राप्त है। इंगलैंड मे उनकी पुस्तक के बारे में यथासम्भव चुप्पी ही साधी गयी है, और खुद मौर्गन को बड़े दया भाव के साथ उनकी पुरानी कृतियों की प्रशंसा करके निबटा दिया जाता है। उनकी व्याख्या की तफसीलों को बडे चाव से लेकर उनकी समीक्षा की जाती है, पर उनकी जो सचमुच महती खोजें हैं उनके बारे में हठपूर्वक मौन धारण किया जाता है जो कभी टूटता नहीं है। 'प्राचीन समाज' का पहला संस्करण अब अप्राप्य है। अमरीका मे इस तरह की किताबों के लिये लाभप्रद बाजार ही नही है। इंगलैंड मे, मालूम पडता है कि मौर्गन की किताब को बाकायदा दबाया गया है। और इस युगान्तरकारी रचना का एकमात्र संस्करण जो किताबों के बाजार मे अब भी प्राप्य है, वह जर्मन अनुवाद में है।

इस चुप्पी का आखिर क्या कारण है जिसे एक षड्यंत्र न समझना बहुत कठिन है—खास तौर पर इसलिये कि प्रागैतिहासिक काल के हमारे जाने-माने अध्ययनकर्त्ताओं की रचनाओं में केवल शिष्टाचार के नाते अन्य लेखकों के अनगिनत उद्धरण देने के आदी हैं और दूसरे तरीकों से भी सहयोगियो के प्रति भाईचारा जताते रहते हैं। क्या उनकी चुप्पी का कारण सम्भवतः यह है कि मौर्गन अमरीकी है, और आदिम इतिहास के अंग्रेज अध्ययनकर्त्ताओं के लिये यह कष्टकर है कि उन्हे, बावजूद इसके कि सामग्री इकट्ठा करने मे उन्होंने इतना प्रशंसनीय श्रम किया है, इस सामग्री का वर्गीकरण करने तथा उसे व्यवस्थित रूप देने के वास्ते आवश्यक आम दृष्टिकोण के लिये बाखोफेन और मौर्गन जैसे दो विदेशी विद्वानों का सहारा लेना पड़े? जर्मन तो फिर भी उनके गले से उतर सकता है, पर अमरीकी! किसी अमरीकी का सामना होने पर तो हर अंग्रेज देशभक्ति की भावना मे बह जाता है। जब मै संयुक्त राज्य अमरीका में था, तो मुझे इसके कई बड़े मजेदार उदाहरण देखने को मिले थे। इसके साथ-साथ एक बात और है। वह यह कि मैक-लेनन को एक तरह से सरकारी तौर पर इंगलैंड मे इतिहास की प्रागैतिहासिक शाखा का संस्थापक और नेता मान लिया गया था, और मैक-लेनन ने शिशु-हत्या से लेकर, और बहु-पति प्रथा तथा अपहरण-विवाह से होते हुए, मातृ-सत्तात्मक परिवार तक, परिवार के इतिहास का जो सिद्धान्त बनावटी ढंग से खड़ा किया था, इस क्षेत्र के विद्वानों के बीच उसकी अत्यन्त श्रद्धापूर्ण चर्चा एक तरह का रिवाज बन गयी थी। एक दूसरे से बिलकुल अलग और भिन्न, दो प्रकार के "क़बीलों", यानी

बहिर्विवाही और अन्तर्विवाही "क़बीलों" के अस्तित्व के बारे में जरा भी सन्देह प्रगट करना घोर पाप समझा जाता था। इसलिये जब मौर्गन ने इन समस्त पवित्र जड़सूत्रों को एक चोट से हवा मे उड़ा दिया, तो उन्हें एक प्रकार से कुफ़ करने का दोषी समझा जाने लगा। और फिर मौर्गन ने इस समस्या को इस तरह सुलझाया कि अपनी बात पेश करते ही पूरी चीज़ फ़ौरन स्पष्ट हो गयी। नतीजा यह हुआ कि मैक-लेनन के वे पुजारी जो अभी तक अंधो की तरह बहिर्विवाह और अन्तर्विवाह के बीच भटक रहे थे, अब अपना सिर पीटने और यह कहने को विवश होने लगे कि हम भी कैसे मूर्ख हैं कि इस जरा सी बात का इतने दिनों तक खुद पता न लगा सके!

मौर्गन ने इतना ही अपराध नही किया कि अधिकृत शाखा के विद्वानों को अपने प्रति पूर्ण उपेक्षा बरतने से रोक दिया, उन्होंने सभ्यता की, माल उत्पादन करनेवाले समाज की, जो हमारे वर्तमान काल के समाज का बुनियादी रूप है, एक ऐसे अन्दाज मे आलोचना करके, जिससे फ़ूरिये की याद ताजा हो जाती थी, और इतना ही नही, बल्कि समाज के भावी रूपान्तरण की भी कुछ ऐसे शब्दों मे चर्चा करके जिनका प्रयोग कार्ल मार्क्स कर सकते थे, घड़ा मुह तक भर लिया। और इसलिये उन्होंने जैसा किया वैसा भुगता! – मैक-लेनन ने रोष के साथ घोषणा की कि मौर्गन "ऐतिहासिक पद्धति से गहरा वैमनस्य रखते हैं" और प्रोफ़ेसर जिरो-त्यूलो ने १८८४ मे भी जेनेवा में मैक-लेनन की इस राय का समर्थन किया। क्या यही वह प्रोफ़ेसर जिरो-त्यूलो नही थे जो १८७४ में ही ('परिवार की उत्पत्ति') मैक-लेनन के बहिर्विवाह की भूलभुलैया मे भटक रहे थे, जिसमे से मौर्गन ने ही उनको निकाला?

आदिम समाज के इतिहास ने मौर्गन की खोजों के परिणामस्वरूप और किन बातों में प्रगति की, यह बताना मेरे लिये यहा आवश्यक नही है। इस पुस्तक के दौरान यथास्थान उसकी चर्चा पाठक को मिलेगी। मौर्गन की मुख्य पुस्तक का प्रकाशन हुए अब चौदह वर्ष हो रहे हैं। इस दौरान आदिम मानव समाज के इतिहास के सम्बन्ध में हमारे पास और बहुत-सी सामग्री इकट्ठा हो गयी है। मानव विज्ञानियों, यात्रियों तथा पेशेवर पुरातत्त्वविदो के अलावा अब तुलनात्मक विधिशास्त्र के विद्यार्थियों ने भी इस प्रवेश किया है और बहुत-सी नयी सामग्री और नये दृष्टिकोण हमे

इसके परिणामस्वरूप विशेष बातों से ताल्लुक रखनेवाले मौर्गन के कुछ प्रमेय कमजोर पड गये है या अरक्षणीय हो गये हैं। परन्तु इकट्ठी हुई नयी सामग्री उनकी मुख्य धारणाओं की जगह दूसरी धारणाएं स्थापित करने में सफल नही हुई है। आदिम समाज के इतिहास को मौर्गन ने जो व्यवस्था प्रदान की थी, वह अपने मुख्य रूप मे आज भी सत्य है। हम यहा तक कह सकते है कि इस महती प्रगति के जनक के रूप मे उनका नाम छिपाने की जितनी ही कोशिश की जा रही है, इस व्यवस्था को लोग उतना ही अधिक मानते जा रहे हैं।*

फ्रेडरिक एंगेल्स

लन्दन, १६ जून, १८६१

«*Die Neue Zeit*» पत्रिका, Bd. 2, No 41, 1890–1891 तथा Friedrich Engels *Der Ursprung der Familie, des Privateigenthums und des Staats* पुस्तक, Stuttgart. 1891, मे प्रकाशित।

पत्रिका के मूलमाठ से मिलाकर पुस्तक के मूलपाठ के अनुसार मुद्रित।
मूल जर्मन।

* सितम्बर, १८८८ मे न्यूयार्क से वापसी के समय मेरी मुलाक़ात अमरीकी कांग्रेस के एक भूतपूर्व सदस्य से हुई जो रोचेस्टर से चुने गये थे और जो ल्यूईस मौर्गन को जानते थे। दुर्भाग्यवश वह मुझे मौर्गन के बारे मे अधिक नही बता सके। उन्होंने बताया कि मौर्गन साधारण नागरिक की तरह रोचेस्टर मे रहा करते थे, और अपने अध्ययन में व्यस्त रहते थे। उनके भाई सेना मे कर्नल थे और वाशिंगटन में युद्ध-विभाग में किसी पद पर थे। अपने इस भाई की सहायता से मौर्गन सरकार को इस बात के लिये प्रवृत्त करने में सफल हुए कि वह उनकी खोजों मे दिलचस्पी ले और उनकी रचनाओं को सरकारी ख़र्च पर छापे। कांग्रेस के इस भूतपूर्व सदस्य का कहना था कि जब तक वह कांग्रेस में रहे, उन्होंने ख़ुद भी मौर्गन की सहायता की थी। (एंगेल्स का नोट)

परिवार, निजी सम्पत्ति और राज्य की उत्पत्ति

ल्यूईस मौर्गन की खोज के सम्बन्ध में

१

संस्कृति के विकास की प्रागैतिहासिक अवस्थाएं

मौर्गन विशेष ज्ञान रखनेवाले ऐसे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने मनुष्य के प्राक् इतिहास को एक निश्चित क्रम प्रदान करने की चेष्टा की थी। आगे मिलनेवाली महत्त्वपूर्ण सामग्री के कारण यदि कुछ परिवर्तन करना आवश्यक न हुआ, तो आशा करनी चाहिये कि मौर्गन का वर्गीकरण कायम रहेगा।

जांगल युग, बर्बर युग, और सभ्यता का युग, इन तीन मुख्य युगो मे से स्वभावतः मौर्गन का सम्बन्ध केवल पहले दो युगों से और उनसे तीसरे मे सक्रमण से है। इन दो युगों में से प्रत्येक को वह जीवन-निर्वाह के साधनों के उत्पादन मे हुई प्रगति के आधार पर निम्न, मध्यम और उन्नत अवस्थाओ में बाटते हैं। कारण कि मौर्गन का कहना है कि

> "इस दिशा में मनुष्यों की दक्षता पर ही यह पूरा सवाल निर्भर करता था कि पृथ्वी पर मनुष्य की प्रभुता कायम हो पायेगी, या नही। जीवों मे केवल मानवजाति ही ऐसी है, जिसके बारे मे कहा जा सकता है कि उसने खाद्य के उत्पादन पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित कर लिया है। मानव प्रगति के महान युग, कमोबेश प्रत्यक्ष रूप मे, इसी बात से निश्चित होते है कि जीवन-निर्वाह के साधनो का कितना विकास हुआ है।"[14]

परिवार का विकास इसके साथ-साथ चलता है, पर उससे हमे ऐसे निश्चित मापदण्ड नही प्राप्त होते जिनके द्वारा हम इस विकास-क्रम (विभिन्न कालों में बांट सके।

१. जांगल युग

१. **निम्न अवस्था।** मानवजाति का शैशवकाल। अभी मनुष्य अपने मूल निवास-स्थान मे, यानी उष्ण कटिबंध अथवा उपोष्ण कटिबंध के जंगलो मे रहता था, और कम से कम, आंशिक रूप मे, पेड़ों के ऊपर निवास करता था। केवल यही कारण है कि बड़े-बड़े हिंसक पशुओं का सामना करते हुए वह जीवित रह सका। कन्द, मूल और फल उसके भोजन थे। इस काल की सबसे बडी सफलता यह थी कि मनुष्य बोलना सीख गया। ऐतिहासिक काल मे हमें जिन जनगण का परिचय मिलता है, उनमें से कोई भी इस आदिम अवस्था मे नही था। यद्यपि यह काल हजारो वर्षों तक चला होगा, तथापि उसके अस्तित्व का कोई प्रत्यक्ष सबूत हमारे पास नही है। किन्तु यदि एक बार हम यह मान लेते है कि मनुष्य का उद्भव पशु-लोक से हुआ है तो इस संक्रमणकालीन अवस्था को मानना अनिवार्य हो जाता है।

२. **मध्यम अवस्था।** यह उस समय से आरम्भ होती है जब मनुष्य मछली का (जिसमे हम केकडे, घोघे और दूसरे जल-जन्तुओं को भी शामिल करते है) अपने भोजन के रूप में उपयोग करने लगा था और आग को इस्तेमाल करना सीख गया था। ये दोनो बाते एक दूसरे की पूरक है, क्योंकि मछली का आहार केवल आग के इस्तेमाल से ही पूरी तरह उपलब्ध हो सकता है। परन्तु, इस नये आहार ने मनुष्य को जलवायु और स्थान के बंधनो से मुक्त कर दिया। नदियो और समुद्रो के तटो के साथ-साथ चलता हुआ, मनुष्य अपनी जांगल अवस्था मे भी पृथ्वी के धरातल के अधिकांश भाग में फैल गया। पुरा पाषाण युग—तथाकथित पालियोलिथिक युग—के पत्थर के बने कुघड़, खुरदरे औजार, जो पूरी तरह या अधिकतर इसी काल से सम्बन्ध रखते है, सभी महाद्वीपों मे बिखरे हुए पाये जाते हैं। उनसे इस काल मे मनुष्यों के संसार के विभिन्न भागो मे फैल जाने का सबूत मिलता है। नये प्रदेशो मे बस जाने और खोज की निरन्तर सक्रिय प्रेरणा के फलस्वरूप और साथ ही रगड़ से आग पैदा करने की कला में निपुण होने के कारण, मनुष्य को अनेक खाद्य-पदार्थ सुलभ हो गये, जैसे मण्डमय मूल और कन्द जो या तो गर्म राख मे या जमीन मे खुदी आग की भट्ठियों मे पका लिये जाते थे। पहले अस्त्रों—गदा और भाले—के आविष्कार

के बाद कभी-कभी शिकार किये गये पशुग्रों का मांस भी भोजन में शामिल हो जाता था। पूर्णतः शिकारी जातियां, जिनका वर्णन प्रायः पुस्तकों में मिलता है–यानी वे जातियां जो केवल शिकार के सहारे जीती थी, वास्तव मे कभी नहीं थीं। यह सम्भव नही था क्योंकि शिकार से भोजन पाना बहुत ही ग्रनिश्चित होता है। खाने की चीज़ो का मिलना सदा बड़ा ग्रनिश्चित रहता था, इसलिये, मालूम होता है, इस काल में नरमास-भक्षण भी ग्रारम्भ हो गया ग्रौर बाद मे बहुत समय तक चलता रहा। ग्रास्ट्रेलिया के ग्रादिवासी ग्रौर पोलिनेशिया के बहुत-से लोग ग्राज भी जागल युग की इस मध्यम ग्रवस्था मे रह रहे हैं।

३. उन्नत ग्रवस्था। यह ग्रवस्था धनुप-वाण के ग्राविष्कार से ग्रारम्भ होती है, जिनके कारण जंगली पशुग्रों का शिकार एक सामान्य चर्या बन गया ग्रौर उनका मांस भोजन का नियमित ग्रंग हो गया। धनुप, डोरी ग्रौर बाण से बना यह ग्रस्त्र ग्रत्यंत संश्लिष्ट प्रकार का है, जिसके ग्राविष्कार के लिये लम्बा संचित ग्रनुभव ग्रौर ग्रधिक तीक्ष्ण बुद्धि तथा ग्रधिक मानसिक क्षमता पूर्वापेक्षित थी, ग्रौर इसलिये धनप-बाण के साथ-साथ इस काल का मनुष्य ग्रन्य ग्रनेक ग्राविष्कारों से भी परिचित रहा होगा। यदि हम इन मनुष्यों की तुलना उनसे करे जो धनुप-वाण से तो परिचित थे, पर मिट्टी के वर्तन-भांडे बनाने की कला ग्रभी नही जान पाये थे (मिट्टी के बर्तन बनाने की कला से ही मौर्गन बर्बर युग का प्रारम्भ मानते हैं), तो हम पाते है कि इस प्रारम्भिक ग्रवस्था में भी मनष्य ने गांवो में बसना शुरू कर दिया था, ग्रौर जीवन-निर्वाह के साधनों के उत्पादन पर किसी क़दर क़ाबू पा लिया था। वह लकड़ी के बर्तन-भांड़े बनाने लगा था, पेड़ों की कोमल छाल से निकले रेशे को हाथ से (बिना करघे के) बुनना सीख गया था, छाल की ग्रौर बेंत की टोकरियां बनाने लगा था, ग्रौर पत्थर के पालिशदार, चिकने ग्रौज़ार (नव पापाण युग के ग्रौज़ार) तैयार करने लगा था। ग्रधिकांशतः, ग्राग ग्रौर पत्थर की कुल्हाड़ी की बदौलत पेड़ का तना खोखला कर बनायी गयी नाव, ग्रौर कहीं-कहीं मकान बनाने की लकड़ी ग्रौर तख्ते भी सुलभ हो गये थे। उदाहरण के लिये उत्तर-पश्चिमी ग्रमरीका के इंडियनों में, जो धनुप-वाण से तो परिचित हैं, पर मिट्टी के बर्तन बनाने की कला नही जानते, ये

सारी उपलब्धियां पाई जाती है। जिस प्रकार लोहे की तलवार बर्बर युग के लिये और आग्नेयास्त्र सभ्यता के युग के लिये निर्णायक अस्त्र सिद्ध हुए, उसी प्रकार जागल युग के लिये धनुष-बाण निर्णायक अस्त्र सिद्ध हुआ।

२. बर्बर युग

१. निम्न अवस्था। यह अवस्था मिट्टी के बर्तनों के प्रचलन से आरम्भ होती है। मिट्टी के बर्तन बनाने की कला की शुरूआत अनेक जगहों पर प्रत्यक्षतः इस तरह हुई, और शायद सब जगह इसी तरह हुई होगी, कि टोकरियों तथा लकड़ी के बर्तनों को आग से बचाने के लिये उन पर मिट्टी का लेप चढ़ा दिया जाता था। तब जल्द ही यह पता चल गया कि अन्दर का बर्तन निकाल लेने पर भी मिट्टी के साचे से वही काम चल सकता है।

हम मान सकते हैं कि यहा तक, एक निश्चित काल तक मानव-विकास का क्रम सभी लोगो मे एक-सा पाया जाता है और प्रदेश चाहे जो रहा हो, उससे इसमें कोई अन्तर नही पडता। परन्तु बर्बर युग मे प्रवेश करने के साथ हम एक ऐसी अवस्था में पहुच जाते हैं जिसमे दोनों बड़े महाद्वीपो की प्राकृतिक देनो का अन्तर अपना प्रभाव दिखाने लगता है। बर्बर युग की विशेषता है पशु-पालन और प्रजनन तथा कृषि। अब पूर्वी महाद्वीप में, जिसे पुरानी दुनिया भी कहा जाता था, पालने के योग्य लगभग सभी पशु, और एक को छोड़कर उगाने के योग्य बाकी सभी अन्न उपलब्ध थे, जबकि पश्चिमी महाद्वीप, यानी अमरीका में, और वह भी केवल दक्षिण के एक हिस्से मे पालने के लायक केवल एक पशु था, जिसे लामा कहते है, और उगाने के योग्य केवल एक अन्न, यानी मक्का था, पर यह अन्नो मे सर्वश्रेष्ठ था। इन भिन्न प्राकृतिक परिस्थितियों का यह प्रभाव पड़ा कि इस बात मे प्रत्येक गोलार्ध की आबादी अपने अलग-अलग रास्ते चली, और दो गोलार्धों मे मानव-विकास की विभिन्न अवस्थाओं की सीमाओं की विशेषताएं भी अलग-अलग हो गयीं।

२. मध्यम अवस्था। यह अवस्था पूर्व में पशु-पालन से शुरू होती है, और पश्चिम मे खाने लायक पौधों की सिंचाई के जरिये खेती और मकान बनाने के लिये धूप मे सुखायी गयी कच्ची ईंटों तथा पत्थर के प्रयोग से शुरू होती है।

पहले हम पश्चिम को लेंगे, क्योंकि यूरोपीय विजय तक, अमरीकी लोग कहीं भी इस अवस्था से आगे नहीं बढ सके थे।

इंडियनो का जिस समय पता चला, उस समय ये बर्बर युग की निम्न अवस्था मे थे (मिसीसिपी नदी के पूर्व मे रहनेवाले सभी आदिवासी इसी अवस्था मे थे), और कुछ हद तक मक्का की, और शायद कद्दू, खरबूजों तथा अन्य तरकारियो आदि की खेती करने लगे थे। इनसे ही उन्हें अपने आहार का मुख्य भाग प्राप्त होता था। ये लोग बाड़ो से घिरे गांवों में लकडी के मकानो मे रहते थे। उत्तर-पश्चिम के क़बीले, विशेषकर कोलम्बिया नदी के प्रदेश में रहनेवाले क़बीले, अभी जांगल युग की उन्नत अवस्था मे ही पड़े हुए थे। वे न तो मिट्टी के बर्तन बनाना जानते थे, और न किसी तरह के पौधे उगाना। दूसरी ओर, न्यू-मैक्सिको के तथाकथित पुएब्लो इंडियन लोग[15], मैक्सिको के निवासी, मध्य अमरीका के और पेरू के निवासी यूरोपीय विजय के समय बर्बर युग की मध्यम अवस्था मे थे। ये लोग कच्ची ईंटों या पत्थरों के बने किले जैसे मकानों मे रहते थे और बगीचे बनाकर और उन्हे खुद सीचकर मक्का की, और स्थान तथा जलवायु के अनुसार, खाने योग्य अन्य पौधों की खेती करते थे, जिनसे ही मुख्यत: उन्हे भोजन मिलता था; उन्होंने कुछ पशुओं तक को पालतू बना लिया था, जैसे मैक्सिको के लोग टर्की और दूसरे पक्षियो को पालते थे, तथा पेरू के लोग लामा को पालते थे। इसके अलावा, ये लोग धातुओं से काम लेना भी जानते थे, लेकिन लोहे से परिचित नहीं हुए थे और इस कारण अभी पत्थर के बने अस्त्रों और औजारों को नहीं छोड़ पाये थे। स्पेनियों ने इन लोगों के देश को जीतकर उनका सारा स्वतन्त्र विकास बीच मे ही रोक दिया।

पूर्व में बर्बर युग की मध्यम अवस्था उस समय आरम्भ हुई जब लोग दूध और मास देनेवाले पशुओं का पालन करने लगे। पर मालूम होता है कि पौधों की खेती करने का ज्ञान लोगों को इस काल में बहुत समय तक नहीं हुआ। ऐसा लगता है कि चौपायो को पालने और उनकी नस्ल बढ़ाने और पशुओं के बड़े-बड़े झुण्ड बनाने के कारण ही आर्य और सामी लोग बर्बर लोगों से भिन्न हो गये थे। यूरोप और एशिया के आर्य आज भी पशुओं के समान नामों का उपयोग करते है, पर कृषि योग्य पौधों के नाम आपस में प्राय: नहीं मिलते।

उपयुक्त स्थानो में पशुओं के रेवड़ या झुण्ड बनने से गड़रियों का जीवन शुरू हो गया। सामी लोगों ने दजला और फ़रात नदियों के घास के मैदानो मे यह जीवन आरम्भ किया, आर्यों ने भारत के मैदानों मे, ओक्सस और जक्सारटिस नदियों के और दोन तथा द्नेपर[16] नदियों के मैदानो मे इस जीवन की शुरुआत की। जानवरो को पालतू बनाने का काम पहले पहल घास के इन मैदानो की सीमाओं पर ही शुरू हुआ होगा। इसलिये बाद मे आनेवाली पीढ़ियो को लगा कि पशुचारी जातियो का उद्भव इन्ही इलाको मे हुआ होगा, जबकि वास्तव मे ये इलाके ऐसे थे कि वहा मानवजाति के शैशवकाल मे उसका पालन-पोषण होना तो दूर की बात है, ये इन पीढ़ियों के जागल पूर्वजो के और यहां तक कि बर्बर युग की निम्न अवस्था के लोगों के भी रहने लायक़ नही थे। दूसरी ओर, यह बात भी थी कि बर्बर युग की मध्यम अवस्था के लोग एक बार पशुचारी जीवन मे प्रवेश करने के बाद यह कभी नही सोच सकते थे कि पानी से हरे-भरे घास के इन मैदानो को अपनी इच्छा से छोड़कर वे फिर उन जंगली इलाको मे चले जायें जहा उनके पूर्वज रहा करते थे। यहां तक कि जब आर्यों और सामी लोगों को और अधिक उत्तर तथा पश्चिम की ओर खदेड दिया गया, तो पश्चिमी एशिया तथा यूरोप के जंगली इलाकों मे बसना उनके लिये असम्भव हो गया। वहां वे केवल उसी समय बस पाये जब अनाज की खेती की बदौलत कम अनुकूल मिट्टी के बावजूद, उनके लिये अपने पशुओं को खिलाना, और, विशेषकर, जाड़ों में भी इन इलाको मे रहना सम्भव हो गया। बहुत सम्भव है कि शुरू मे अनाज की खेती पशुओं को खिलाने के लिये चारे की आवश्यकता के कारण ही आरम्भ हुई हो, और बाद मे चलकर ही अनाज ने मनुष्यों के भोजन के रूप मे महत्त्व प्राप्त किया हो।

आर्यों तथा सामी लोगों के पास भोजन के लिये मास तथा दूध की प्रचुरता थी, और विशेषकर बच्चों के विकास पर इस भोजन का बहुत अच्छा प्रभाव पडता था। शायद यही कारण है कि इन दो नस्लो का विकास औरो मे बेहतर हुआ। बल्कि सच तो यह है कि यदि हम न्यू-मैक्सिको मे रहनेवाले पुएब्लो इंडियनो को देखें जो प्रायः पूर्णतः शाकाहारी हो गये है, तो हम पाते हैं कि बर्बर युग की निम्न अवस्था में, मास और मछली अधिक खानेवाले इंडियनो की तुलना मे उनका मस्तिष्क छोटा होता है।

बहरहाल, इस अवस्था में नरभक्षण धीरे-धीरे लुप्त हो जाता है, और अगर कहीं-कहीं बाकी भी रहता है तो केवल एक धार्मिक रीति के रूप में, या फिर जादू-टोने के रूप में, जो इस अवस्था में करीब-क़रीब एक ही चीज़ है।

३. **उन्नत अवस्था।** यह अवस्था लौह खनिज को गलाने से शुरू होती है और अक्षर लिखने की कला का आविष्कार होने तथा साहित्यिक लेखन में उसका प्रयोग होने लगने पर सभ्यता में अंतरित हो जाती है। इस अवस्था में, जिसे, जैसा कि हम ऊपर बता चुके हैं, स्वतन्त्र रूप से केवल पूर्वी गोलार्ध के लोग ही पार कर पाये, उत्पादन की जितनी उन्नति हुई, उतनी पहले की तमाम अवस्थाओं में कुल मिलाकर भी नहीं हुई थी। वीर काल के यूनानी, रोम की स्थापना से कुछ समय पहले के इतालवी क़बीले, टेसिटस के ज़माने के जर्मन, और वाइकिंगों के काल के नोर्मन लोग इसी अवस्था में रहते थे।

सबसे बड़ी बात यह है कि इस अवस्था में हम पहली बार पशुओं द्वारा खींचे जानेवाले लोहे के हल का इस्तेमाल पाते हैं। इसकी बदौलत बड़े पैमाने पर खेती—**खेतों की जुताई**—और उस समय की परिस्थितियों में जीवन-निर्वाह के साधनों में एक तरह से असीम वृद्धि सम्भव हो गयी। इसके साथ-साथ हम लोगों को जंगलों को काट-काटकर उन्हें खेती की तथा चरागाह की जमीनों में बदलते हुए देखते हैं, और यह काम भी लोहे की कुल्हाड़ी और बेलचे की मदद के बिना बड़े पैमाने पर नहीं हो सकता था। परन्तु, इस सब के साथ-साथ जनसंख्या तेजी से बढ़ी और छोटे-छोटे इलाकों में घनी बस्तियां आबाद हो गयीं। जब तक हल से जुताई नहीं शुरू हुई थी, तब तक केवल बहुत ही असाधारण परिस्थितियों में पांच लाख आदमी एक केन्द्रीय नेतृत्व के नीचे कभी आये होंगे। बल्कि शायद ऐसा कभी नहीं हुआ होगा।

होमर की कविताओं में, और विशेषकर 'इलियाड' में, हम बर्बर युग की उन्नत अवस्था को अपने विकास के चरम शिखर पर पाते हैं। लोहे के बने हुए उन्नत औज़ार, धौंकनी, हथचक्की, कुम्हार का चाक, तेल और शराब बनाना, धातुओं के काम का एक कला के रूप में विकास, गाड़ियां और युद्ध के रथ, तख़्तों और धरनों से जहाज़ बनाना, स्थापत्य का एक कला के रूप में प्रारम्भिक विकास, मीनारों और प्राचीरों से युक्त

और चहारदीवारी से घिरे नगर, होमरीय महाकाव्य और समस्त पुराण–इन्हीं वस्तुओं की विरासत को लेकर यूनानियों ने बर्बर युग से सभ्यता के युग मे प्रवेश किया था। यदि इसकी तुलना सीज़र के और यहां तक कि टैसिटस के उन जर्मनो से संबंधित वर्णनों से करें जो संस्कृति की उस अवस्था के द्वार पर खड़े थे जिसके शिखर पर पहुंचकर होमर के काल के यूनानी अगली अवस्था में प्रवेश करने की तैयारी कर रहे थे, तो हमें पता चलेगा कि बर्बर युग की उन्नत अवस्था में उत्पादन का कितना अधिक विकास हुआ था।

मौर्गन का अनुसरण करते हुए, जांगल युग तथा बर्बर युग से होकर सभ्यता के आरम्भ तक मानवजाति के विकास का जो चित्र मैंने ऊपर खीचा है, वह अनेक नयी विशेषताओं से भरा पूरा है। इससे भी बड़ी बात यह है कि ये विशेषताएं निर्विवाद रूप से सत्य हैं, क्योंकि वे सीधे उत्पादन से ली गयी हैं। फिर भी यह चित्र उस चित्र की अपेक्षा धुंधला और अपर्याप्त लगेगा, जो हमारी यात्रा के अन्त में अनावृत होगा। उसी समय हमारे लिये बर्बर युग से सभ्यता के युग मे संक्रमण का पूर्ण चित्र देना और यह दिखलाना संभव होगा कि इन दो युगों के बीच कितना मार्के का अन्तर है। फिलहाल, मौर्गन के युग-विभाजन को हम सामान्यीकृत रूप मे इस तरह पेश कर सकते हैं: जांगल युग–वह काल जिसमे तत्काल उपयोज्य प्राकृतिक पदार्थों के हस्तगतकरण की प्रधानता थी। मनुष्य मुख्यतया वे औज़ार ही तैयार करता था, जिनसे प्राकृतिक उपज को हस्तगत करने में मदद मिलती थी। बर्बर युग–वह काल जिसमे पशु-पालन तथा खेती करने का ज्ञान प्राप्त हुआ, और जिसमे मानव क्रियाशीलता के द्वारा प्रकृति की उत्पादन-शक्ति को बढाने के तरीक़े सीखे गये। सभ्यता का युग–वह काल जिसमे प्राकृतिक उपज को और भी बदलने का, सही माने में उद्योग का और कला का ज्ञान प्राप्त किया गया।

२
परिवार

मौर्गन ने, जिन्होंने अपने जीवन का अधिकतर भाग इरोक्वा लोगो के बीच बिताया था – ये लोग अभी तक न्यूयार्क राज्य मे रहते हैं – और जिन्हें उनके एक कबीले (सेनेका कबीले) ने अंगीकार कर लिया था, इन लोगों में रक्त-सम्बद्धता की एक ऐसी व्यवस्था पायी जो उनके वास्तविक पारिवारिक सम्बन्धों से मेल न खाती थी। इन लोगों में यह नियम था कि एक-एक जोडा आपस मे विवाह करता था, और दोनों पक्षो मे से कोई भी आसानी से विवाह को भंग कर सकता था। मौर्गन इस व्यवस्था को "युग्म-परिवार" कहते थे। ऐसे किसी विवाहित जोड़े की सन्तान को सब लोग जानते-मानते थे, इसलिये इसमें तनिक भी सन्देह नही हो सकता था कि किसको किसका पिता, माता, पुत्र, पुत्री, भाई या बहन कहना चाहिये। पर वास्तव में इन शब्दों का प्रयोग बिलकुल उल्टे ढंग से होता था। इरोक्वा पुरुष न सिर्फ़ अपने बच्चों को, बल्कि अपने भाइयों के बच्चों को भी, पुत्र और पुत्री कहता है, और वे उसे पिता कहते हैं। दूसरी ओर, वह अपनी बहनों के बच्चों को अपना भांजा और भांजी कहता है और वे उसे मामा कहते हैं। इसी तरह, इरोक्वा स्त्री स्वयं अपने बच्चों के साथ-साथ अपनी बहनों के बच्चों को भी पुत्र और पुत्री कहती है, और वे उसे माता कहते है। दूसरी ओर, वह अपने भाइयों के बच्चों को भतीजा और भतीजी कहती है, और वह स्वयं उनकी बुआ कहलाती है। इसी प्रकार, भाइयों के बच्चे एक दूसरे को भाई-बहन कहते हैं, और बहनों के ब[illegible] भी एक दूसरे को यही कहकर पुकारते हैं। इसके विपरीत एक स्त्री के और उसके भाई के बच्चे एक दूसरे को ममेरे-फुफेरे भाई-बहन [illegible] ये केवल कोरे नाम नही हैं, बल्कि इन नामों से रक्त-सम्बन्ध के

सांपार्श्विकता, समानता और असमानता के बारे में, जो विचार प्रकट होते हैं, उनका वास्तव मे चलन है। और इन विचारों के आधार पर रक्त-सम्वन्ध की एक पूरी विशद व्यवस्था टिकी हुई है जिसके द्वारा एक व्यक्ति के सैकडो प्रकार के भिन्न सम्वन्धो को बताया जा सकता है। इसके अलावा, यह व्यवस्था न सिर्फ सभी अमरीकी इंडियनों में पूरे तौर पर लागू पायी जाती है (अभी तक इसका कोई अपवाद नही मिला है), बल्कि भारत के आदिवासियों में, दक्षिण भारत में रहनेवाले द्रविड़ क़बीलों मे और हिन्दुस्तान मे रहनेवाले गौड़ क़बीलों में भी यही व्यवस्था लगभग ज्यो की त्यों अपरिवर्तित रूप में पायी जाती है। दक्षिण भारत के तामिल लोगों मे तथा न्यूयार्क राज्य के सेनेका क़बीले के इरोक्वा लोगों में पाये जानेवाले रक्त-सम्वन्धों के रूप आज भी दो सौ से अधिक भिन्न-भिन्न रिश्तो के बारे मे बिलकुल एक से हैं। और अमरीकी इंडियनों की ही भांति, भारत के इन कबीलो में भी परिवार के प्रचलित रूप से पैदा होनेवाले सम्वन्ध रक्त-सम्वद्धता की व्यवस्था के उल्टे है।

इसका क्या कारण हो सकता है? जांगल युग तथा वर्बर युग मे सभी जातियों की समाज-व्यवस्था मे रक्त-सम्बन्धों का जो निर्णायक महत्त्व होता है, उसको देखते हुए इतनी व्यापक रूप से प्रचलित व्यवस्था के महत्त्व को केवल शब्दजाल रचकर नही उडाया जा सकता। जो व्यवस्था सामान्यत. सारे अमरीका मे फैली हुई है, जो एशिया की एक बिलकुल दूसरी नस्ल के लोगो मे भी पायी जाती है, और जिसके न्यूनाधिक परिवर्तित रूप अफ़्रीका और आस्ट्रेलिया में हर जगह खूब देखने को मिलते हैं, उसका ऐतिहासिक कारण बताना आवश्यक है। उसे इस तरह नही उड़ाया जा सकता जिस तरह, मिसाल के लिये, मैक-लेनन ने कोशिश की है। पिता, सन्तान, भाई और बहन कोरे औपचारिक नाम नही हैं, वरन् वे बिलकुल ही निश्चित प्रकार के तथा अत्यन्त गम्भीर पारस्परिक कर्त्तव्यों के द्योतक हैं, जो अपने समग्र रूप में इन जातियो की सामाजिक रचना के मूलभूत अंग हैं। और यह कारण ढढ़ लिया गया। सैंडविच द्वीप (हवाई) मे वर्तमान शताब्दी के पूर्वार्द्ध मे परिवार का एक ऐसा रूप मौजूद था, जिसमे ऐसे ही मा-बाप, भाई-बहन, बेटा-बेटी, चाचा-चाची, भतीजा-भतीजी होते थे जैसे कि रक्त-सम्वद्धता की अमरीकी तथा प्राचीन भारतीय व्यवस्था द्वारा अपेक्षित हैं। लेकिन अजीब बात यह है कि हवाई में प्रचलित रक्त-सम्वद्धता

की व्यवस्था वहां मौजूद परिवार के वास्तविक रूप से फिर अनमेल निकली। वहां बहनो और भाइयो के सभी लड़के-लड़कियां निरपवाद रूप से भाई-बहन समझे जाते हैं और वे अपनी मां और उसकी बहनों या अपने बाप और उसके भाइयों की ही नहीं, बल्कि अपने मां-बाप के सभी भाइयों और बहनों की समान रूप से सन्तान समझे जाते हैं। इस प्रकार जहां एक ओर रक्त-सम्बद्धता की अमरीकी व्यवस्था परिवार के एक अधिक प्राचीन रूप की ओर संकेत करती है जिसका अस्तित्व अमरीका मे तो अब लुप्त हो गया है परन्तु जो हवाई में दरअसल अब भी क़ायम है, वहीं, दूसरी ओर हवाई की रक्त-सम्बद्धता की व्यवस्था परिवार के एक और भी आदिम रूप की ओर इंगित करती है, जिसके बारे में यद्यपि यह सिद्ध नही किया जा सकता कि इस समय भी उसका कही अस्तित्व है, तथापि यह मानना होगा कि उसका अस्तित्व अवश्य ही रहा होगा, अन्यथा उसके अनुरूप रक्त-सम्बद्धता की व्यवस्था का आविर्भाव नहीं हो सकता। इस संबंध में मौर्गन कहते हैं:

> "परिवार एक सक्रिय सिद्धान्त का प्रतिनिधित्व करता है। वह कभी भी स्थिर तथा गतिशून्य नही होता, बल्कि निम्न रूप से सदा उच्चतर रूप की ओर अग्रसर होता है, उसी प्रकार जिस प्रकार पूरा समाज निम्न से उच्चतर अवस्था की ओर बढ़ता है। इसके विपरीत रक्त-सम्बद्धता की व्यवस्थाएं निष्क्रिय हैं—भिन्न-भिन्न कालों मे, जिनके बीच समय का लम्बा व्यवधान होता है, परिवार ने जो प्रगति की है, उसे ये व्यवस्थाएं व्यक्त करती हैं और ये मौलिक रूप से तभी बदलती हैं जब परिवार में मौलिक परिवर्तन हो चुका होता है।"[16]

मार्क्स इस पर कहते हैं: "और यही बात राजनीतिक, क़ानूनी, धार्मिक तथा दार्शनिक प्रणालियों पर भी लागू होती है।" परिवार तो जीवित अवस्था में रहता है, पर रक्त-सम्बद्धता की व्यवस्था जड़ीभूत हो जाती है। रक्त-सम्बद्धता की व्यवस्था जबकि रूढ़िबद्ध रूप में विद्यमान रहती है, तब परिवार विकसित होकर उसके आगे निकल जाता है। लेकिन जिस प्रकार, पेरिस के नजदीक प्राप्त एक पशु-कंकाल की शिशुधानी की हड्डियों से कूविए निश्चयपूर्वक इस निष्कर्ष पर पहुंच सका कि यह कंकाल किसी शिशुधानी पशु का है, और इस प्रकार के पशु जो अब नहीं मिलते, उस क्षेत्र में कभी रहा करते थे, उसी प्रकार इतिहास-क्रम में प्राप्त रक्त-सम्बद्धता की व्यवस्था से हम भी उतने ही निश्चयपूर्वक यह निष्कर्ष निकाल सकते

कुछ दिनों से यह कहना फ़ैशन हो गया है कि मानवजाति के यौन-जीवन के इतिहास मे इस प्रारम्भिक अवस्था का अस्तित्व ही न था। उद्देश्य यह कि मानवजाति इस "कलंक" से बच जाये। कहा जाता है कि ऐसी अवस्था का कही कोई प्रत्यक्ष सबूत नही मिलता। इसके अलावा ख़ास तौर पर बाकी पशु-लोक की दुहाई दी जाती है। इसी प्रेरणावश लेतूर्नो ने ('विवाह और परिवार का विकास', १८८८[19]) ऐसे बहुत-से तथ्यों को जमा किया जिनसे सिद्ध होता था कि पशु-लोक में भी नीचे की अवस्था मे ही पूर्ण रूप से अनियंत्रित यौन-सम्बन्ध पाये जाते हैं। परन्तु इन तमाम तथ्यो से मै केवल एक ही परिणाम निकाल सकता हूं। वह यह कि जहा तक मनुष्य का और उसकी आदिम जीवनावस्था का सम्बन्ध है, इन तथ्यों से कुछ भी सिद्ध नहीं होता। यदि कशेरुक पशु लम्बे समय तक युग्म-जीवन व्यतीत करते हैं, तो इसके पर्याप्त शरीरक्रियात्मक कारण हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, पक्षियों में मादा को अंडे सेने के दिनों में मदद की जरूरत होती है। वैसे भी पक्षियों में दृढ़ एकनिष्ठ परिवार के उदाहरणों से मनुष्य के बारे मे कुछ भी सिद्ध नहीं होता क्योंकि मनुष्य पक्षियो के वंशज नही हैं। और यदि एकनिष्ठ यौन-सम्बन्ध को ही नैतिकता की पराकाष्ठा समझा जाये तो हमे टेपवर्म को सर्वश्रेष्ठ समझना चाहिए, जिसके शरीर के ५० से २०० तक देहखंडों या भागो में से प्रत्येक मे नर और मादा दोनों प्रकार का पूरा लैंगिक उपकरण होता है, और जिसका पूरा जीवन, इन भागों में से प्रत्येक में, स्वयं अपने साथ सहवास करने में बीतता है। लेकिन, यदि हम केवल स्तनधारी पशुओं पर विचार करें, तो हमे उनमें हर प्रकार का यौन-जीवन मिलता है। अनियंत्रित यौन-सम्बन्ध, यूथ-सम्बन्ध के चिह्न, एक नर-पशु का अनेक मादा-पशुओं से यौन-सम्बन्ध और एकनिष्ठ यौन-सम्बन्ध—ये सभी रूप उनमें दिखायी देते हैं। केवल एक रूप—एक मादा-पशु का अनेक नर-पशुओं से सम्बन्ध—उसमें नहीं मिलता। इस रूप तक केवल मनुष्य ही पहुंच सके। हमारे निकटतम सम्बन्धी, चतुर्हस्ती प्राणियो मे भी, नर और मादा के सम्बन्धों में हद दर्जे की विभिन्नता पायी जाती है। और यदि हम अपने दायरे को और भी सीमित करना चाहें और केवल चार तरह के पुरुषाभ वानरों पर विचार करें, तो लेतूर्नो से हमें ज्ञात हो सकता है कि वे कभी एकनिष्ठ यौन-जीवन व्यतीत करते हैं तो कभी बहुनिष्ठ जीवन और सोस्सुरे, जिन्हें जिरो-त्यूलों ने

उद्धृत किया है, कहते हैं कि वे एकनिष्ठ ही होते हैं।[20] हाल मे प्रकाशित 'मानव-विवाह का इतिहास' (लंदन, १८९१)[21] में वेस्टरमार्क ने जो यह दावा किया है कि पुरुषाभ वानरों में एकनिष्ठ यौन-जीवन की प्रवृत्ति पायी जाती है, उसको भी कोई बहुत बड़ा सबत नहीं माना जा सकता। संक्षेप में, ये सारी रिपोर्टें इस प्रकार की हैं कि ईमानदार लेतूर्नो को स्वीकार करना पडता है कि

> "स्तनधारी पशुओं में बौद्धिक विकास के स्तर तथा यौन-सम्बन्ध के रूप मे कोई निश्चित सम्बन्ध नहीं पाया जाता।"[22]

और एस्पिनास ने ('पशु-समाज', १८७७) तो साफ़-साफ़ कह डाला है कि

> "पशुओं में दिखायी पड़नेवाला सर्वोच्च सामाजिक रूप यूथ होता है। लगता है कि यूथ परिवारो को मिलाकर बना है, पर शुरू से ही परिवार तथा यूथ के बीच एक विरोध बना रहता है, वे एक दूसरे के उल्टे अनुपात में बढ़ते हैं।"[23]

ऊपर की बातों से स्पष्ट हो जाता है कि हम पुरुषाभ वानरों के परिवार तथा अन्य सामाजिक समूहों के बारे मे निश्चित रूप से लगभग कुछ नही जानते। रिपोर्टें एक दूसरे की उल्टी हैं। इसमें कोई आश्चर्य की बात भी नही है। मानवजाति के जांगल कबीलो तक के बारे में भी हमे जो रिपोर्टें मिली हैं, वे भी बहुत-सी बातों मे एक दूसरे की कितनी उल्टी हैं, और अभी उनका आलोचनात्मक अध्ययन तथा छानबीन करने की कितनी जरूरत है! फिर वानर-समाज का अध्ययन करना तो मानव-समाज से कही अधिक कठिन है। इसलिये फ़िलहाल, हमें ऐसी एकदम अविश्वसनीय रिपोर्टों से निकाले गये हर परिणाम को नामंजूर कर देना चाहिये।

लेकिन, एस्पिनास की पुस्तक का जो अंश हमने ऊपर उद्धृत किया है, उससे हमे एक अच्छा सुराग मिलता है। उन्होंने कहा है कि उच्चतर पशुओं में यूथ और परिवार एक दूसरे के पूरक नहीं होते, बल्कि विरोधी होते हैं। एस्पिनास ने बड़े स्पष्ट ढंग से इसका वर्णन किया है कि मैथुन-ऋतु आने पर नर-पशुओं की ईर्ष्या भावना किस प्रकार प्रत्येक यूथ के सामाजिक सम्बन्ध को शिथिल कर देती है, या उसे अस्थायी रूप से भंग कर देती है।

"जहा परिवार घनिष्ठ रूप से एकजुट है, वहां यूथ शायद ही कभी अपवादस्वरूप पाया जाता हो। दूसरी ओर, जहां स्वच्छन्द यौन-सम्बन्ध या नर-पशु का अनेक मादा-पशुओं के साथ सम्बन्ध सामान्यतः पाया जाता है, वहां लगभग स्वाभाविक रूप से यूथ का आविर्भाव होता है... यूथ के आविर्भूत होने के लिये आवश्यक होता है कि परिवार के सम्बन्ध ढीले पड गये हो और व्यष्टि फिर स्वतंत्र हो गयी हो। इसी लिये पक्षियों में संगठित वृन्द बहुत कम देखने में आते हैं... दूसरी ओर चूकि स्तनधारी पशुओ में पशु परिवार में नही विलीन हो जाता, *इसी लिये उनमे कमोवेश संगठित समाज पाये जाते हैं*... अतएव यूथ की सामूहिक भावना (सामूहिक अन्तःकरण) का, उसके जन्म के समय, परिवार की सामूहिक भावना से वड़ा शत्रु और कोई नही हो सकता। हमे यह कहने में हिचकिचाना नही चाहिए कि यदि परिवार से ऊंचा कोई सामाजिक रूप विकसित हो पाया है, तो उसका केवल एक यही कारण हो सकता है कि उस रूप मे ऐसे परिवार समाविष्ट हुए जिनमे वुनियादी परिवर्तन हो चुका था। और इस वात से यह सम्भावना नष्ट नहीं हो जाती कि ठीक इसी कारण ये परिवार, बाद मे पहले से कहीं अधिक उपयुक्त परिस्थितियां उत्पन्न होने पर, फिर अपनी रचना करने में सफल हुए।" (एस्पिनास, उपरोक्त पुस्तक, जिरो-त्यूलो द्वारा, १८८४ मे प्रकाशित 'विवाह और परिवार की उत्पत्ति' में, पृष्ठ ५१८-५२० पर उद्धृत।)

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि मानव-समाजों के वारे मे निष्कर्ष निकालने के लिये पशु-समाजों का कुछ महत्त्व निस्संदेह है, पर वह केवल नकारात्मक प्रकार का महत्त्व है। जहा तक हम पता लगा सके है, उच्चतर कशेरुक दंडियो मे केवल दो प्रकार के परिवार होते हैं: अनेक मादा-पशुओं के साथ एक नर का परिवार, अथवा एक-एक युग्म। दोनों सूरतों में नर केवल एक हो सकता है, यानी पति सिर्फ एक हो सकता है। नर की ईर्ष्या भावना, जो परिवार का सम्बन्ध-सूत्र है और उसकी सीमा भी, पशु-परिवार को यूथ का विरोधी बना देती है। मैथुन-ऋतु आने पर, उच्चतर सामाजिक रूप, यूथ कही पर बिलकुल असम्भव हो जाता है, कही पर ढीला पड़ जाता है या एकदम टूट जाता है; और यदि अच्छी हालत मे रहता है तो भी नर की ईर्ष्या के कारण उसके आगे के विकास मे बाधा पडती है। इसी एक बात से सिद्ध हो जाता है कि पशु-परिवार और आदिम मानव-

समाज, ये दो अनमेल चीजें हैं। पशु-अवस्था से ऊपर उठते हुए मनुष्य को या तो परिवार का कोई ज्ञान नही था, और यदि था तो ऐसे परिवार का जो पशुओ में नही पाया जाता। वेस्टरमार्क ने शिकारियो की रिपोर्टों के आधार पर कहा है कि गोरिल्ला और चिम्पाजी वानरों मे समूहशीलता का उच्चतम रूप युग्म होता है। इस रूप मे, यानी पृथक युग्मों के रूप मे भी, वह निहत्था जीव, जो मानव-अवस्था मे प्रवेश कर रहा था, छोटी संख्या में, जीवित रह सकता था। परन्तु पशु-अवस्था से निकलने के लिये, प्रकृति मे ज्ञात इस सबसे महान प्रगति के लिये, एक और तत्त्व की आवश्यकता थी। उसके लिये आवश्यक था कि व्यक्ति की अपनी रक्षा करने की अपर्याप्त शक्ति का स्थान यूथ की सामूहिक शक्ति और संयुक्त प्रयत्न ले ले। पुरुषाभ वानर आजकल जिन परिस्थितियों मे रहते हैं, वैसी ही परिस्थितियो से मानव-अवस्था में संक्रमण एकदम असम्भव होगा। ये वानर तो विकास के मुख्य क्रम से अलग हो गयी ऐसी शाखा प्रतीत होते हैं, जो अब लुप्त हो जाने को है, या जो कम से कम, पतनोन्मुख अवस्था में है। अतएव, उनके परिवारो के रूपो में और आदिम मानव के परिवारों के रूपो मे देखी गयी समानता के आधार पर जो निष्कर्ष निकाले जाते हैं, उन्हें नामंजूर कर देने के लिये यही अकेला कारण पर्याप्त है। केवल बड़े-बड़े और स्थायी यूथो मे रहते हुए ही पशु-अवस्था से मानव-अवस्था मे संक्रमण सभव था। और इन यूथो के निर्माण की पहली शर्त यह थी कि वयस्क नरों के बीच पारस्परिक सहनशीलता हो और वे ईर्ष्या भावना से मुक्त हों। और सचमुच परिवार का वह सबसे पुराना, सबसे आदिम रूप कौनसा है, जिसका इतिहास में अकाट्य प्रमाण मिलता है और जो आज भी कही-कही देखने में आता है? वह है यूथ-विवाह का रूप, जिसमें पुरुषों के एक पूरे दल का नारियों के एक पूरे दल के साथ सम्बन्ध होता है, और जिसमे ईर्ष्या भावना के लिए नही के बराबर स्थान होता है। इसके अलावा, विकास की एक आगे की मंजिल मे, हम बहु-पति विवाह की असाधारण प्रथा पाते हैं, जो ईर्ष्या भावना के और भी अधिक विरुद्ध है, और इसलिये जो पशुओ में बिलकुल ही नही पायी जाती। परन्तु यूथ-विवाह के जिन रूपो की हमे जानकारी है, उनके साथ ऐसी पेचीदा परिस्थितियां जुड़ी हुई हैं कि लाजिमी तौर पर उनसे यह प्रकट होता है कि उनके पहले यौन-सम्बन्धो के कुछ अधिक सरल रूप प्रचलित थे। और इस प्रकार अन्तिम

विश्लेषण मे, उनसे अनियंत्रित यौन-सम्बन्धो के एक युग का संकेत मिलता है, जो वही युग था जब पशु-अवस्था से मानव-अवस्था में संक्रमण हो रहा था। इसलिये, पशुओ मे पाये जानेवाले यौन-सम्बन्धो के रूपों का अध्ययन करने पर हम फिर उसी बिन्दु पर लौट आते है, जिस बिन्दु से हमें यह अध्ययन अंतिम रूप से आगे बढानेवाला था।

अस्तु, अनियंत्रित यौन-सम्बन्ध का क्या अर्थ है? इसका अर्थ यह है कि आजकल यौन-सम्बन्ध पर जो प्रतिबंध लगे हुए है, या जो पहले ज़माने मे लगे हुए थे, वे तब नही थे। ईर्ष्या ने जो प्राचीर खड़ी की थी, उसको ढहते हुए हम देख चुके है। यदि कोई बात निश्चित है तो यह कि ईर्ष्या की भावना अपेक्षाकृत विलंब से विकसित हुई। यही बात अगम्यागमन की धारणा पर लागू होती है। शुरू में न केवल भाई-बहन पति-पत्नी के रूप मे रहते थे, बल्कि अनेक जनो मे आज भी माता-पिता और उनकी सन्तानों के बीच यौन-सम्बन्ध की इजाजत है। बैंक्रोफ्ट ने ('उत्तरी अमरीका के प्रशान्त राज्यों की आदिवासी नस्ले', १८७५, खंड १[24]) बताया है कि बेरिंग जलडमरूमध्य के कावियट लोगो मे, अलास्का के नज़दीक रहनेवाले काडियक लोगों मे, और ब्रिटिश उत्तरी अमरीका के अन्दरूनी प्रदेश मे रहनेवाले टिनेह लोगो मे यह चीज़ अब भी पायी जाती है। लेतूर्नो ने इसी प्रथा की रिपोर्टे चिप्पेवा क़बीले के अमरीकी इंडियनों, चिली के रहनेवाले कूकू लोगो, कैरीबियन लोगो और हिन्दचीन के कारेन लोगो के बारे में जमा की हैं। पार्थवो, फारसियो, शको और हूणो आदि के बारे में जो वर्णन प्राचीन यूनानियो तथा रोमन लोगो मे मिलते है, उनका तो ज़िक्र ही क्या। अगम्यागमन का आविष्कार होने के पहले (और है यह एक आविष्कार ही, और वह भी अत्यन्त मूल्यवान), माता-पिता तथा उनकी सन्तान के बीच यौन-सम्बन्ध दो अलग-अलग पीढ़ियो के अन्य व्यक्तियो के यौन-सम्बन्ध से अधिक घृणास्पद नही हो सकता था। दो भिन्न पीढ़ियों के व्यक्तियो के बीच ऐसा यौन-सम्बन्ध तो आज दकियानूसी से दकियानूसी देश मे भी पाया जाता है और लोग उस पर बहुत ज्यादा नाक-भौं नही सिकोड़ते। बल्कि सच तो यह है कि साठ वर्ष से ऊपर की बूढी "कुमारियां" तक कभी-कभी, यदि उनके पास काफी दौलत होती है, तो तीस वर्ष के क़रीब के नौजवानो से विवाह करती देखी जाती है। परिवार के उन सबसे आदिम रूपों से, जिनकी हमे जानकारी है, यदि हम अगम्यागमन की धारणाओ

को–जो हमारी अपनी धारणाओं से बिलकुल भिन्न और प्रायः उनकी उल्टी हैं–अलग कर दें, तो यौन-सम्बन्ध का ऐसा रूप रह जाता है जिसे केवल अनियंत्रित ही कहा जा सकता है। अनियंत्रित इस माने में कि उस पर अभी वे बंधन नहीं लगे थे जो बाद में रीति-रिवाजों ने लगा दिये। इसका अर्थ आवश्यक रूप से यह नहीं होता कि यौन-सम्बन्धों के मामले में रोज़ाना गड़बड़ी रहती थी। अस्थायी काल के लिये पृथक युग्मों का अस्तित्व वर्जित न था, बल्कि सच तो यह है कि यूथ-विवाह मे भी अब अधिकतर ऐसे ही युग्म देखने में आते हैं। यदि वेस्टरमार्क की, जो यौन-सम्बन्धो के इस आदिम रूप को मानने से इनकार करनेवालों की जमात में सबसे नये शरीक होनेवालो में हैं, विवाह की परिभाषा यह है कि जहां कही पुरुष और नारी बच्चा पैदा होने के समय तक साथ रहते है, वहीं विवाह है, तो कहा जा सकता हैं कि इस प्रकार का विवाह स्वच्छन्द यौन-सम्बन्धों की परिस्थितियो मे भी आसानी से हो सकता था, और उससे स्वच्छन्दता मे, अर्थात् यौन-सम्बन्धो पर रीति-रिवाजो के बनाये हुए बंधनों के अभाव की स्थिति में, कोई अन्तर नही पड़ेगा। वेस्टरमार्क निस्संदेह यह दृष्टिकोण लेकर चलते हैं कि

> "स्वच्छन्द यौन-सम्बन्धो का अर्थ व्यक्तिगत इच्छाओं का दमन है", और इसलिए "उसका सबसे सच्चा रूप वेश्यावृत्ति है"।[25]

इसके विपरीत मेरा विचार यह है कि जब तक हम आदिम परिस्थितियों को चकलाघर के चश्मों से देखना बन्द नही करेंगे, तब तक हम उन्हे जरा भी नही समझ पायेंगे। यूथ-विवाह पर विचार करते समय हम इस बात का फिर ज़िक्र करेंगे।

मौर्गन के अनुसार, स्वच्छन्द यौन-सम्बन्धों की इस आदिम अवस्था से, शायद बहुत शुरू में ही, परिवार के इन रूपों का विकास हुआ था:

१. **रक्तसम्बद्ध परिवार**–यह परिवार की पहली अवस्था है। यहा विवाह पीढ़ियों के अनुसार यूथों मे होता है। परिवार की सीमा के अन्दर सभी दादा-दादियां एक दूसरे के पति-पत्नी होते हैं। उनके बच्चों को, यानी माताओं और पिताओं की भी यही स्थिति होती है। और उनके बच्चों से फिर समान पति-पत्नियों का एक तीसरा दायरा तैयार हो जाता है। इनके बच्चे–पहली पीढ़ी के परपोते और परपोतिया–चौथे दायरे के पति-पत्नी

होते है। इस प्रकार, परिवार के इस रूप में, केवल पूर्वज और वंशज, यानी माता-पिता और उनके बच्चे (हमारी आजकल की भाषा में) एक दूसरे के साथ विवाह के अधिकार तथा जिम्मेदारियां ग्रहण नहीं कर सकते। सगे भाई-बहन, पास के और दूर के चचेरे, फुफेरे, ममेरे भाई-बहन, सब एक दूसरे के भाई-बहन होते हैं और ठीक इसी लिये वे सब एक दूसरे के पति-पत्नी होते हैं। इस अवस्था मे, भाई-बहन के सम्बन्ध मे यह बात शामिल है कि वे एक दूसरे के साथ हस्व मामूल संभोग करते हैं।* ऐसे

---

* वैगनर की रचना 'निबेलुग' में आदिम काल का जो एकदम झूठा वर्णन दिया गया है, उसके बारे मे मार्क्स ने एक पत्र में[26] बहुत ही कड़े शब्दों मे अपना मत प्रकट किया है। यह पत्र उन्होंने १८८२ के वसन्त में लिखा था। "वधू के रूप में भाई अपनी बहन का आलिंगन करे, यह कथा क्या किसी ने कभी सुनी है?"[27] वैगनर के इन "विलासी देवताओं को", जो काफी आधुनिक ढंग से अपने प्रेम-व्यापार मे कौटुम्बिक व्यभिचार का भी थोड़ा-सा पुट दिया करते थे, मार्क्स ने यह उत्तर दिया था: "आदिम काल मे बहन ही पत्नी होती थी और उस समय यही नैतिक था।" (एंगेल्स का नोट।)

वैगनर के एक फ्रांसीसी मित्र और प्रशंसक इस टिप्पणी से सहमत नहीं है। वह इस बात की ओर संकेत करते है कि प्राचीन 'एड्डा'[28]-'ओगिस्द्रेका' में, जिसे वैगनर ने अपने आदर्श के रूप में लिया था, लोकी इन शब्दो में फ्रिया को उलाहना देता है: "तूने अपने भाई को देवताओ के सामने आलिंगन किया है।" उनका दावा है कि उस वक्त तक भाई और बहन का विवाह वर्जित हो चुका था। 'ओगिस्द्रेका' काव्य उस काल का प्रतिबिम्ब है जबकि पौराणिक गाथाओं में लोगों को जरा भी विश्वास नही रह गया था। वह देवताओं पर बिलकुल लूकियन नुमा व्यंग्य है। यदि लोकी मेफिस्टोफीलीस की तरह इस प्रकार फ्रिया को उलाहना देता है, तो यह बात वैगनर के खिलाफ पड़ती है। इस काव्य मे थोड़ा और आगे न्योर्द से लोकी यह भी कहता है कि "अपनी बहन की कोख से तुमने (ऐसा) एक पुत्र पैदा किया" (vidh systur thinni gaztu slikan-mög)। अब न्योर्द आसा नहीं, बल्कि वाना गण का था और 'इंगलिंग वीर-गाथा' में वह कहता है कि वाना-देश मे भाइयों और बहनो की शादियों का चलन था, लेकिन आसाओ मे ऐसी प्रथा नही थी।[29] इससे यह प्रतीत होता है कि वाना गण आसा लोगो से अधिक पुराने देवता थे। बहरहाल, न्योर्द आसाओं के बीच बराबरी के दर्जे पर रहता था और इसलिये 'ओगिस्द्रेका' से असल मे तो यह सिद्ध होता है कि जिस समय नारवे मे देवताओ की वीर-गाथाओं

एक ठेठ परिवार में एक माता-पिता के वंशज होंगे और फिर उनमें प्रत्येक पीढ़ी के ये वंशज, सब के सब, एक दूसरे के भाई-बहन होंगे और ठीक इसी कारण वे सब एक दूसरे के पति-पत्नी भी होंगे।

रक्तसम्बद्ध परिवार एकदम मिट गया है। असंस्कृत से असंस्कृत जातियों मे भी, जिनका इतिहास को ज्ञान है, परिवार के इस रूप का कोई ऐसा सबूत नही मिलता जिसकी जांच की जा सके। परन्तु हवाई द्वीपसमूह में पायी जानेवाली रक्त-सम्बद्धता की व्यवस्था, जो आज भी पोलिनेशिया के सभी द्वीपों में प्रचलित है, हमे इस निष्कर्ष पर पहुंचने को बाध्य कर देती है कि परिवार का यह रूप कभी **ज़रूर रहा होगा**। उसमें रक्त-सम्बद्धता के ऐसे दर्जे मिलते हैं जो परिवार के इस रूप के अन्तर्गत ही उत्पन्न हो सकते है। और परिवार का आगे का विकास भी, जोकि इस रूप को एक आवश्यक प्रारम्भिक अवस्था मानकर ही चलता है, हमें इस नतीजे पर पहुंचने को मजबूर करता है।

२. **पुनालुआन परिवार।** यदि परिवार के सगठन मे प्रगति का पहला कदम यह था कि माता-पिता और सन्तान को पारस्परिक यौन-सम्बन्धों से अलग कर दिया गया तो उसका दूसरा क़दम यह था कि भाइयो और बहनों को भी अलग कर दिया गया। चूंकि भाई-बहन की आयु अधिक समान होती थी, इसलिये उन्हे अलग करना पहले क़दम से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण और साथ ही अधिक कठिन भी था। यह क़दम धीरे-धीरे ही उठाया गया था। पहले शायद सगे भाइयों और बहनों (एक ही मां की संतान) के यौन-सम्बन्ध पर रोक लगायी गयी होगी। वह भी शुरू मे सिर्फ इक्के-दुक्के मामलो मे लगी होगी, और बाद में यह नियम बन गया होगा (हवाई में वर्तमान शताब्दी तक इस नियम के अपवाद मौजूद थे)। और अन्त मे, बढते-बढते रिश्ते के भाई-बहनों के, या, हमारी आजकल

की सृष्टि हुई, उस समय भाइयों और बहनों का विवाह, कम से कम देवताओं मे, बुरा नही माना जाता था। यदि वैगनर के लिये सफ़ाई ही देनी है तो शायद 'एड्डा' काव्य के बजाय गेटे का साक्ष्य देना बेहतर होगा, क्योंकि गेटे ने अपने स्त्रियों के धार्मिक आत्मसमर्पण के बारे में ऐसी ही गलती की है और उसको आधुनिक वेश्यावृत्ति से बहुत ज्यादा मिला दिया है। **(चौथे संस्करण में एंगेल्स का नोट)**

की भाषा में, सगे या दूर के मौसेरे, चचेरे या फुफेरे भाई-बहनों के विवाह पर रोक लगा दी गयी होगी। मौर्गन के शब्दों में यह क्रिया "नैसर्गिक चयन के सिद्धान्त की कार्य-प्रणाली का एक अच्छा उदाहरण है।"[37]

इस बात मे तनिक भी संदेह नही है कि जिन क़बीलों मे इस कदम के द्वारा कुटुम्ब मे अगम्यागमन पर रोक लग गयी थी, उन्होंने अनिवार्यतः उन कबीलो के मुकाबले में कही जल्दी और अधिक पूर्ण विकास किया, जिनमे भाई-बहनो के बीच अन्तर्विवाह नियम था, और आवश्यक कर्तव्य भी। और इस कदम का कितना जबर्दस्त असर पड़ा, यह गोत्र की सस्थापना से सिद्ध होता है जो सीधे-सीधे इसी क़दम से पैदा हुई, और उसके कही आगे निकल गयी। गोत्र बर्बर युग में संसार की यदि सभी नही तो अधिकतर जातियों के सामाजिक संगठन का आधार था, और यूनान तथा रोम मे तो हम इससे सीधे सभ्यता के युग मे प्रवेश कर जाते हैं।

प्रत्येक आदिम परिवार अधिक से अधिक दो-चार पीढ़ियों तक चलकर बंट जाता था। बर्बर युग की मध्यम अवस्था के उत्तर काल तक, हर जगह बिना किसी अपवाद के, आदिम कुटुम्ब-समुदायो मे ही रहने का चलन था। और उसके कारण कुटुम्ब-समुदाय के आकार और विस्तार की एक विशेष दीर्घतम सीमा निश्चित हो जाती थी, जो परिस्थितियो के अनुसार बदलती रहती थी, परन्तु प्रत्येक स्थान मे बहुत कुछ निश्चित रहती थी। जब एक मां के बच्चो के बीच सम्भोग बुरा समझा जाने लगा, तो लाजिमी था कि इस नये विचार का पुराने कुटुम्ब-समुदायों के विभाजन पर तथा नये कुटुम्ब-समुदायों (Hausgemeinden) की स्थापना पर असर पडे (पर यह जरूरी नही था कि ये नये समुदाय यूथ-परिवार के एकरूप हो)। बहनो का एक अथवा अनेक समूह एक कुटुम्ब का मूल-केन्द्र बन जाते थे, जबकि उनके सगे भाई दूसरे कुटुम्ब का मूल-केन्द्र बन जाते थे। रक्तसम्बद्ध से, इस ढंग से या इससे मिलते-जुलते किसी और ढंग से, परिवार का वह रूप उत्पन्न होता है जिसे मौर्गन पुनालुआन परिवार कहते है। हवाई की प्रथा के अनुसार कई बहनों के—वे सगी बहनें हो या रिश्ते की (यानी प्रथम या द्वितीय कोटि के संबंध से या और दूर के संबंध से चचेरी, ममेरी, फुफेरी बहने)—कुछ समान पति होते थे, जिनकी वे समान

रूप से पत्नियां हुआ करती थीं। परन्तु उनके भाइयों को इस सम्बन्ध से अलग रखा जाता था, यानी वे उनके पति नहीं हो सकते थे। ये पति अब एक दूसरे को भाई नहीं कहते थे—और वास्तव में अब उनका भाई होना आवश्यक भी नहीं था—बल्कि "पुनालुआ" कहते थे, जिसका अर्थ है अन्तरंग सखा, या associé। इसी प्रकार, भाइयों का एक दल—वे सगे भाई हों या रिश्ते के—कुछ स्त्रियो के साथ विवाह-सम्बन्ध मे बधा होता था। पर ये स्त्रिया उनकी बहनें नहीं होती थी; और ये स्त्रिया भी एक दूसरे को "पुनालुआ" कहती थी। परिवार के ढाचे (Familienformation) का यह प्राचीन रूप था; बाद मे इसमे कई परिवर्तन हुए। इस सगठन की बुनियादी विशेषता यह थी कि परिवार के एक निश्चित दायरे मे पतियों और पत्नियो का एक पारस्परिक समुदाय होता था, पर पत्नियो के भाई—पहले सगे भाई और बाद मे रिश्ते के भाई भी—इस दायरे से अलग रखे जाते थे, और उसी प्रकार दूसरी ओर पतियों की बहनें भी इस दायरे से अलग रखी जाती थी।

अमरीका मे पायी गयी रक्त-सम्बन्ध व्यवस्था से पारिवारिक सम्बन्धो की जो श्रेणिया निकलती हैं, उनमें से एक-एक परिवार के इस रूप में मिल जाती है। मेरी मां की बहनों के बच्चे उसके भी बच्चे रहते हैं, मेरे पिता के भाइयों के बच्चे उसी प्रकार मेरे पिता के बच्चे भी रहते हैं; और वे सब मेरे भाई-बहन होते हैं। परन्तु मेरी मा के भाइयों के बच्चे अब उसके भतीजे-भतीजियां कहलाते हैं, मेरे पिता की बहनो के बच्चे उसके भाजे-भांजिया कहलाते हैं। और ये सब मेरे ममेरे या फुफेरे भाई-बहन कहलाते हैं। मेरी मां की बहनों के पति उसके भी पति होते हैं और उसी प्रकार मेरे पिता के भाइयो की पत्नियां उसकी भी पत्निया होती हैं। वास्तव मे ऐसा हमेशा नही भी होता, तो भी सिद्धान्त मे तो ये सम्बन्ध माने ही जाते हैं। परन्तु भाइयों और बहनों के यौन-सम्बन्ध पर सामाजिक प्रतिबंध लग जाने के फलस्वरूप अब रिश्ते के भाई-बहन, जो पहले बिना भेदभाव के भाई-बहन ही समझे जाते थे, अब दो दर्जों में बंट गये: कुछ पहले की ही तरह (दूर के रिश्ते के) भाई-बहन ही रहे; बाकी को, एक ओर भाइयो के बच्चों को और दूसरी ओर बहनो के बच्चों को, अब एक दूसरे के भाई-बहन नहीं समझा जा सकता था, उनकी समान माता, समान पिता, अथवा समान माता-पिता नही हो सकते थे। इसलिये अब पहली बार

भतीजो-भतीजियों का, ममेरे और फुफेरे भाई-बहनों का, एक नया दर्जा बनाना आवश्यक हुआ—जो परिवार की पुरानी व्यवस्था मे बिलकुल बेमानी होता। रक्त-सम्बन्ध की अमरीका में पायी गयी व्यवस्था, जो किसी भी प्रकार के व्यक्तिगत विवाह पर आधारित परिवार की दृष्टि से बिलकुल बेवकूफी मालूम पड़ती है, पुनालुआन परिवार के बिलकुल उपयुक्त सिद्ध होती है, उस व्यवस्था की एक-एक बात पुनालुआन परिवार के आधार पर स्वाभाविक और विवेकपूर्ण सिद्ध हो जाती है। जिस हद तक रक्त-सम्बद्धता की यह व्यवस्था प्रचलित थी, कम से कम ठीक उसी हद तक पुनालुआन परिवार या उससे मिलता-जुलता कोई रूप भी प्रचलित रहा होगा।

यह सिद्ध हो चुका है कि परिवार का यह रूप हवाई मे मौजूद था; और यदि अमरीका मे स्पेन से आये हुए ईश्वर के विशेष कृपापात्र मिशनरी लोग इन गैर-ईसाई यौन-सम्बन्धो को केवल "पापाचार"* न समझते, तो शायद सारे पोलिनेशिया मे परिवार के इस रूप का अस्तित्व सिद्ध किया जा सकता था। सीजर के काल मे ब्रिटन लोग वर्बर युग की मध्यम अवस्था में थे। अतएव जब हम सीजर के लिखे हुए वर्णन मे पढ़ते हैं कि "दस-दस और बारह-बारह के दलो में वे लोग सामूहिक रूप से पत्निया रखते थे, और अधिकतर भाई-भाई साथ रहते थे और माता-पिता सन्तानों के साथ रहते थे,"[33] तो स्पष्ट है कि हम इसे यूथ-विवाह के रूप में ही ग्रहण करके समझ सकते हैं। बर्बर युग की माताओ के दस या बारह पुत्र इतने बडे नही हो सकते थे कि वे सामूहिक रूप से पत्निया रख सकते, परन्तु अमरीका में पायी गयी रक्त-सम्बन्ध व्यवस्था मे, जो पुनालुआन परिवार के अनुरूप है, भाइयो की सख्या बहुत बड़ी होती है, क्योंकि हर पुरुष के पास के या दूर के भाई भी उसके सगे भाई की तरह ही माने

---

* अब इसमे तनिक भी सन्देह नही हो सकता कि स्वच्छन्द यौन-सम्भोग, उनके तथाकथित «Sumpfzeugung» के वे चिह्न, जिन्हें बाखोफेन[31] अपनी खोज समझते थे, यूथ-विवाह की ओर सकेत करते हैं। "यदि बाखोफेन इन 'पुनालुआन' विवाहो को 'अवैध' समझते हैं, तो उस युग का आदमी आजकल के, पास के या दूर के चचेरे और मौसेरे भाई-बहनो के बीच होनेवाले अधिकतर विवाहो को पापाचार, यानी रक्त-सम्बद्ध भाइयों और बहनों के बीच विवाह समझेगा।" (मार्क्स)[32] **(एंगेल्स का नोट)**

जाते हैं। "माता-पिता सन्तानो के साथ रहते थे," यह कथन शायद सीजर की गलतफहमी का परिणाम है। हा, इस व्यवस्था मे यह असम्भव नही है कि पिता और पुत्र या माता और पुत्री एक ही विवाह-यूथ में हों, गोकि बाप और बेटी, या मा और बेटे उसमें नही रह सकते थे। इसी प्रकार हेरोडोटस और अन्य प्राचीन लेखकों ने जांगल तथा बर्बर लोगो मे सामूहिक पत्नियों का जो वर्णन किया है, वह भी परिवार के इसी या इससे मिलते-जुलते यूथ-विवाह के रूप के आधार पर ही सरलता से समझ मे आता है। वाटसन और कै ने अपनी पुस्तक *The People of India* मे[34] अवध मे (गगा के उत्तर मे) रहनेवाले ठाकुरो का जो वर्णन दिया है, उस पर भी यही बात लागू होती है। उन्होने इन लोगो के बारे में लिखा है:

> "वे बड़े-बडे समुदायो में (यौन-सम्बन्धो की दृष्टि से) बिना किसी भेदभाव के साथ रहते थे और जब दो व्यक्ति विवाहित माने जाते थे, उनका विवाह-सम्बन्ध नाममात्र के लिये ही होता था।"

अधिकतर स्थानो मे मालूम होता है कि **गोत्र** सीधे पुनालुआन परिवार से उत्पन्न हुए। हां, वैसे आस्ट्रेलिया की वर्ग-व्यवस्था से भी इसकी शुरूआत हो सकती थी।[35] आस्ट्रेलियावासियों मे गोत्र तो होते हैं, पर उनमे पुनालुआन परिवार नही होता, उनमें यूथ-विवाह का एक अधिक कुघड़ रूप पाया जाता है।

यूथ-विवाह के सभी रूपो में, इस बात का निश्चय नही होता कि बच्चे का पिता कौन है। पर इसका निश्चय होता है कि बच्चे की माता कौन है। यद्यपि मां इस कुल परिवार के **सभी** बच्चो को अपनी सन्तान कहती है, और उन सभी के प्रति उसे माता के कर्त्तव्य का पालन करना पडता है, तथापि वह यह तो जानती ही है कि उसकी सगी सन्तान कौनसी है। अतएव यह स्पष्ट हो जाता है कि जहां कही यूथ-विवाह का चलन होता है, वहा केवल **मां** के वंशजो का ही पता चल सकता है, और **मां ही के नाम से वंश चलता है।** सभी जागल लोगों में तथा बर्बर युग की निम्न अवस्था मे पाये जानेवाले लोगों मे, वास्तव मे यही बात देखी जाती है और बाखोफेन की दूसरी बड़ी उपलब्धि यह थी कि उन्होने सबसे पहले इसका पता लगाया था। केवल माता के द्वारा वंश का पता लगने तथा इससे कालान्तर में उत्पन्न होनेवाले उत्तराधिकार-सम्बन्धों को बाखोफेन

मातृ-सत्ता के नाम से पुकारते हैं। संक्षिप्तता की दृष्टि से मैं भी इसी नाम का प्रयोग करूंगा। परन्तु, यह नाम बहुत उपयुक्त नही है, क्योकि समाज के विकास की इस अवस्था मे अभी कानूनी अर्थ मे सत्ता जैसी कोई चीज नही उत्पन्न हुई है।

अब यदि पुनालुआन परिवार के दो ठेठ समूहों में से हम किसी एक को ले, जिसमे सगी तथा रिश्ते की बहनें (एक पीढ़ी के अन्तर से, दो या और भी अधिक पीढियो के अन्तर से वंशजायें) शामिल हैं और उनके साथ-साथ उनके बच्चे और उनके सगे या मौसेरे भाई (जो हमारी मान्यता के अनुसार उनके पति नहीं होते) भी शामिल हैं, तो हम पायेंगे कि ठीक ये ही वे लोग हैं जो बाद में चलकर, अपने प्रारम्भिक रूप मे गोत्र के सदस्य होते हैं। इन सब लोगो की एक समान पूर्वजा होती है, जिसकी वंशजायें पीढी-दर-पीढ़ी आपस में बहनें होती हैं, इसी नाते होती हैं कि वे उसकी वंशजायें हैं। परन्तु इन बहनो के पति लोग अब उनके भाई नही हो सकते, यानी वे उसी एक पूर्वज के वंशज नही हो सकते, और इसलिये वे उस रक्तसम्बद्ध समूह के, जो बाद मे गोत्र कहलाने लगा, सदस्य भी नही हो सकते। परन्तु उनके बच्चे इस समूह मे होते हैं, क्योकि मातृ-परम्परा ही असन्दिग्ध होने के कारण निर्णायक महत्त्व रखती है। जब एक बार ज्यादा से ज्यादा दूर के रिश्ते के मौसेरे भाई-बहनों समेत तमाम भाई-बहनों के यौन-सम्बन्ध पर प्रतिबंध स्थापित हो जाता है, तो उपरोक्त समूह गोत्र में बदल जाता है—यानी, तब वह मातृ-वंशी ऐसे रक्त-सम्बन्धियो का एक बहुत सख्ती के साथ सीमित दायरा बन जाता है, जिन्हें आपस मे विवाह करने की इजाजत नही होती। और इस समय से ही यह गोत्र सामाजिक एवं धार्मिक चरित्र रखनेवाली अन्य सामान्य सस्थाओं के द्वारा अपने को अधिकाधिक शक्तिशाली और दृढ बनाता जाता है और उसी कबीले के दूसरे गोत्रों से अपने को अलग करता जाता है। बाद में हम इसकी अधिक विस्तार से चर्चा करेंगे। परन्तु जब हम पाते हैं कि गोत्र न केवल अनिवार्यतः, बल्कि प्रत्यक्षतः भी पुनालुआन परिवार मे से विकसित होकर निकले हैं, तो इस बात को भी लगभग पक्का मानने के लिए आधार मिल जाता है कि जिन जातियों मे गोत्रीय संस्थाओं के चिह्न मिलते हैं, उन सब में, यानी लगभग सभी बर्बर तथा सभ्य जातियों मे परिवार का यह रूप पहले मौजूद था।

जिस समय मौर्गन ने अपनी पुस्तक लिखी थी, उस समय तक भी यूथ-विवाह का हमारा ज्ञान बहुत सीमित था। उस समय आस्ट्रेलिया के निवासियों मे – जो वर्गों में संगठित थे – पाये जानेवाले यूथ-विवाहों के बारे में थोडी-सी जानकारी थी। इसके अलावा मौर्गन ने १८७१ में ही वह सामग्री प्रकाशित कर दी थी जो उन्हें हवाई के पुनालुआन परिवार के बारे में उपलब्ध हुई थी।[36] पुनालुआन परिवार से, एक ओर तो अमरीकी इंडियनों में पायी गयी रक्त-सम्बन्ध व्यवस्था पूरी तरह समझ में आ जाती थी – ध्यान रहे कि मौर्गन की सारी खोज इसी व्यवस्था से आरम्भ हुई थी; दूसरी ओर, उसमें मातृसत्तात्मक गोत्रों के विकास-क्रम का प्रारम्भिक बिन्दु मिल जाता था; और अन्त में, वह आस्ट्रेलिया के वर्गों से कहीं अधिक ऊंचे दर्जे के विकास का प्रतिनिधित्व करता था। इसलिये यह समझ में आनेवाली बात है कि मौर्गन ने पुनालुआन परिवार को युग्म-परिवार के पहले आनेवाली विकास की एक आवश्यक मंजिल समझा और यह मान लिया कि शुरू के जमाने में परिवार का यह रूप आम तौर पर प्रचलित था। तब से हमें यूथ-विवाह के और भी कई रूपों की जानकारी हो गयी है, और अब हम जानते हैं कि मौर्गन इस दिशा में बहुत दूर तक चले थे। फिर भी, यह उनका सौभाग्य था कि पुनालुआन परिवार के रूप में उन्हें यूथ-विवाह का सर्वोच्च एवं क्लासिकीय रूप मिल गया था, जिससे उच्चतर अवस्था में संक्रमण सबसे अधिक आसानी से समझ में आ सकता है।

यूथ-विवाह के विषय में अपने ज्ञान-भंडार की अत्यन्त मौलिक वृद्धि के लिये हम लौरिमेर फाइसन नामक अंग्रेज मिशनरी के आभारी हैं, क्योंकि उन्होंने परिवार के इस रूप का उसके मूल स्थान, आस्ट्रेलिया में वर्षों तक अध्ययन किया था।[37] दक्षिणी आस्ट्रेलिया में माउंट गैम्बियर के इलाके के नीग्रो लोगों को उन्होंने विकास की सबसे निम्न अवस्था मे पाया था। यहां पूरा क़बीला क्रोकी और कुमाइट नामक दो वर्गों में बंटा हुआ है। *प्रत्येक वर्ग के अन्दर यौन-सम्भोग पर सख्त प्रतिबंध है।* दूसरी ओर, एक वर्ग का हरेक पुरुष दूसरे वर्ग की हरेक नारी का जन्म से पति होता है और वह उसकी जन्म से पत्नी होती है। व्यक्तियों का नहीं, बल्कि पूरे समूहों का आपस में विवाह होता है; एक वर्ग दूसरे वर्ग से विवाहित होता है। और ध्यान रहे, यहां आयु में अन्तर से, अथवा विशेष प्रकार के रक्त-सम्बन्ध से कोई पाबंदियां नहीं लगतीं। एकमात्र पाबंदी यही है

जो दो बहिर्विवाही वर्गों मे विभाजन से निर्धारित होती है। क्रोकी वर्ग का प्रत्येक पुरुष कुमाइट वर्ग की प्रत्येक नारी का वैध पति है, परन्तु चूंकि उसकी अपनी पुत्री भी, एक कुमाइट नारी की सन्तान होने के नाते, मातृ-सत्ता के अनुसार कुमाइट होती है, इसलिये वह जन्म से क्रोकी वर्ग के प्रत्येक पुरुष की और अपने पिता की भी पत्नी होती है। जो भी हो यह वर्ग-सगठन, जैसा कि हम उसे जानते हैं, इस संबंध पर प्रतिबंध नही लगाता। अतएव या तो यह संगठन उस समय उत्पन्न हुआ होगा, जब अगम्यागमन पर रोक लगाने की अस्पष्ट प्रेरणाओं के बावजूद, माता-पिता और सन्तान के बीच मैथुन को अभी विशेष घृणा की दृष्टि से नही देखा जाता था—और ऐसी सूरत मे यह वर्ग-संगठन सीधे अनियमित अथवा स्वच्छन्द यौन-सम्बन्धो की अवस्था से उत्पन्न हुआ होगा; और या फिर वर्गों के आविर्भाव के पहले ही माता-पिता तथा सन्तान के यौन-सम्बन्ध पर रीति-रिवाजो ने प्रतिबंध लगा दिया होगा—और ऐसी सूरत मे वर्तमान स्थिति रक्तसम्बद्ध परिवार की ओर सकेत करती है और उसके आगे के विकास की पहली मंजिल के रूप मे सामने आती है। ज्यादा मुमकिन है कि यह दूसरी सूरत ही रही होगी, क्योंकि जहां तक मुझे मालूम है, आस्ट्रेलिया मे *माता-पिता तथा सन्तान के बीच यौन-सम्बन्ध* का कोई उदाहरण नही मिला है, और बहिर्विवाद की प्रथा का बाद मे आनेवाला रूप, यानी मातृसत्तात्मक गोत्र भी, आम तौर पर ऐसे सम्बन्धों पर लगे हुए प्रतिबधों को मानकर चलता है, क्योकि वे उसकी स्थापना के पहले से लगे हुए थे।

दक्षिणी आस्ट्रेलिया के माउंट गैम्बियर के अलावा, यह द्विवर्गीय व्यवस्था उसके भी पूर्व, डार्लिंग नदी के प्रदेश में, और उत्तर-पूर्व, क्वीन्सलैंड मे भी पायी जाती है। अर्थात् यह व्यवस्था बहुत दूर-दूर तक फैली हुई है। इस व्यवस्था मे केवल भाइयों और बहनो के बीच, भाइयों के बच्चो के बीच और मौसेरी बहनो के बच्चो के बीच विवाह नही हो सकता, क्योकि ये सब एक वर्ग के सदस्य होते हैं। दूसरी ओर, भाई और बहन के बच्चों को विवाह करने की इजाजत होती है। अगम्यागमन पर एक और प्रतिबंध हम न्यू साउथ वेल्स में डार्लिंग नदी के तट पर रहनेवाले कामिलारोई जाति के लोगों में पाते हैं। यहा पुराने दो वर्गों को चार मे बाट दिया गया है और इन चारो में से प्रत्येक वर्ग एक अन्य वर्ग

से सामूहिक रूप से विवाहित होता है। पहले दो वर्ग जन्म से एक दूसरे के पति-पत्नी होते है। उनके बच्चे तीसरे या चौथे वर्ग के सदस्य हो जाते हैं, जो इस पर निर्भर करता है कि उनकी मां पहले वर्ग की है या दूसरे वर्ग की। इसी प्रकार तीसरे और चौथे वर्ग आपस मे विवाहित होते हैं और उनके बच्चे फिर पहले या दूसरे वर्ग के सदस्य हो जाते हैं। इस प्रकार एक पीढी के लोग सदा पहले और दूसरे वर्गो के सदस्य होते है; दूसरी पीढी के लोग सदा तीसरे और चौथे वर्गो के सदस्य होते हैं। और उसके बाद आनेवाली पीढ़ी के लोग फिर पहले और दूसरे वर्गो के सदस्य हो जाते हैं। इस व्यवस्था के अनुसार (मौसेरे) भाइयो व बहनों के बच्चे आपस मे विवाह नही कर सकते, पर उनके पोते-पोतिया कर सकते हैं। यह विचित्र रूप मे जटिल व्यवस्था उस समय और जटिल हो जाती है जब उस पर ऊपर से मातृसत्तात्मक गोत्रो की क़लम लगा दी जाती है, तो भी वह काफी बाद में होता है। पर उसकी चर्चा करना यहां सभव नही है। इस प्रकार हम देखते हैं कि अगम्यागमन पर प्रतिबंध लगाने की प्रवृत्ति किस प्रकार बार-बार जोर मारती है, पर उद्देश्य की साफ समझ न होने की वजह से, वह सदा स्वयंस्फूर्त ढंग से रास्ता टटोलती हुई आगे बढती है।

यूथ-विवाह को, जो आस्ट्रेलिया में अभी वर्ग-विवाह का—यानी एक पूरे महाद्वीप के विभिन्न भागो मे बिखरे हुए पुरुषों के एक पूरे वर्ग का, इसी तरह दूर-दूर तक बिखरी हुई नारियों के वर्ग के साथ विवाह का—ही रूप धारण किये हुए है, ज्यादा नजदीक से देखने पर वह उतना भयानक नही लगता जितना हमारे कूपमंडूको ने चकलाघर के रंग में रंगी हुई अपनी कल्पना मे उसे समझ रखा है। इसके विपरीत, बरसों बीत गये पर किसी को शक तक न हुआ कि यूथ-विवाह जैसी कोई प्रथा अस्तित्व रखती है; और सचमुच अभी हाल में फिर लोगों ने उसके अस्तित्व के बारे मे मतभेद प्रकट किया है। महज ऊपर की सतही चीजों को देखनेवालों को यह एक प्रकार की ढीली-ढाली एकनिष्ठ विवाह की प्रथा मालूम पड़ती थी, जिसमे कही-कही बहु-पत्नी विवाह भी पाया जाता था और यदा-कदा पति-पत्नी एक दूसरे के साथ बेवफाई करते रहते थे। विवाह की ऐसी अवस्थाओं के नियम का पता लगाने के लिए बरसो तक अध्ययन करने की आवश्यकता है, जैसा कि फ़ाइसन और हौविट ने किया था। व्यवहार मे यह नियम औसत यूरोपवासी को उसके अपने वैवाहिक रीति-रिवाजों की याद दिलाता

है। यह इसी नियम का चमत्कार है कि ग्रास्ट्रेलियाई नीग्रो एक कैम्प से दूसरे कैम्प, एक कबीले से दूसरे क़बीले में चक्कर लगाता हुआ, अपने घर से हज़ारों मील दूर ऐसे लोगों के बीच पहुच जाता है जिनकी भाषा तक वह नही समझता, पर वहां भी उसे ऐसी स्त्रिया मिल जाती हैं जो मासूमियत के साथ ग्रौर बिना किसी विरोध के उसके सामने ग्रात्मसमर्पण करती हैं। इसी नियम के ग्रनुसार वह पुरुष जिसके पास कई पत्नियां है, अपनी एक पत्नी रात भर के लिये अपने मेहमान को सौंप देता है। यूरोपवासी को जहां केवल अनैतिकता ग्रौर अराजकता का दौर-दौरा दिखायी देता है, वहां वास्तव मे बडे सख्त नियमों का पालन होता है। स्त्रिया ग्रागन्तुक के विवाह-वर्ग की हैं ग्रौर इसलिये वे जन्म से उसकी पत्निया है। नैतिकता के जिस नियम ने एक को दूसरे के हाथ सौंप रखा है, उसी ने एक दूसरे से सम्बन्धित विवाह-वर्गों के बाहर हर प्रकार के यौन-व्यापार पर प्रतिबंध लगा रखा है, ग्रौर जो कोई इस नियम को तोड़ता है, उसे क़बीले से निकाल दिया जाता है। यहां तक कि जहां स्त्रियों का अपहरण भी होता है, जो ग्रक्सर देखने में ग्राता है ग्रौर जिसका कहीं-कही तो नियम है, वहां भी वर्ग-विधान का कडाई के साथ पालन किया जाता है।

स्त्रियों के ग्रपहरण में हमें एकनिष्ठ विवाह की प्रथा मे संक्रमण का चिह्न दिखायी देता है। कम से कम युग्म-विवाह के रूप में तो उसकी एक झलक यहां दिखायी ही पडती है। जब युवा पुरुष अपने मित्रों की सहायता से लडकी का ग्रपहरण कर लेता है, या उसे भगा लाता है, तो वह ग्रौर उसके मित्र सब बारी-बारी से लडकी के साथ सम्भोग करते हैं, परन्तु उसके बाद वह उसी युवक की पत्नी मानी जाती है जिसने उसके अपहरण में पहल की थी। ग्रौर यदि भगायी हुई स्त्री इस पुरुष के पास से भी भाग जाती है ग्रौर कोई दूसरा पुरुष उस पर ग्रधिकार कर लेता है, तो वह उसकी पत्नी हो जाती है, ग्रौर पहले पुरुष का विशेषाधिकार खत्म जाता है। इस प्रकार यूथ-विवाह की प्रणाली के—जो ग्राम तौर पर कायम रहती है—साथ-साथ ग्रौर उसके भीतर, एकांतिक सम्बन्ध, न्यूनाधिक समय के लिए युग्म-जीवन ग्रौर बहु-पत्नी विवाह भी पाये जाते हैं। ग्रतएव यूथ-विवाह की प्रथा यहा भी धीरे-धीरे मिट रही है। प्रश्न केवल यह है कि यूरोपीय प्रभाव के फलस्वरूप पहले कौन मिटेगा—यूथ-विवाह या इस प्रथा को माननेवाले ग्रास्ट्रेलियाई नीग्रो।

कुछ भी हो, पूरे वर्गों के बीच विवाह, जैसा कि आस्ट्रेलिया में प्रचलित है, यूथ-विवाह का बहुत निम्न और आदिम स्वरूप है, जबकि पुनालुआन परिवार, जहां तक हम जानते हैं, यूथ-विवाह का सबसे विकसित स्वरूप है। मालूम पड़ता है कि पहला स्वरूप घुमन्तू जांगलियों की सामाजिक स्थिति के अनुकूल था, जबकि दूसरे स्वरूप के लिए आदिम कुटुम्ब-समुदायों की अपेक्षाकृत स्थायी बस्तियां पूर्वमान्य हैं, और उससे सीधे अगली और उच्चतर मंजिल मे अन्तरण होता है। इन दोनों अवस्थाओं के बीच में निस्संदेह कुछ दरमियानी अवस्थाएं भी मिलेगी। इस तरह यहां हमारे सामने खोज का एक विशाल क्षेत्र मौजूद है, जो अभी-अभी खुला है और प्रायः अछूता पड़ा है।

३. **युग्म-परिवार।** न्यूनाधिक समय के लिये युग्म-जीवन यूथ-विवाह के अन्तर्गत, या उसके भी पहले शुरू हो गया था। पुरुष की अनेक पत्नियों में से एक उसकी मुख्य पत्नी (उसे अभी सबसे अधिक चहेती पत्नी नही कहा जा सकता) होती थी, और उसके अनेक पतियों में, वह स्वयं उसका मुख्य पति होता था। बहुत हद तक इसी परिस्थिति के कारण मिशनरी लोग यूथ-विवाह को देखकर उलझन मे पड़ गये थे, और उसे कभी सामूहिक पत्नियो के साथ अनियंत्रित यौन-सम्बन्ध, और कभी-कभी उच्छृंखल व्यभिचार समझते थे। बहरहाल, जैसे-जैसे गोत्र का विकास हुआ और उन "भाइयो" और "बहनों" के वर्गों की संख्या बढ़ती गयी जिनमे विवाह होना असम्भव बना दिया गया था, वैसे-वैसे लोगो की जोड़े में रहने की आदत भी आवश्यक रूप से बढती गयी। रक्त-सम्बन्धियो के बीच विवाह को रोकने की प्रवृत्ति को गोत्र से जो बढ़ावा मिला, उससे इस चीज मे और तेजी आयी। इस प्रकार, हम पाते है कि इरोक्वा और अधिकतर अन्य इंडियन कबीलो मे, जो बर्बर युग की निम्न अवस्था में हैं, उनकी व्यवस्था के अन्तर्गत मान्य सभी सम्बन्धियों—और उनकी संख्या कई सौ किस्म तक पहुंचती है—के बीच विवाह पर प्रतिबंध लगा हुआ है। विवाह के प्रतिबंधों की यह बढ़ती हुई पेचीदगी यूथ-विवाहों को अधिकाधिक असम्भव बनाती गयी और उनका स्थान युग्म-परिवार ने ले लिया। इस अवस्था में एक पुरुष एक नारी के साथ तो रहता है, लेकिन इस तरह कि एक से अधिक पत्नियां रखने और कभी-कभी पत्नी के सिवा और स्त्रियों से भी सम्भोग करने का पुरुषों का अधिकार बना रहता है; यद्यपि वास्तव में, आर्थिक कारणों से पुरुष बहुधा अनेक पत्नियां नही रख पाता। साथ ही सहवास काल में नारी से कठोर

पतिव्रत्य की अपेक्षा की जाती है और उसका उल्लंघन करनेवाली स्त्री को कठोर दण्ड दिया जाता है। परन्तु दोनों पक्षों में से कोई भी आसानी से विवाह-सम्बन्ध को तोड सकता है, और बच्चों पर अब भी पहले की तरह माता का ही अधिकार होता है।

निरतर अधिकाधिक रक्त-सम्बन्धियों के बीच विवाह पर प्रतिबध लगाने मे नैसर्गिक वरण का भी हाथ बना रहता है। मोर्गन के शब्दों में,

> "जो गोत्र रक्त-सम्बद्ध न थे उनके बीच होनेवाले विवाहो से जो सन्ताने पैदा होती थी वे शरीर और मस्तिष्क दोनो से अधिक बलवान होती थी। जब दो विकासशील कबीले मिलकर एक जन-समूह बन जाते है... तो एक नयी खोपड़ी और मस्तिष्क की उत्पत्ति होती है जिसकी लम्बाई-चौड़ाई दोनों की योग्यताओ के योग के बराबर होती है।"[38]

अतएव, गोत्रो के आधार पर संघटित कबीले अधिक पिछड़े हुए कबीलो पर हावी हो जाते है, या अपने उदाहरण के द्वारा उनको भी अपने साथ-साथ खीच ले चलते है।

इस प्रकार प्रागैतिहासिक काल मे परिवार का विकास इसी बात में निहित था कि वह दायरा अधिकाधिक सीमित होता जाता था, जिसमे पुरुष और नारी के बीच वैवाहिक सम्बन्ध की स्वतंत्रता थी। शुरू मे पूरा कबीला इस दायरे मे आ जाता था। लेकिन बाद मे, पहले इस दायरे मे नज़दीकी सम्बन्धी धीरे-धीरे निकाल दिये गये, फिर दूर के सम्बन्धी अलग कर दिये गये, और अन्त में तो उन तमाम सम्बन्धियो को भी निकाल दिया गया जिनका केवल विवाह का सम्बन्ध था। इस तरह अन्त मे, हर प्रकार का यूथ-विवाह व्यवहार में असंभव बना दिया गया। आख़िर में केवल एक, फिलहाल बहुत ढीले बंधनों से जुडा, जोड़ा ही बचा, जो एक अणु की भाति होता है, और जिसके भंग हो जाने पर स्वयं विवाह ही पूरी तरह नष्ट हो जाती है। इसी एक बात से यह स्पष्ट हो जाता है कि एकनिष्ठ विवाह की उत्पत्ति मे, व्यक्तिगत यौन-सम्बन्ध का इस शब्द के आधुनिक अर्थ मे कितना कम हाथ रहा है। इस अवस्था मे लोगों के व्यवहार से इसका एक और सबूत मिल जाता है। परिवार के पुराने रूपो के अन्तर्गत पुरुषो को कभी स्त्रियों की कमी नही होती थी, बल्कि सदा बाहुल्य ही रहता था, लेकिन अब इसके विपरीत, स्त्रियो की कमी होने लगी और उनकी तलाश की जाने लगी। अतएव युग्म-विवाह के साथ-साथ स्त्रियो को भगाना और ख़रीदना

शुरू होता है–ये बातें कहीं अधिक गम्भीर परिवर्तन के **आसार मात्र** हैं, जो बहुत व्यापक रूप मे दिखायी पड़ती हैं, पर इससे अधिक उनका महत्त्व नही है। परन्तु उस पंडिताऊ स्काटलैंडवासी मैक-लेनन ने, इन आसार को, स्त्रियों को प्राप्त करने के इन तरीको को ही, परिवार के अलग-अलग तरह के रूप बना डाला और कहा कि कुछ "अपहरण-विवाह" होते है और कुछ "क्रय-विवाह"। इसके अलावा, अमरीकी इंडियनो मे और (विकास की इसी मंजिल के) कुछ अन्य कबीलों मे भी विवाह का प्रबंध उन दो व्यक्तियो के हाथ में नही होता जिनकी शादी होती है, बल्कि उनकी तो बहुधा राय तक नही पूछी जाती। विवाह का प्रबंध दोनो व्यक्तियो की माताओं के हाथ मे रहता है। इस प्रकार अक्सर दो बिलकुल अजनबी व्यक्तियो की सगाई कर दी जाती है, और उन्हें इस सौदे का ज्ञान केवल विवाह का दिन नजदीक आने पर ही होता है। विवाह के पहले, वधू के गोत्रीय सम्बन्धियो को (यानी उसकी माता की तरफ के सम्बन्धियो को, उसके पिता को या पिता के रिश्तेदारों को नहीं), वर तरह-तरह की वस्तुएं भेंट मे देता है। ये वस्तुए कन्या-दान के प्रतिदान स्वरूप होती है। पति या पत्नी कभी भी अपनी इच्छा से विवाह भंग कर सकते हैं। फिर भी बहुत-से कबीलो मे, उदाहरण के लिये इरोक्वा क़बीले में, लोक-भावना ऐसे सम्बन्ध-विच्छेद के धीरे-धीरे ख़िलाफ़ होती गयी। जब कोई झगडा खड़ा होता है, तो दोनों पक्षो के गोत्र-सम्बन्धी बीच-बिचाव करने और फिर से मेल करा देने की कोशिश करते हैं, और इन कोशिशों के बेकार हो जाने पर ही सम्बन्ध-विच्छेद हो पाता है। ऐसा होने पर, बच्चे मा के साथ रहते हैं और दोनों पक्षो को फिर विवाह करने की आज़ादी होती है।

युग्म-परिवार स्वयं बहुत कमजोर और अस्थायी होता था, और इसलिये उसके कारण अलग कुटुम्ब की कोई विशेष आवश्यकता नही पैदा हुई थी, और न ही वह वांछनीय समझा गया। अतएव पहले से चला आता हुआ सामुदायिक कुटुम्ब युग्म-परिवार के कारण टूटा नहीं। किन्तु सामुदायिक कुटुम्ब का मतलब यह है कि घर के भीतर नारी की सत्ता सर्वोच्च होती है,–उसी प्रकार जैसे सगे पिता का निश्चयपूर्वक पता लगाना असम्भव होने के कारण, सगी मां की एकान्तिक मान्यता का अर्थ है स्त्रियों का, अर्थात् माताओं का प्रबल सम्मान। समाज के आदिकाल में नारी पुरुष की दासी थी, यह उन बिलकुल बेतुकी धारणाओं में से एक है जो हमे

अठारहवी सदी के जागरण काल से विरासत मे मिली है। सभी जांगल लोगो मे, और निम्न तथा मध्यम अवस्था की, यहां तक कि आंशिक रूप से उन्नत अवस्था की वर्बर जातियो मे भी, नारी को स्वतंत्र ही नही, बल्कि बडे आदर और सम्मान का भी स्थान प्राप्त था। आर्थर राइट ने सेनेका इरोक्वाओ के बीच बहुत वर्ष तक मिशनरी का काम किया था। युग्म-परिवार मे नारी का क्या स्थान था, इस विषय मे उनकी गवाही सुनिए:

> "जहा तक उनकी पारिवारिक व्यवस्था का सम्बन्ध है, जब ये लोग पुराने लम्बे घरों में रहते थे..." (सामुदायिक कुटुम्बों मे, जिनमे कई परिवार साथ-साथ रहते थे) "तो सम्भवतः उनमे एक कुल" (गोत्र) "की प्रधानता रहती थी, और स्त्रियां दूसरे कुलों" (गोत्रों) "के पुरुषो को अपना पति बनाती थी... घर में प्रायः नारी पक्ष शासन करता था। घर का भण्डार सब का सामूहिक होता था परन्तु यदि कोई अभागा पति या प्रेमी इतना नालायक होता था कि वह अपने हिस्से का सामान न जुटा पाये, तो उसकी मुसीबत आ जाती थी। फिर चाहे उसके कितने ही बच्चे हों और घर में चाहे उसका कितना ही सामान हो, उसे किसी भी समय बोरिया-बिस्तर उठाने का नोटिस मिल सकता था। और उसकी खैरियत इसी में थी कि एक बार ऐसा आदेश मिल जाने पर उसका उल्लंघन करने की कोशिश न करे। उसके लिये घर मे ठहरना अपनी शामत बुलाना होता और उसे अपने कुल" (गोत्र) "मे लौट जाना पडता था, या जैसा कि अक्सर होता था, किसी और गोत्र मे जाकर उसे एक नया वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने की कोशिश करनी पड़ती थी। अन्य सब स्थानों की भाति कुलो" (गोत्रो) "में भी मुख्य शक्ति स्त्रियो की होती थी। जरूरत होती थी, तो वे गोत्र के मुखिया को उसके पद से हटाकर साधारण योद्धाओं की पांत मे वापस भेज देने में नही हिचकिचाती थी।"[39]

आदिम काल मे आम तौर पर पाये जानेवाले स्त्रियों के प्राधान्य का भौतिक आधार वह सामुदायिक कुटुम्ब था, जिसकी अधिकतर स्त्रियां और यहां तक कि सभी स्त्रियां, एक ही गोत्र की होती थी और पुरुष दूसरे विभिन्न गोत्रों से आते थे। और बाखोफेन ने इस सामुदायिक कुटुम्ब का पता लगाकर तीसरी महान सेवा अर्पित की है। साथ ही मै यह भी जोड दू कि यात्रियों तथा मिशनरियो की ये रिपोर्टें कि जागल तथा बर्बर लोगों में स्त्रियों को कठोर परिश्रम करना पड़ता है, उपरोक्त तथ्य का खण्डन

नहीं करतीं। जिन कारणों से समाज में स्त्रियों की स्थिति निर्धारित होती है, और जिन कारणों से स्त्रियों और पुरुषों के बीच श्रम-विभाजन होता है, वे बिलकुल अलग-अलग है। वे लोग, जिनकी स्त्रियों को उससे कहीं ज्यादा मेहनत करनी पडती है, जितनी हम उचित समझते हैं, अक्सर स्त्रियो का यूरोपवासियों से कही अधिक सच्चा आदर करते है। सभ्यता के युग की भद्र महिला की, जिसका कि झूठा आदर-सत्कार तो बहुत होता है, और वास्तविक श्रम से जिसका कोई सम्बन्ध नहीं रह जाता है, सामाजिक स्थिति बर्बर यग की मेहनत-मशक्कत करनेवाली नारी की सामाजिक स्थिति से कही नीचे होती है। बर्बर युग की नारियों को उनके अपने लोग सचमुच भद्र महिला (lady, frowa, Frau = मालकिन) समझते थे और उनकी सचमुच समाज में वैसी ही स्थिति थी।

अमरीका मे अब युग्म-परिवार ने पूरी तरह यूथ-विवाह का स्थान ले लिया है या नही, इसका निर्णय करने के लिये उत्तरी-पश्चिमी अमरीका की, और विशेषकर दक्षिणी अमरीका की उन जातियों का ज्यादा नजदीक से अध्ययन करना होगा, जो अभी तक जांगल युग की उन्नत अवस्था में ही है। इन जातियो मे यौन-स्वतंत्रता के इतने अधिक उदाहरण मिलते हैं कि उन्हे ध्यान मे रखते हुए, हम यह नहीं मान सकते कि इनमें यूथ-विवाह की पुरानी प्रथा पूरी तरह मिटा दी गयी है। बहरहाल अभी तक उसके सारे चिह्नों का लोप तो नही हो पाया है। उत्तरी अमरीका के कम से कम चालीस क़बीले ऐसे हैं, जिनमे, किसी भी परिवार की सबसे बड़ी लड़की से विवाह करनेवाले पुरुष को यह अधिकार होता है कि वह उसकी सभी बहनों को, जैसे ही वे पर्याप्त आय प्राप्त कर ले, अपनी पत्नी बना ले— यह बहनों के एक पूरे दल के सामूहिक पति होने की प्रथा का अवशेष है। और बैंक्रोफ्ट बताते हैं कि कैलिफोर्निया प्रायद्वीप के क़बीलो मे (जोकि जांगल युग की उन्नत अवस्था मे हैं) कुछ ऐसे त्योहार प्रचलित है, जिनमें कई "क़बीले" स्वच्छन्द मैथुन के लिए एक जगह जमा होते हैं।[40] जाहिर है कि वास्तव मे वे ऐसे गोत्र है जिन्हे ये त्योहार उन दिनो की धुंधली-सी याद दिलाते हैं, जबकि एक गोत्र के सभी पुरुष दूसरे गोत्र की सभी स्त्रियों के समान पति हुआ करते थे और इसी प्रकार एक गोत्र की सभी स्त्रिया दूसरे गोत्र के पुरुषों की समान पत्निया हुआ करती थीं। यह प्रथा आस्ट्रेलिया में अभी तक चली आती है। कुछ जातियो में ऐसा होता है कि अपेक्षाकृत

बूढे लोग, मुखिया और ओझा-पुरोहित आदि, सामूहिक पत्नियों की प्रथा को अपने मतलब के लिये इस्तेमाल करते हैं, और अधिकतर स्त्रियों पर अपना एकाधिकार कायम कर लेते हैं। परन्तु इन लोगों को भी कुछ विशेष उत्सव या बड़े मेलों के समय पुराने सामूहिक अधिकार की पुनःस्थापना की और अपनी पत्नियों को नौजवानों के साथ मौज करने की इजाज़त देनी पडती है। वेस्टरमार्क ने (अपनी पुस्तक के पृष्ठ २८–२९ पर) समय-समय पर होनेवाले ऐसे Saturnalia महोत्सवो[41] के अनेक उदाहरण दिये हैं, जिनमें प्राचीन काल के स्वच्छन्द मैथुन की थोड़े समय के लिये फिर स्वतंत्रता हो जाती थी। मिसाल के लिये, उन्होंने बताया है कि ऐसे उत्सव भारत के भी हो, सथाल, पजा और कौतार कबीलों में और अफ़्रीका की कुछ जातियों में भी होते हैं इत्यादि। अजीब बात यह है कि वेस्टरमार्क इन उत्सवो को यूथ-विवाहों का नहीं – वेस्टरमार्क यूथ-विवाह को नहीं मानते – बल्कि उस मैथुन-ऋतु का अवशेष मानते हैं जो आदिम मानव तथा अन्य पशुओ, दोनों के लिये समान है।

अब हम बाख़ोफ़ेन की चौथी बड़ी खोज पर आते है। हमारा मतलब यूथ-विवाह से युग्म-विवाह मे संक्रमण के व्यापक रूप से प्रचलित रूप से है। जिस चीज़ को बाख़ोफ़ेन ने देवताओ के प्राचीन आदेशो का उल्लंघन करने के अपराध का प्रायश्चित्त समझा – जिसके द्वारा स्त्री सतीत्व के अधिकार का मूल्य चुकाती है, – वह वास्तव में उस प्रायश्चित्त के रहस्यवादी स्वरूप से अधिक कुछ नही है, जिसकी कीमत देकर नारी बहुत-से पतियों की एकसाथ पत्नी होने के प्राचीन नियम से मुक्ति प्राप्त करती है, और अपने को केवल एक पुरुष को देने का अधिकार पाती है। यह प्रायश्चित्त सीमित आत्मसमर्पण के रूप मे होता है। बैबिलोनिया की स्त्रियों को साल मे एक बार मिलिटा के मंदिर मे जाकर पुरुषों से आत्मसमर्पण करना पड़ता था। मध्य पूर्व की दूसरी जातियों के लोग अपनी लडकियो को कई साल के लिए अनाइतिस के मंदिर मे भेज देते थे, जहा उन्हें अपनी पसन्द के पुरुषों के साथ स्वच्छन्द प्रणय-व्यापार करना पड़ता था और उसके बाद ही उन्हें विवाह करने की इजाज़त मिलती थी। भूमध्य सागर और गंगा नदी के बीच के इलाके मे रहनेवाली लगभग सभी एशियाई जातियों में धार्मिक आवरण से ढंके इसी प्रकार के रीति-रिवाज पाये जाते हैं। मुक्ति पाने के उद्देश्य से किया गया प्रायश्चित्त स्वरूप यह बलिदान कालांतर मे धीरे-धीरे कम कठिन होता जाता है, जैसा कि बाख़ोफ़ेन ने कहा है:

"पहले हर साल आत्मसमर्पण करना पड़ता था, अब एक बार आत्मसमर्पण करके काम चल जाता है। पहले विवाहिता स्त्रियों को हैटेरा होना पडता था, अब केवल कुमारियों को। पहले यह विवाह के दौरान होता था, अब विवाह के पहले। पहले बिना किसी भेदभाव के हर किसी के सामने आत्मसमर्पण करना पड़ता था, अब कुछ खास-खास व्यक्तियों के सामने आत्मसमर्पण करने से काम चल जाता है।" ('मातृ-सत्ता', पृष्ठ १९)।

दूसरी जातियों में धार्मिक आवरण भी नहीं है। प्राचीन काल के थ्रेसियावासियों, केल्ट आदि जातियों के लोगों में, भारत के बहुत-से आदिवासियों में, मलय जाति में, प्रशान्त महासागर के द्वीपों में रहनेवालों में और बहुत-से अमरीकी इंडियनों में तो आज भी विवाह के समय तक लड़कियों को अधिक से अधिक यौन-स्वतंत्रता रहती है। विशेष रूप से, पूरे दक्षिणी अमरीका में यह बात पायी जाती है। यदि कोई आदमी थोड़ा भी इस देश के अन्दरूनी हिस्सों में गया है, तो वह जरूर इस बात की गवाही दे सकता है। उदाहरण के लिये, वहां के इंडियन नस्ल के एक धनी परिवार के बारे में एगासिज ने (१८८६ में बोस्टन और न्यूयार्क से प्रकाशित अपनी पुस्तक 'ब्राजील की यात्रा' में पृष्ठ २६६ पर[43]) यह लिखा है कि जब परिवार की पुत्री से उसका परिचय कराया गया और उसने लड़की के पिता के विषय में पूछा, जो उसकी समझ में लड़की की मां का पति था, और पैरागुए के खिलाफ युद्ध में एक अफसर की हैसियत से सक्रिय भाग ले रहा था, तो मां ने मुस्कराते हुए जवाब दिया: naõ tem pai, é filha da fortuna, अर्थात् "इसका पिता नहीं है, यह तो संयोग की संतान है।"

"इंडियन या दोगली नस्ल की स्त्रियां अपनी जारज संतान के बारे में यहां सदा इसी ढंग से जिक्र करती हैं। इसमें कोई दोष-पाप या लज्जा की बात है, इसकी उनमें तनिक भी चेतना नहीं दिखायी देती। यह इतनी साधारण बात है कि इसकी उल्टी बात ही अपवाद मालूम पड़ती है।" (प्रायः) "बच्चे" (केवल) "अपनी मां के बारे में ही जानते हैं, क्योंकि उनकी परवरिश की पूरी ज़िम्मेदारी मां पर ही पड़ती है। बच्चों को अपने पिता का कोई ज्ञान नहीं होता, और न ही शायद स्त्री को कभी यह ख़याल होता है कि उसका या उसके बच्चों का उस पुरुष पर कोई दावा है।"

सभ्य मानव को यहां जो कुछ इतना अजीब लग रहा है, वह वास्तव मे केवल मातृ-सत्ता तथा यूथ-विवाह के नियमो का परिणाम है।

कुछ और जातियों में वर के मित्र और सम्बन्धी, या विवाह मे आये हुए अतिथि, विवाह के समय ही वधू पर अपने परम्परागत पुराने अधिकार का इस्तेमाल करते है, और वर की बारी सब के अन्त में आती है। मिसाल के लिये, प्राचीन काल में वलियारिक द्वीपों मे, अफ़्रीका की औजिल जाति मे, और एबीसीनिया की बारिया जाति मे आजकल भी यही चलन है। कुछ और जातियो मे एक अधिकारी व्यक्ति–कबीले या गोत्र का प्रमुख, कामिक, शमन, पुरोहित, राजा, या उसकी जो भी उपाधि हो, ऐसा कोई एक व्यक्ति–समुदाय के प्रतिनिधि के रूप में वधू के साथ सुहागरात के अधिकार का प्रयोग करता है। इस प्रथा को नव-रोमाचक रगो मे रंगने की चाहे जितनी कोशिश की जाये, पर इसमें सदेह नही कि अलास्का प्रदेश के अधिकतर आदिवासियों मे (बैंक्रोफ़्ट, 'आदिवासी नस्लें', भाग १, पृष्ठ ८१), उत्तरी मैक्सिको के ताहू लोगों मे (वही, पृष्ठ ५८४), और कुछ अन्य जातियों मे यह jus primae noctis* यूथ-विवाह के अवशेप के रूप मे आज भी पाया जाता है। और पूरे मध्य युग मे, कम से कम उन देशों में, जहा शुरू मे कैल्ट जाति के लोग रहते थे, यह प्रथा, जो वहां सीधे-सीधे यूथ-विवाह से निकली थी, प्रचलित थी। इसका एक उदाहरण आरागों प्रदेश है। जबकि कैस्टील में किसान कभी भूदास नही रहा, आरागों में एक अत्यन्त गर्हित भूदास-प्रथा प्रचलित थी, और वह उस समय तक कायम रही जब तक कि १४८६ मे फर्दीनांद कैथोलिक ने एक फरमान जारी कर उसे ख़तम नही कर दिया।[43] इस फरमान मे कहा गया है:

"हम फैसला देते है और ऐलान करते है कि यदि कोई किसान किसी औरत से विवाह करता है तो ऊपर जिन लार्डों" (senyors, बैरनों) "का जिक्र किया गया है... वे पहली रात उसके साथ नहीं सोयेंगे, न वे शादी की रात को औरत के सोने चले जाने के बाद अपने अधिकार के प्रतीकस्वरूप उसके बिस्तर पर और उसके ऊपर आसन जमायेंगे। न ही ये लार्ड किसान के बेटे-बेटियों से, मजूरी

---

* सुहागरात का अधिकार।–सं०

देकर या बिना मजूरी के, उनकी मर्जी के खिलाफ काम लेंगे।" (जुगेनहाइम की पुस्तक 'भूदास-प्रथा', पीटर्सबर्ग, १८६१, के मूल कैटेलोनियन संस्करण में उद्धृत, पृष्ठ ३५।[44])

बाखोफेन का यह तर्क भी बिलकुल सही है कि जिस अवस्था को उन्होंने "हैटेरिज्म" अथवा Sumpfzeugung का नाम दिया है, उससे एकनिष्ठ विवाह मे संक्रमण मुख्यतः नारी के ही हाथों सम्पन्न हुआ था। जीवन की आर्थिक परिस्थितियों के विकास के फलस्वरूप, अर्थात् आदिम सामुदायिक व्यवस्था के ध्वस के साथ-साथ तथा आबादी के अधिकाधिक घनी होते जाने के साथ-साथ, पुराने परम्परागत यौन-सम्बन्धों का भोलेपन से भरा हुआ आदिम, अकृत्रिम, वन्य स्वरूप जितना ही नष्ट होता गया, उतना ही ये सम्बन्ध नारियों को अपमानजनक और उत्पीड़क प्रतीत हुए होंगे, और इस अवस्था से निष्कृति के रूप मे सतीत्व के, एक पुरुष से ही अस्थायी अथवा स्थायी विवाह के अधिकार के लिये उतनी ही उनकी आकांक्षा बढ़ी होगी। पुरुषों की ओर से यह परिवर्तन कभी नही आ सकता था—और कुछ नही तो केवल इसलिये कि पुरुषों ने आज तक कभी भी वास्तविक यूथ-विवाह के मजों को व्यवहार मे त्यागने की बात सपने मे भी नही सोची है। स्त्रियों द्वारा युग्म-विवाह की प्रथा में संक्रमण सम्पन्न किये जाने के बाद ही पुरुष कड़ाई से एकनिष्ठ विवाह लागू कर सके—पर जाहिर है कि यह बंधन भी उन्होंने केवल स्त्रियों पर ही लगाया।

युग्म-परिवार ने जागल युग तथा बर्बर युग के सीमात पर जन्म लिया था। वह मुख्यतः जांगल युग की उन्नत अवस्था मे, और कही-कही बर्बर युग की निम्न अवस्था मे ही कही जाकर, उत्पन्न हुआ था। जिस प्रकार यूथ-विवाह जागल युग की विशेषता है और एकनिष्ठ विवाह सभ्यता के युग की, इसी प्रकार परिवार का यह रूप—युग्म-विवाह—बर्बर युग की विशेषता है। उसके विकसित होकर स्थायी एकनिष्ठ विवाह में बदल जाने के लिये आवश्यक था कि अभी तक हमने जिन कारणों को काम करते देखा है, उनसे कुछ भिन्न कारण मैदान में आयें। युग्म-परिवार मे यूथ घटते-घटते अपनी अन्तिम इकाई मे बदल गया था और नारी तथा पुरुष इन दो परमाणुओं से बना एक अणु रह गया था। नैसर्गिक वरण ने सामूहिक विवाह के दायरे को घटाते-घटाते अपना काम पूरा कर दिया था; इस दिशा में उसे और कुछ करना बाकी न था। अब यदि कोई

5*

सामाजिक प्रेरक शक्ति हरकत मे न आती, तो कोई कारण न था कि युग्म-परिवार से परिवार का कोई नया रूप उत्पन्न होता। मगर ये नयी प्रेरक शक्तियां हरकत मे आने लगी।

अब हम युग्म-परिवार की क्लासिकीय भूमि अमरीका से विदा लेते है। हमारे पास इस नतीजे पर पहुंचने के लिये कोई सबूत नही है कि अमरीका मे परिवार का कोई और उन्नत रूप विकसित हुआ था, या कि अमरीका की खोज तथा उस पर क़ब्जा होने से पहले उसके किसी भी भाग मे नियमित एकनिष्ठ विवाह की प्रथा पायी जाती थी। परन्तु पुरानी दुनिया में इसकी उल्टी हालत थी।

यहा पशु-पालन तथा प्रजनन ने सम्पदा का एक ऐसा स्रोत खोल दिया था, जिसकी पहले कल्पना भी नही की गयी थी, और नये सामाजिक सम्बन्धों को जन्म दिया था। बर्बर युग की निम्न अवस्था तक मकान, कपड़े, कुघड जेवर और आहार उपलब्ध तथा तैयार करने के औज़ार : नाव, हथियार, बहुत मामूली ढंग के घरेलू बर्तन मात्र ही, स्थायी सम्पत्ति में गिने जाते थे। आहार हर रोज़ नये सिरे से प्राप्त करना पडता था। परन्तु अब घोडों, ऊंटों, गधों, गाय-बैलो, भेड़-बकरियों और सुअरो के रेवड़ों के रूप मे, गडरियों का जीवन बितानेवाले अग्रगामी लोगो को – भारत के पंचनद प्रदेश मे तथा गंगा नदी के क्षेत्र में तथा ओक्सस और जक्सारटिस नदियों के पानी से खूब हरे-भरे, आज से कही ज्यादा हरे-भरे घास के मैदानो मे रहनेवाले आर्यों को, और फ़रात तथा दजला नदियो के किनारे रहनेवाले सामी लोगों को – एक ऐसी सम्पदा मिल गयी थी जिसकी केवल ऊपरी देख-रेख और अत्यंत साधारण निगरानी करने से ही काम चल जाता था। यह सम्पदा दिन-दूनी रात-चौगुनी बढ़ती जाती थी और इससे उन्हें दूध तथा मास के रूप में अत्यधिक स्वास्थ्यकर भोजन मिल जाता था। आहार प्राप्त करने के पुराने सब तरीके अब पीछे छूट गये। शिकार करना, जो पहले जीवन के लिये आवश्यक था, अब शौक की चीज बन गया।

पर इस नयी सम्पदा पर अधिकार किसका था? शुरू में निस्सदेह उस पर गोत्र का अधिकार था। परन्तु पशुओं के रेवड़ों पर बहुत प्राचीन काल मे ही निजी स्वामित्व कायम हो गया होगा। यह कहना मुश्किल है कि तथाकथित प्रथम मूसा-खण्ड के लेखक को पिता इब्राहीम गाय-बैलो

और भेड-बकरियो के रेवड़ों के, एक कुटुम्ब-समुदाय के मुखिया होने के नाते स्वामी प्रतीत हुए थे या किसी गोत्र के वंशपरम्परागत प्रमुख होने के नाते। परन्तु एक बात निश्चित है और वह यह कि हम इब्राहीम को आधुनिक अर्थ में सम्पदा का स्वामी नहीं कह सकते। साथ ही यह बात भी निश्चित है कि प्रामाणिक इतिहास के आरम्भ में ही हम यह पाते हैं कि पशुओं के रेवड़, परिवार के मुखियाओं की अलग सम्पदा उसी तरह होते थे, जिस तरह बर्बर युग की कला-कृतियां, धातु के बर्तन, ऐश-आराम के सामान और अन्त में मानव-पशु यानी दास, मुखियाओं की अलग-अलग सम्पत्ति होते थे।

कारण कि अब दास-प्रथा का भी आविष्कार हो चुका था। बर्बर युग की निम्न अवस्था के लोगों के लिए दास व्यर्थ थे। यही कारण था कि अमरीकी इंडियन युद्ध में पराजित अपने शत्रुओं के साथ जो व्यवहार करते थे, वह इस युग की उन्नत अवस्था के व्यवहार से बिलकुल भिन्न था। पराजित पुरुषों को या तो मार डाला जाता था, या विजयी क़बीला उन्हें अपने भाइयो के रूप मे स्वीकार कर लेता था। स्त्रियों से या तो विवाह कर लिया जाता था या उन्हें भी, मय उनके बचे हुए बच्चो के, कबीले का सदस्य बना लिया जाता था। अभी मानव श्रम से इतना नहीं पैदा होता था कि श्रम करनेवाले के जीवन-निर्वाह के खर्च के बाद थोडा-बहुत बच भी रहे। परन्तु जब पशु-पालन होने लगा, धातुओ का इस्तेमाल होने लगा, बुनाई शुरू हो गयी और अन्त मे जब खेत बनाकर खेती होने लगी, तब स्थिति बदल गयी। जिस प्रकार पहले पत्नियां बडी आसानी से मिल जाती थी, पर बाद में उनको विनिमय-मूल्य प्राप्त हो गया था और वे खरीदी जाती थीं, उसी प्रकार बाद में, विशेषकर पशुओं के रेवड़ों के पारिवारिक सम्पदा बनाये जाने के बाद, श्रम-शक्ति भी खरीदी जाने लगी। परिवार उतनी तेजी से नही बढता था जितनी तेजी से रेवड़ बढते थे। रेवड़ की देख-रेख करने के लिये और आदमियों की जरूरत होती थी। युद्ध में बंदी बनाये गये लोग इस काम के लिये उपयोगी थे। इसके अलावा पशुओ की तरह उनकी भी नस्ल बढायी जा सकती थी।

इस प्रकार की सम्पदा जब एक बार परिवारो की निजी सम्पत्ति बन गयी और उसकी वहा खूब बढ़ती हुई, तो उसने युग्म-विवाह तथा मातृ-सत्तात्मक गोत्र पर आधारित समाज पर कठोर प्रहार किया।

के कारण परिवार मे एक नये तत्त्व का प्रवेश हो गया था। सगी मा के साथ-साथ अब प्रमाणित सगा बाप भी मौजूद था, जो शायद आजकल के बहुत-से "बापो" से अधिक प्रमाणित था। परिवार के अन्दर उस जमाने मे जिस श्रम-विभाजन का चलन था, उसके अनुसार आहार जुटाने और उसके लिये आवश्यक औजार तैयार करने का काम पुरुष का था, और इसलिये इन औजारो पर उसी का अधिकार होता था। पति-पत्नी अलग होते थे तो जिस प्रकार घर का सामान स्त्री के पास रहता था, उसी प्रकार पुरुष इन औजारों को अपने साथ ले जाता था। अतएव उस जमाने की सामाजिक रीति के अनुसार, आहार-संग्रह के इन नये साधनों का—यानी पशुओ का, और बाद मे श्रम के नये साधनो का, यानी दासों का भी—मालिक पुरुष हुआ। परन्तु, उसी समाज की रीति के अनुसार, पुरुष की संतान उसकी सम्पत्ति को उत्तराधिकार मे नही पाती थी। इस मामले मे स्थिति इस प्रकार थी।

मातृ-सत्ता के अनुसार, यानी जब तक कि वंश केवल स्त्री-परंपरा के अनुसार चलता रहा, और गोत्र की मूल उत्तराधिकार-प्रथा के अनुसार, गोत्र के किसी सदस्य के मर जाने पर उसकी सम्पत्ति पहले उसके गोत्र के सम्बन्धियो को मिलती थी। यह आवश्यक था कि सम्पत्ति गोत्र के भीतर ही रहे। शुरू में चूकि सम्पत्ति साधारण होती थी, इसलिये सम्भव है कि व्यवहार मे वह सबसे नजदीकी गोत्र-सम्बन्धियो को, यानी मा की तरफ के रक्त-सम्बन्धियो को मिलती रही हो। परन्तु मृत पुरुष के बच्चे उसके गोत्र के नही, बल्कि अपनी मां के गोत्र के होते थे। शुरू में अपनी मां के दूसरे रक्त-सम्बन्धियो के साथ-साथ बच्चों को भी मां की सम्पत्ति का एक भाग मिलता था, और शायद बाद मे, उस पर उनका पहला अधिकार मान लिया गया हो। परन्तु उन्हे अपने पिता की सम्पत्ति नही मिल सकती थी, क्योकि वे उसके गोत्र के सदस्य नही होते थे, और उसकी सम्पत्ति का उसके गोत्र के अन्दर रहना आवश्यक था। अतएव पशुओं के रेवड़ के मालिक के मर जाने पर, उसके रेवड़ पहले उसके भाइयो और बहनो को और बहनो के बच्चो को, या उसकी मौसियो के वंशजों को मिलते थे। परन्तु उसके अपने बच्चे उत्तराधिकार से वंचित थे।

इस प्रकार जैसे-जैसे सम्पत्ति बढ़ती गयी, वैसे-वैसे इसके कारण एक ओर तो परिवार के अन्दर नारी की तुलना मे पुरुष का दर्जा ज्यादा

महत्त्वपूर्ण होता गया, और दूसरी ओर पुरुष के मन में यह इच्छा जोर पकड़ती गयी कि अपनी पहले से मज़बूत स्थिति का फ़ायदा उठाकर उत्तराधिकार की पुरानी प्रथा को उलट दिया जाये, ताकि उसके अपने बच्चे हकदार हो सकें। परन्तु जब तक मातृ-सत्ता के अनुसार वंश चल रहा था, तब तक ऐसा करना असम्भव था। इसलिये आवश्यक था कि मातृ-सत्ता को उल्टा जाये, और यही किया गया। और यह करने में उतनी कठिनाई नहीं हुई जितनी आज मालूम पड़ती है। कारण कि यह क्रान्ति, जो मानवजाति द्वारा अब तक अनुभूत सबसे निर्णायक क्रांतियों में थी, गोत्र के एक भी जीवित सदस्य के जीवन मे किसी तरह का खलल डाले बिना सम्पन्न हो सकती थी। सभी सदस्य जैसे पहले थे, वैसे ही अब भी रह सकते थे। बस यह एक सीधा-सादा फ़ैसला काफी था कि भविष्य में गोत्र के पुरुष सदस्यों के वंशज गोत्र में रहेंगे और स्त्रियों के वंशज गोत्र से अलग किये जायेंगे, और उनके पिताओं के गोत्रों में शामिल कर दिये जायेंगे। इस प्रकार मातृक वंशानुक्रम तथा मातृक दायाधिकार की प्रथा उलट दी गयी और उसके स्थान पर पैतृक वंशानुक्रम तथा पैतृक दायाधिकार स्थापित हुआ। यह क्रांति सभ्य जातियों में कब और कैसे हुई, इसके बारे में हम कुछ नहीं जानते। यह पूर्णतः प्रागैतिहासिक काल की बात है। पर यह क्रांति वास्तव में हुई थी, यह इस बात से एकदम सिद्ध हो जाता है कि मातृ-सत्ता के जगह-जगह अनेक अवशेष मिले है, जिन्हें ख़ास तौर पर बाखोफ़ेन ने जमा किया है। यह क्रांति कितनी आसानी से हो जाती है, यह इस बात से प्रकट होता है कि अनेक इंडियन कबीलों में यह परिवर्तन अभी हाल मे हुआ है और अब भी हो रहा है। यहां यह क्रांति कुछ हद तक बढ़ती हुई दौलत और जीवन की परिवर्तित प्रणालियों (जंगलों से वृक्षविहीन घास के मैदानों मे स्थानान्तरण) के प्रभाव के कारण और कुछ हद तक सभ्यता तथा मिशनरियों के नैतिक प्रभाव के कारण हुई है। मिसौरी के आठ कबीलों में से छः मे पैतृक और दो में अब भी मातृक वंशानुक्रम तथा मातृक दायाधिकार कायम है। शौनी, मियामी और डेलावेयर क़बीलों मे यह रीति बन गयी है कि बच्चों को पिता के गोत्र के नामों मे से कोई एक नाम देकर उस गोत्र मे शामिल कर दिया जाता है, ताकि वे अपने पिता की सम्पत्ति के उत्तराधिकारी बन सकें। "मनुष्य की अन्तर्जात वाक्छल प्रवृत्ति, जिसके द्वारा वह वस्तुओं के नाम बदलकर स्वयं उन वस्तुओं को

बदलने की चेष्टा करता है! जब भी कोई प्रत्यक्ष हित पर्याप्त प्रेरणा प्रदान करता है, वह परम्परा को तोड़ने के लिये परम्परा के अन्दर छिद्र ढूंढ निकालता है।" (मार्क्स)[45] इसका परिणाम यह हुआ कि बेहद गड़बड़ी मच गयी और उसे ठीक करने का सिर्फ यह रास्ता रह गया कि मातृ-सत्ता की जगह पितृ-सत्ता कायम की जाये। ऐसा ही करके कुछ हद तक यह गड़बड़ी दूर भी की गयी। "कुल मिलाकर यह बहुत ही स्वाभाविक संक्रमण मालूम पड़ता है।" (मार्क्स)[46] जहां तक इस बात का सम्बन्ध है कि दुनिया की संस्कृत जातियों में यह परिवर्तन जिन तरीकों और उपायों से किया गया, उनके बारे में तुलनात्मक विधिशास्त्र के विशेषज्ञों का क्या कहना है—जाहिर है कि उनके मत प्रमेय मात्र हैं—पाठक म० कोवालेव्स्की की 'परिवार और सम्पत्ति की उत्पत्ति और विकास की रूपरेखा' नामक पुस्तक को देखें, जो स्टॉकहोम से १८६० में प्रकाशित हुई थी।[47]

मातृ-सत्ता का विनाश नारी जाति की विश्व-ऐतिहासिक महत्व की पराजय थी। अब घर के अन्दर भी पुरुष ने अपना आधिपत्य जमा लिया। नारी पदच्युत कर दी गयी। वह जकड़ दी गयी। वह पुरुष की वासना की दासी, संतान उत्पन्न करने का एक यंत्र मात्र बनकर रह गयी। वीर-काल के, और उससे भी अधिक क्लासिकीय काल के यूनानियों में नारी की यह गिरी हुई हैसियत खास तौर पर देखी गयी। बाद में धीरे-धीरे तरह-तरह के आवरणों से ढंककर और सजाकर, और आंशिक रूप में थोड़ी नरम शक्ल देकर, उसे पेश किया जाने लगा, पर वह कभी दूर नहीं हुई।

अब पुरुषों की जो एकमात्र सत्ता स्थापित हुई उसका पहला प्रभाव परिवार के एक अन्तरकालीन रूप—पितृसत्तात्मक परिवार की शक्ल—में प्रगट हुआ, जिसका उस काल में आविर्भाव हुआ। इस रूप की मुख्य विशेषता बहु-पत्नी विवाह नहीं थी—उसका तो हम आगे जिक्र करेंगे। उसकी मुख्य विशेषता यह थी कि

> "कई स्वतन्त्र तथा अधीन लोग परिवार के मुखिया की पितृ-सत्ता के अधीन एक परिवार में संगठित होते थे। सामी लोगों में इस परिवार के मुखिया के पास कई पत्नियां होती थीं, अधीन लोगों के पास पत्नी और बच्चे होते थे, और पूरे संगठन का उद्देश्य एक सीमित क्षेत्र के अन्दर पशुओं के रेवड़ों और ढोरों की देख-रेख करना होता था।"[48]

परिवार के इस रूप की सारभूत विशेषताएं अधीन लोगों का परिवार मे समावेश और पितृ-सत्ता थीं। अतएव परिवार के इस रूप का सबसे विकसित रूप रोमन परिवार है। शुरू में familia शब्द का अर्थ वह नही था जो हमारे आधुनिक कूपमंडूक का आदर्श है और जिसमे भावुकता और घरेलू कलह का सम्मिश्रण होता है। प्रारम्भ काल में रोमन लोगों के बीच इस शब्द मे विवाहित दम्पत्ति और उसके बच्चो का संकेत भी न था, वह केवल दासो का ही सूचक था। Famulus शब्द का अर्थ है घरेलू दास, और familia शब्द का अर्थ—एक व्यक्ति के सारे दासो का समूह। यहा तक कि गायस के समय मे भी familia, id est patrimonium (अर्थात् उत्तराधिकार) को लोग एक वसीयतनामे के द्वारा अपने वंशजों के लिये छोड़ जाते थे। रोमन लोगों ने एक नये सामाजिक संगठन का वर्णन करने के लिये इस नाम का आविष्कार किया था। उसमे उसके मुखिया के अधीन उसकी पत्नी, उसके बच्चे और कुछ दास होते थे, और रोमन पितृ-सत्ता के अन्तर्गत उसके हाथ मे इन लोगों की जिन्दगी और मौत का अधिकार होता था।

> "अतएव यह नाम लैटिन कबीलों की उस लौह आवेष्ठित पारिवारिक व्यवस्था से अधिक पुराना नही था, जिसने खेत बनाकर खेती करने की प्रथा के शुरू होने, दास-प्रथा के कानूनी बन जाने और साथ ही यूनानियों तथा (आर्य नस्ल के) लैटिन लोगों के अलग हो जाने के बाद जन्म लिया था।"[49]

मार्क्स ने इस वर्णन मे ये शब्द और जोड़े है कि "आधुनिक परिवार में न केवल दास-प्रथा (servitus) बल्कि भूदास-प्रथा भी बीज-रूप में निहित है, क्योकि परिवार का सम्बन्ध शुरू से ही खेती के काम-धंधे से रहा है। लघु रूप में इसमें वे तमाम विरोध मौजूद रहते है जो बाद में चलकर समाज मे और उसके राज्य मे बड़े व्यापक रूप से विकसित होते हैं।"[50]

परिवार के इस रूप से पता चलता है कि युग्म-परिवार का किस तरह एकनिष्ठ विवाह में संक्रमण हुआ। पत्नी के सतीत्व की रक्षा करने के लिये, यानी बच्चो के पितृत्व की रक्षा करने के लिये, नारी को पुरुष की निरंकुश सत्ता के अधीन बना दिया जाता है। वह यदि उसे मार भी डालता है, तो वह अपने अधिकार का ही प्रयोग करता है।

पितृसत्तात्मक परिवार के साथ हम लिखित इतिहास के क्षेत्र मे प्रवेश करते है, और यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसमे तुलनात्मक विधि शास्त्र हमारी बडी महायता कर सकता है। और सचमुच इस क्षेत्र में हम उसके कारण काफी प्रगति करने मे सफल हुए हैं। हम मक्सिम कोवालेव्स्की ('परिवार और सम्पत्ति की उत्पत्ति और विकास की रूपरेखा', स्टॉकहोम, १८६०, पृष्ठ ६०–१००) के आभारी हैं कि उन्होने यह बात साबित कर दी कि पितृसत्तात्मक कुटुम्ब-समुदाय (Hausgenossenschaft), जैसा कि उसे हम सर्बिया और बुल्गारिया के लोगों में आज भी zádruga (जिसका मतलब बिरादरी जैसी चीज है) या bratstvo (भ्रातृत्व) के नामों से चलता हुआ पाते हैं, और जो थोडे बदले हुए रूप में पूरब के लोगो मे भी मिलता है, यूथ-विवाह से विकसित होनेवाले मातृसत्तात्मक परिवार के और आधुनिक संसार के व्यक्तिगत परिवार के बीच की संक्रमणकालीन अवस्था है। कम से कम जहा तक पुरानी दुनिया की संस्कृत जातियो का – आर्यो तथा सामी लोगो का – सम्बन्ध है, यह बात साबित हो गयी मालूम पडती है।

इस प्रकार के कुटुम्ब-समुदाय का सबसे अच्छा उदाहरण आजकल हमें दक्षिणी स्लाव लोगो के zádruga के रूप में मिलता है। इसमे एक पिता के कई पीढियों के वशज और उनकी पत्निया शामिल होती है। ये सब लोग साथ-साथ एक घर मे रहते हैं, मिलकर अपने खेतो को जोतते हैं, एक समान भंडार से भोजन और वस्त्र प्राप्त करते हैं और इस्तेमाल के बाद जो चीजे बच रहती हैं, वे सब की सामूहिक सम्पत्ति होती हैं। इस समुदाय का प्रबंध घर के मुखिया (domàčin) के हाथ मे रहता है। वह बाहरी मामलो में समुदाय का प्रतिनिधित्व करता है, छोटी-मोटी चीजो को दे-ले सकता है, घर का हिसाब-किताब रखता है, और इन बातों तथा घर के काम-काज का नियमित रूप से संचालन करने के लिये जिम्मेदार समझा जाता है। घर के मुखिया का चुनाव होता है और यह भी जरूरी नही है कि वह कुटुम्ब का सबसे बूढा सदस्य हो। घर की औरतों और उनके काम का संचालन घर की मुखिया (domàčica) करती है, जो प्रायः domàčin की पत्नी होती है। लड़कियो के लिये वर चुनने मे उसका मत महत्त्वपूर्ण और प्रायः निर्णायक होता है। परन्तु फिर भी सर्वोच्च सत्ता कुटुम्ब-परिषद् के हाथ मे रहती है। कुटुम्ब के सभी बालिग लोग – पुरुष और नारी – इस परिषद् के सदस्य होते हैं। घर का मुखिया अपना

हिसाब इसी परिषद् के सामने रखता है। यह परिषद् ही तमाम महत्त्वपूर्ण सवालों को तय करती है, कुटुम्ब के सदस्यों के बीच न्याय करती है, और महत्त्वपूर्ण वस्तुओं, विशेषकर ज़मीन-जायदाद की ख़रीद-बिक्री आदि का निर्णय करती है।

करीब दस बरस पहले की ही बात है जब रूस में भी ऐसे बड़े-बड़े कुटुम्ब-समदायों के अस्तित्व का प्रमाण मिला था।[51] और अब तो यह बात आम तौर पर मानी जाती है कि रूस की लोक-परम्परा में इन समुदायों की जड़ें भी उतनी ही गहरी जमी हुई हैं जितनी obščina अथवा ग्राम-समुदाय की। रूसियों की सबसे प्राचीन विधि-संहिता में—यारोस्लाव के 'प्राव्दा' में[52]—इन समुदायों का उसी नाम (werwj) से जिक्र आता है, जिस नाम से डाल्मेशियन कानूनों में[53] आता है। और पोल तथा चेक लोगों की ऐतिहासिक दस्तावेज़ों में भी उनकी चर्चा मिलती है।

ह्य ूजलर के मतानुसार ('जर्मन अधिकार-प्रथाएं'[54]) जर्मन लोगों में भी आर्थिक इकाई शुरू में आधुनिक ढंग का व्यक्तिगत परिवार नहीं थी, बल्कि कुटुम्ब-समुदाय (Hausgenossenschaft) थी, जिसमें कई पीढ़ियां या कई वैयक्तिक परिवार, और अक्सर बहुत-से अधीन लोग भी शामिल होते थे। रोमन परिवार के इतिहास को देखने से उसका भी पूर्व रूप यही कुटुम्ब-समुदाय ठहरता है, और इसके परिणामस्वरूप अभी हाल में रोमन परिवार में घर के मुखिया की निरंकुश सत्ता और परिवार के बाक़ी सदस्यों की मुखिया की तुलना में अधिकारहीन स्थिति के विषय में प्रबल शंका प्रगट की गयी है। यह माना जाता है कि इस प्रकार के कुटुम्ब-समुदाय आयरलैंड के केल्ट लोगों में भी रहे हैं। फ़्रांस के निवेर्नाई प्रदेश में वे parçonneries के नाम से, फ़्रांसीसी क्रांति के समय तक मौजूद थे, और फ़्रांश-कोम्ते में तो वे आज भी नहीं मिटे हैं। लूहां (साओन तथा ल्वार) के इलाके में अब भी ऐसे अनेक बड़े-बड़े किसान घर देखने को मिलेंगे जिनके बीचों-बीच एक ऊंची छत का सामुदायिक हॉल होता है और उसके चारों ओर सोने के कमरे होते हैं जिनमें जाने के लिये छः-आठ सीढ़ियों के ज़ीने बने होते हैं और जिनमें एक ही परिवार की कई पीढ़ियां निवास करती हैं।

भारत में सामूहिक ढंग से खेती करनेवाले कुटुम्ब-समुदाय के अस्तित्व के बारे में नियार्कस ने[55] सिकन्दर महान् के समय में ही ज़िक्र किया था

और उसी इलाके मे, पंजाब मे और देश के पूरे उत्तर-पश्चिमी भाग मे, इस प्रकार के समुदाय आज भी पाये जाते है। काकेशिया मे खुद कोवालेव्स्की ऐसे समुदाय के अस्तित्व के साक्षी हैं। अल्जीरिया के क़बायलों में वह आज तक मौजूद है। कहा जाता है कि अमरीका में भी किसी समय इस प्रकार के समुदाय का अस्तित्व था। यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया जा रहा है कि जुरिता ने प्राचीन मैक्सिको के जिस calpullis[56] का वर्णन किया है, वह इसी ढंग का कुटुम्ब-समुदाय था। दूसरी ओर कूनोव ने (*Ausland*, १८९०,[57] अंक ४२-४४) काफी साफ तौर पर साबित कर दिया है कि विजय के समय पेरू में "मार्क" जैसा कोई सगठन था (और अजीब बात यह है कि इसे भी marca कहते थे), जिसमे खेती की जमीन के समय-समय पर बंटवारे की व्यवस्था थी, यानी जोत वैयक्तिक प्रकार की ही थी।

कुछ भी हो, भूमि पर सामूहिक स्वामित्व तथा सामूहिक जोत के साथ पितृसत्तात्मक कुटुम्ब-समुदाय का अब एक नया ही अर्थ प्रगट होता है जो पहले नही समझा गया था। अब इसमें कोई सन्देह नही रह गया है कि पुरानी दुनिया की संस्कृत तथा अन्य जातियों मे इस समुदाय ने मातृसत्तात्मक परिवार और व्यक्तिगत परिवार के बीच संक्रमणकालीन रूप मे बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। कोवालेव्स्की ने इससे भी आगे जाकर यह कहा है कि इसी संक्रमणकालीन अवस्था मे से ग्राम-समुदाय, अथवा मार्क-समुदाय भी निकला है, जिसमे लोग खेती अलग-अलग करते थे और खेती की और चरागाह की जमीन इनके बीच, शुरु में थोड़े-थोड़े निश्चित काल के लिये और बाद में स्थायी रूप से बाट दी गयी थी। लेकिन इसकी हम बाद में चर्चा करेंगे।

जहा तक इन कुटुम्ब-समुदायों के भीतर के पारिवारिक जीवन का सम्बन्ध है, हमें यह ध्यान मे रखना चाहिये कि कम से कम रूस मे घर के मुखिया के बारे मे यह प्रसिद्ध है कि वह घर की जवान औरतों के बारे में, खासकर अपनी बहुओं के बारे में अपनी हैसियत का बेजा फायदा उठाता है और घर को अक्सर हरम बना डालता है। रूसी लोक-गीतों में इस अवस्था की आपको स्पष्ट झलक मिलती है।

मातृ-सत्ता के विनाश के बाद बहुत तेजी से एकनिष्ठ विवाह का विकास हुआ। पर उसकी चर्चा करने के पहले हम बहु-पत्नी प्रथा तथा बहु-पति

प्रथा के बारे में कुछ और शब्द कहना चाहेंगे। यदि ये दोनों प्रथाएं किसी देश में साथ-साथ नहीं मिलती – और सर्वविदित है कि वे साथ-साथ नहीं मिलती हैं – तो जाहिर है कि विवाह के ये रूप केवल अपवाद के रूप में ही, इतिहास की विलास-वस्तुओं के रूप में ही, पाये गये हैं। सामाजिक संस्थायें जो भी रही हों, पुरुषों और स्त्रियों की संख्या अभी तक, मोटे तौर पर, सदा बराबर रही है। और चूंकि यह सम्भव नहीं है कि बहु-पत्नी प्रथा में अकेले बच गये पुरुष बहु-पति प्रथा में अकेली बच गयी स्त्रियों से संतोष कर लें, इसलिये जाहिर है कि इन दोनों प्रथाओं में से कोई भी, समाज में आम तौर पर प्रचलित नहीं हो सकती थी। वास्तव में तो पुरुषों द्वारा कई-कई पत्नियों को रखने की प्रथा स्पष्टतः दास-प्रथा से उत्पन्न हुई थी और केवल अपवादस्वरूप ही पायी जाती थी। सामी लोगों के पितृसत्तात्मक परिवार में, केवल कुलपति या अधिक से अधिक उसके दो-एक पुत्रों के पास, एक से अधिक पत्नियां होती थीं; परिवार के अन्य सदस्यों को एक-एक पत्नी से ही संतोष करना पड़ता था। समूचे पूरब में आज भी यही हालत है। बहु-पत्नी विवाह केवल धनिकों तथा अभिजात लोगों का विशेषाधिकार है, और ये पत्नियां मुख्यतः दासियों के रूप में ख़रीदी जाती हैं। आम लोगों के पास एक-एक पत्नी होती है। इसी प्रकार भारत और तिब्बत में बहु-पति प्रथा अपवादस्वरूप ही मिलती है, जिसकी यूथ-विवाह से उत्पत्ति सिद्ध करने के लिये, जो सचमुच बड़ी दिलचस्प चीज होगी, अभी और निकट से खोज करने की आवश्यकता है। इसमें शक नहीं कि व्यवहार में यह प्रथा मुसलमानों के हरमों की प्रथा से, जहां ईर्ष्या का राज रहता है, अधिक सह्य है। कम से कम भारत के नायर लोगों में तो निश्चय ही तीन-तीन, चार-चार, या उससे भी अधिक संख्या में पुरुषों के पास केवल एक पत्नी होती है, परन्तु उनमें प्रत्येक पुरुष को अधिकार होता है कि चाहे तो तीन या चार अन्य पुरुषों के साथ एक दूसरी पत्नी रखे, और इसी प्रकार तीसरी या चौथी पत्नी रखे। आश्चर्य की बात है कि मैक-लेनन ने इन विवाह-क्लबों को, जिनमें से पुरुष कई का एकसाथ सदस्य बन सकता था और जिनका मैक-लेनन ने खुद वर्णन किया है, *विवाह का एक नया रूप* – *क्लब-विवाह* – नहीं समझा। परन्तु क्लब-विवाह की यह प्रथा वास्तविक बहु-पति प्रथा नहीं है, बल्कि इसके विपरीत, जैसा कि जिरो-त्यूलों ने लक्ष्य किया है, यह यूथ-विवाह का एक विशेष (spezialisierte

रूप है, जिसमे पुरुषों की अनेक पत्नियां होती है और स्त्रियो के अनेक पति होने है।

४. एकनिष्ठ परिवार। ऊपर ही बताया जा चुका है कि परिवार का यह रूप, बर्बर युग की मध्यम तथा उन्नत अवस्थाओं के बीच के परिवर्तन के युग मे, युग्म-परिवार से उत्पन्न होता है; उसकी अंतिम विजय इस बात की एक सूचना थी कि सभ्यता का युग आरम्भ हो गया है। एकनिष्ठ परिवार पुरुष की सर्वोच्च सत्ता पर आधारित होता है। उसका स्पष्ट उद्देश्य ऐसे बच्चे पैदा करना होता है जिनके पितृत्व के बारे मे कोई विवाद न हो। यह इसलिये जरूरी होता है कि समय आने पर ये बच्चे अपने पिता के सीधे उत्तराधिकारियो के रूप मे उसकी दौलत विरासत में पा सकें। युग्म-विवाह से एकनिष्ठ परिवार इस माने में भिन्न होता है कि इसमें विवाह-सम्बन्ध कही ज्यादा दृढ होता है और दोनों में से कोई भी पक्ष उसे जब चाहे तब नही तोड़ सकता। अब तो नियम यह बन जाता है कि केवल पुरुष को ही विवाह के सम्बन्ध को तोड़ देने और अपनी पत्नी को त्याग देने का अधिकार होता है। अपनी पत्नी के प्रति वफादार न रहने का उसका अधिकार अब भी कायम रहता है, कम से कम रीति-रिवाज इस अधिकार को मान्यता प्रदान करते है (Code Napoléon[58] मे तो साफ तौर पर पति को यह अधिकार दिया गया है बशर्ते कि वह अपनी रखैल को अपने घर के अन्दर न लाये) और समाज के विकास के साथ-साथ पुरुष इस अधिकार का अधिकाधिक प्रयोग करता है। परन्तु यदि पत्नी प्राचीन यौन-सम्बन्धों की याद करके उन्हे फिर से लागू करना चाहे, तो उसे पहले से भी अधिक सख्त सज़ा दी जाती है।

परिवार के इस नये रूप को, ऐसी हालत मे जब उसमे ज़रा भी नर्मी नही रह गयी है, हम यूनानियों के बीच देखते हैं। जैसा कि मार्क्स ने कहा था यूनानियो की पुराण-कथाओ में देवियो का जो स्थान है, वह उस पूर्व काल का प्रतिनिधित्व करता है, जब स्त्रियों की स्थिति अधिक सम्मानप्रद और स्वतन्त्र थी।[59] परन्तु वीर-काल मे ही हम यूनानी स्त्रियो को, पुरुष की प्रधानता और दासियों की होड़ के कारण, निरादृत पाते है। 'ओडीसी' में आप पढ़ेंगे कि टेलेमाकस किस प्रकार अपनी मां को डांटकर चुप कर देता है[60]। होमर की रचनाओ मे यह वर्णन मिलता है कि जब कभी युवतियां युद्ध में पकड़ी जाती है तो वे विजेताओं की काम-लिप्सा का शिकार बनती

है। विजयी सेना के नायक अपने पदों के क्रमानुसार सबसे सुन्दर युवतियों को अपने लिये छाट लेते हैं। मालूम है कि 'इलियाड' महाकाव्य की पूरी कथा-वस्तु का केन्द्रीय तत्त्व ऐसी ही एक दासी के बारे में एकिलस और एगामेम्नोन का झगड़ा है। होमर की रचनाओं मे प्रत्येक महत्त्वपूर्ण नायक के सम्बन्ध मे एक ऐसी बंदिनी युवती का जिक्र आता है, जो उसकी हमबिस्तर है और हमसफर भी। इन युवतियों को उनके मालिक अपने घर ले जाते हैं, जहा उनकी विवाहिता पत्नियां होती हैं, जैसे कि ईस्खिलस का एगामेम्नोन कसाड्रा को अपने घर ले गया था।[61] इन दासियों से जो पुत्र पैदा होते हैं, उनको पिता की जायदाद मे से एक छोटा-सा हिस्सा मिल जाता है और वे स्वतन्त्र नागरिक समझे जाते हैं। टेलामोन का एक ऐसा ही जारज पुत्र ट्यूक्रोस है, जिसे अपने पिता का नाम ग्रहण करने की इजाजत दी गयी। विवाहिता पत्नी से उम्मीद की जाती थी कि वह इन सारी बातों को चुपचाप सहन करेगी और खुद कठोर पतिव्रत्यधर्म का पालन करेगी तथा पतिपरायण रहेगी। यह सच है कि वीर-काल मे यूनानी पत्नी का, सभ्यता के युग की पत्नी से अधिक आदर होता था। परन्तु पति के लिये उसका केवल यही महत्त्व था कि वह उसके वैध उत्तराधिकारियो की मा है, उसके घर की प्रमुख प्रबंधकर्त्री है और उसकी उन दासियो की दारोग़ा है जिनको वह जब चाहे, अपनी रखैल बना सकता है, और बनाता भी है। एकनिष्ठ परिवार के साथ-साथ चूंकि समाज मे दासता भी प्रचलित थी, और सुन्दर दासियां पूर्णतः पुरुष की सम्पत्ति होती थी, इसलिये एकनिष्ठ विवाह पर शुरू से ही यह छाप लग गयी कि वह केवल नारी के लिये एकनिष्ठ है, परन्तु पुरुष के लिये नही। और आज तक उसका यही स्वरूप चला आता है।

जहां तक वीर-काल के बाद के यूनानियो का सवाल है, हमें डोरियनों और आयोनियनो मे भेद करना चाहिए। कई बातो मे डोरियन लोगो मे, जिनकी क्लासिकीय मिसाल स्पार्टा है, होमर द्वारा वर्णित वैवाहिक सम्बन्धों से भी अधिक प्राचीन सम्बन्ध मिलते है। स्पार्टा में हम एक ढंग का युग्म-विवाह पाते है, जिसे वहां के राज्य ने प्रचलित विचारो के अनुसार थोड़ा परिवर्तित कर दिया था। युग्म-विवाह का वह एक ऐसा रूप है जिसमें यूथ-विवाह के भी अनेक अवशेष मिलते है। जिस विवाह से सन्तान नही थी, उसे भंग कर दिया जाता था। राजा एनाक्सनड्रिडस ने (६५० -

के लगभग) एक दूसरा विवाह किया क्योंकि उसकी पहली पत्नी से सन्तान नही हुई थी और इस प्रकार दो गृहस्थियां कायम रखी। इसी काल के एक और राजा एरिस्टोन ने अपनी पहली दो बांझ पत्नियों के अलावा एक तीसरी स्त्री से विवाह किया था, परन्तु उसने पहली दो पत्नियों में से एक को अपने यहा से चले जाने दिया था। दूसरी ओर, कई भाई मिलकर एक सामूहिक पत्नी भी रख सकते थे। यदि किसी को अपने मित्र की पत्नी पसन्द आ जाती थी तो वह उसमे हिस्सा बंटा सकता था। और बिस्मार्क के शब्दो मे, किसी कामुक "सांड़" के आ जाने पर, यदि वह सह-नागरिक नही हो तो भी, अपनी पत्नी को उसके उपभोग के लिये प्रस्तुत करना उचित समझा जाता था। शोमान के अनुसार प्लुटार्क की वह कथा जिसने स्पार्टा की एक स्त्री अपने एक प्रेमी को, जो उसके पीछे पडा हुआ था, अपने पति से बात करने को भेज देती है, और भी अधिक यौन-स्वतन्त्रता की ओर इंगित करती है।[62] इस प्रकार वास्तविक व्यभिचार, यानी पति की पीठ पीछे पत्नी का किसी और पुरुष के साथ यौन-सम्बन्ध, उन दिनों सुनने मे भी नही आता था। दूसरी ओर, स्पार्टा मे, कम से कम उसके उत्कर्ष काल मे, घरेलू दास-प्रथा नही थी। स्पार्टियेटो को हीलोटों[63] की स्त्रियों के साथ सम्भोग करने का कम प्रलोभन होता था, क्योंकि वे अलग बस्तियों मे रहते थे। और यदि इन सब परिस्थितियो मे स्पार्टा की नारियां यूनान की और सब नारियो से अधिक सम्मान और आदर की पात्र समझी जाती थी, तो यह स्वाभाविक था। प्राचीन युग के लेखक, यूनानी स्त्रियो मे केवल स्पार्टा की नारियों और एथेंस की हैटेराओ को ही इस काबिल समझते थे कि उनका ज़िक्र आदर के साथ करे और उनकी उक्तियो को अपनी रचनाओ में स्थान दें।

आयोनियन लोगो मे – जिनका लाक्षणिक उदाहरण एथेंस था – हालत बिलकुल भिन्न थी। वहां लड़कियो को केवल कातना-बुनना और सीना-पिरोना सिखाया जाता था। बहुत हुआ तो वे थोड़ा पढ़ना-लिखना भी सीख लेती थी। उन्हे करीब-करीब पर्दे में रखा जाता था और वे केवल दूसरी स्त्रियो से ही मिल-जुल सकती थी। जनानखाना घर का एक खास और अलग हिस्सा होता था, जो आम तौर पर ऊपर की मंजिल पर या मकान के पिछले हिस्से मे होता था, जहां पुरुषो की, ख़ास तौर पर अजनबियों की, आसानी से पहुंच न हो सकती थी। जब मेहमान आते,

ग्रौरतें वहा चली जाती थीं। स्त्रियां ग्रकेले ग्रौर बिना एक दासी को साथ लिये बाहर नहीं जाती थी। घर मे उन पर लगभग पहरा-सा रहता था। एरिस्टोफेनस कहता है कि व्यभिचारियो को पास न फटकने देने के लिये मोलोस्सियन कुत्ते घर मे रखे जाते थे,[64] ग्रौर कम से कम एशिया के शहरों मे ग्रौरतों पर पहरा देने के लिये खोजे रखे जाते थे। हेरोडोटस के काल से ही कियोस द्वीप मे बेचने के लिये खोजे बनाये जाते थे। वाक्समुथ का कहना है कि वे केवल वर्बर लोगो[65] के लिये ही नही बनाये जाते थे। यूरिपिडीज़ मे पत्नी को oikurema[66] यानी गृह-प्रबंध के लिये एक वस्तु (यह शब्द नपुसक लिग का है) कहा गया है, ग्रौर बच्चे पैदा करने के सिवा, एक एथेंसवासी की दृष्टि मे पत्नी का महत्त्व इससे ग्रधिक कुछ नहीं था कि वह उसकी प्रमुख नौकरानी होती थी। पति ग्रखाड़े मे जाकर कसरत करता था, सार्वजनिक जीवन मे भाग लेता था, पर इस सब से पत्नी को ग्रलग रखा जाता था; इसके ग्रलावा उसके पास दासिया भी होती थीं, ग्रौर एथेंस के उत्कर्ष काल मे तो वहां बड़े व्यापक रूप में वेश्यावृत्ति भी होती थी। कम से कम यह तो कहा ही जा सकता है कि इसे राज्य की तरफ़ से बढावा मिलता था। इस वेश्यावृत्ति के ग्राधार पर ही यूनान का वह एकमात्र प्रसिद्ध नारी-वर्ग विकसित हुग्रा था जो ग्रपने बुद्धि-बल ग्रौर कला-प्रेम के कारण, प्राचीन काल की नारियो के साधारण स्तर से उतना ही ऊपर उठ गया था, जितना ऊपर स्पार्टा की नारियां ग्रपने चरित्र के कारण उठ गयी थी। एथेंस की पारिवारिक व्यवस्था पर इससे भयंकर इलजाम ग्रौर क्या लगाया जा सकता है कि नारी बनने के लिये पहले हैटेरा बनना पड़ता था।

कालान्तर मे एथेंस की यह पारिवारिक व्यवस्था न केवल दूसरे ग्रायोनियनो के लिये, बल्कि ख़ास यूनान मे रहनेवाले सभी यूनानियों के लिये ग्रौर यूनान के उपनिवेशो के लिये ग्रादर्श बन गयी, ग्रौर वे ग्रपने घरेलू सम्बन्धो को भी उसी साचे में ग्रधिकाधिक ढालने लगे। लेकिन तमाम पर्दे ग्रौर निगरानी के बावजूद यूनानी स्त्रिया ग्रपने पतियो को धोखा देने के काफी मौके ढूढ ही निकालती थीं। पति लोग – जिन्हे ग्रपनी पत्नियो के प्रति ज़रा-सा भी प्रेम प्रकट करने मे शर्म ग्राती थी – हैटेराग्रो के साथ विभिन्न प्रकार की प्रेम लीलाए किया करते थे। परन्तु नारी के पतन का खद पुरुष को बदला मिला ग्रौर वह भी पतन के गर्त में जा पड़ा। यहा

तक कि वह लड़कों के साथ अप्राकृतिक व्यभिचार करने की ओर प्रवृत्त हुआ और गैनीमीड की पुराण-कथा द्वारा उसने स्वयं अपने और अपने देवताओं को पतित किया।

प्राचीन काल के सर्वाधिक सभ्य और विकसित लोगों में, जहां तक हम उनकी खोज कर पाये हैं, एकनिष्ठ विवाह की उत्पत्ति इसी प्रकार हुई थी। यह किसी भी हालत में व्यक्तिगत यौन-प्रेम का परिणाम नहीं था, उसके साथ तो एकनिष्ठ विवाह की तनिक भी समानता नहीं है, क्योंकि इस प्रथा के प्रचलित होने के बाद भी विवाह पहले की ही तरह अपना लाभ देखकर किये जाते रहे। यह परिवार का वह पहला रूप था जो प्राकृतिक कारणों पर नहीं, बल्कि आर्थिक कारणों पर आधारित था—यानी जो प्राचीन काल की प्राकृतिक ढंग से विकसित सामूहिक सम्पत्ति के ऊपर व्यक्तिगत सम्पत्ति की विजय के आधार पर खड़ा हुआ था। यूनानी लोग तो खुलेआम स्वीकार करते थे कि एकनिष्ठ विवाह का उद्देश्य केवल यह था कि परिवार में पुरुष का शासन रहे और ऐसे बच्चे पैदा हों जो केवल उसकी अपनी सन्तान हों और जो उसकी सम्पत्ति के उत्तराधिकारी बन सकें। इन बातों के अलावा एकनिष्ठ विवाह केवल एक भार था जिसे ढोना पड़ता था; देवताओं के प्रति, राज्य के प्रति और पूर्वजों के प्रति एक कर्त्तव्य था जिसका पालन करना आवश्यक था। एथेंस में क़ानून के अनुसार न सिर्फ विवाह करना ज़रूरी था, बल्कि पुरुष द्वारा कुछ तथाकथित वैवाहिक कर्त्तव्यों का पालन करना भी आवश्यक था।

अतएव, एकनिष्ठ विवाह इतिहास में पुरुष और नारी का पुनःसामंजस्य होकर कदापि प्रगट नहीं हुआ। उसे पुरुष और नारी के पुनःसामंजस्य का उच्चतम रूप समझना तो और भी गलत है। इसके विपरीत एकनिष्ठ विवाह, नारी पर पुरुष के आधिपत्य के रूप में प्रगट होता है। एकनिष्ठ विवाह के रूप में पुरुषों और नारियों के एक ऐसे विरोध की घोषणा की गयी थी जिसकी मिसाल प्रागैतिहासिक काल में कहीं नहीं मिलती। मार्क्स की और अपनी एक पुरानी पाण्डुलिपि में, जो अभी तक प्रकाशित नहीं हुई है और जिसे हम लोगों ने १८४६ में लिखा था, मैं नीचे लिखा वाक्य पाता हूं: "सन्तानोत्पत्ति के लिये पुरुष और नारी के बीच श्रम-विभाजन ही पहला श्रम-विभाजन है।"[67] और आज मैं इसमें ये शब्द और जोड़ सकता हूं: इतिहास में पहला वर्ग-विरोध, एकनिष्ठ विवाह के अन्तर्गत पुरुष

और नारी के विरोध के विकास के साथ-साथ, और इतिहास का पहला वर्ग-उत्पीड़न पुरुष द्वारा नारी के उत्पीडन के साथ-साथ प्रगट होता है। इतिहास की दृष्टि से एकनिष्ठ विवाह आगे की ओर एक बहुत बड़ा कदम था, परन्तु इसके साथ-साथ वह एक ऐसा क़दम भी था जिसने दास-प्रथा और व्यक्तिगत धन-सम्पदा के साथ मिलकर उस युग का श्रीगणेश किया, जो आज तक चला आ रहा है और जिसमें प्रत्येक अग्रगति साथ ही सापेक्ष रूप से पश्चाद्‌गति भी होती है, जिसमें एक समूह की भलाई और विकास दूसरे समूह को दुख देकर और कुचलकर सम्पन्न होते हैं। एकनिष्ठ विवाह सभ्य समाज का वह कोशिका-रूप है जिसमे हम उन तमाम विरोधों और द्वन्द्वो का अध्ययन कर सकते हैं जो सभ्य समाज मे पूर्ण विकास प्राप्त करते है।

युग्म-परिवार की विजय से, या यहां तक कि एकनिष्ठ विवाह की विजय से भी, उनके पहले पायी जानेवाली यौन-सम्बन्धो की अपेक्षाकृत स्वतंत्रता नष्ट नही हुई।

> "प्रगति करते हुए परिवार को अब भी वह पुरानी विवाह-व्यवस्था घेरे रहती है, जो अब 'पुनालुग्रान' यूथों के धीरे-धीरे मिट जाने के कारण अधिक संकुचित परिधि के अन्दर सीमित हो गयी है, और वह विवाह-व्यवस्था परिवार के साथ-साथ सभ्यता के युग के द्वार तक पहुंच जाती है... अन्त मे वह हैटेरिज्म के नये रूप में तिरोहित हो जाती है, जो परिवार के साथ लगी हुई एक काली छाया के रूप मे सभ्यता के युग में भी मानवजाति के पीछे-पीछे चलती है।"[68]

यहा हैटेरिज्म से मौर्गन का मतलब विवाह के बंधन के बाहर पुरुषों और अविवाहिता स्त्रियों के बीच होनेवाले उस यौन-व्यापार से है, जो एकनिष्ठ विवाह के साथ-साथ चलता है, और जो जैसा कि सभी जानते हैं, सभ्यता के पूरे युग मे भिन्न-भिन्न रूपो मे फूलता-फलता रहा है और खुली वेश्यावृत्ति के रूप मे निरन्तर विकसित होता रहा है। इस हैटेरिज्म का सीधा सम्बन्ध यूथ-विवाह से है, उसका सीधा सम्बन्ध स्त्रियों के अनुष्ठानात्मक आत्मसमर्पण की प्रथा से है जिसके द्वारा वे सतीत्व का अधिकार प्राप्त करने का मूल्य चुकाती थी। रुपया लेकर आत्मसमर्पण करना— यह शुरू में एक धार्मिक कृत्य था जो प्रेम की देवी के मन्दिर मे किया जाता था और जिससे मिलनेवाला रुपया मन्दिर के कोष मे चला जाता था। आर्मीनिया में अनाइतिस और कोरिन्थ में एफ़्रोडाइट की हायरोड्यूले[69] और

भारत के मन्दिरो की देवदासियां जिन्हें Bayader भी कहते हैं (यह पुर्तगाली भाषा के bailadeira शब्द का बिगड़ा हुआ रूप है, जिसका अर्थ नर्त्तकी है) इतिहास की पहली वेश्यायें थीं। यह अनुष्ठानात्मक आत्मसमर्पण पहले सभी स्त्रियों के लिए अनिवार्य था। बाद में मन्दिरो की ये पुजारिनें ही, सभी स्त्रियों की तरफ से, आत्मसमर्पण करने लगीं। दूसरी जातियो मे हैटेरिज्म विवाह के पहले लडकियो को दी गयी यौन-स्वतंत्रता से उत्पन्न होता है। इस प्रकार वह भी यूथ-विवाह का ही एक अवशेष है, बस अन्तर इतना है कि वह एक भिन्न मार्ग से हमारे पास तक आया है। सम्पत्ति को लेकर समाज में भेदो के उत्पन्न होने के साथ-साथ—यानी बर्बर युग की उन्नत अवस्था में ही—दास-श्रम के साथ-साथ कही-कही मजूरी पर किया जानेवाला श्रम भी दिखायी देने लगा था। और इससे अनिवार्यतः सह-सम्बद्ध रूप मे, दासियो के समर्पण के साथ-साथ, जिसमे उनकी मर्जी का सवाल न था, कही-कही स्वतंत्र नारियो द्वारा वेश्यावृत्ति भी दिखायी देने लगी। अतएव, जिस प्रकार सभ्यता से उत्पन्न प्रत्येक वस्तु दोमुही, दोरुखी, अन्तर्विरोधी और स्वयं अपने अन्दर मुखालिफ तत्त्वो को लेकर चलनेवाली वस्तु होती है, उसी प्रकार यूथ-विवाह से सभ्यता को मिली विरासत के भी दो पहलू हैं: एक ओर एकनिष्ठ विवाह, दूसरी ओर हैटेरिज्म, और उसका चरम रूप—वेश्यावृत्ति। अन्य सभी सामाजिक प्रथाओं की तरह हैटेरिज्म भी एक विशिष्ट सामाजिक प्रथा है। वह पुरानी यौन-स्वतंत्रता का ही एक सिलसिला है, लेकिन पुरुषो के लिए ही। हालांकि असल मे इस रूप को सहन ही नही किया जाता, बल्कि उसका विशेषकर शासक वर्गों द्वारा बड़े शौक और मजे से इस्तेमाल किया जाता है, ताहम शब्दो मे सदा उसकी निन्दा ही की जाती है। दरअसल इस निन्दा से, इस प्रथा का व्यवहार करनेवाले पुरुषो को कोई नुकसान नही होता है, उससे तो केवल नारियो को चोट पहुंचती है। वे समाज से बहिष्कृत की जाती है ताकि एक बार फिर समाज के बुनियादी नियम के रूप मे नारी पर पुरुष के पूर्ण प्रभुत्व की घोषणा की जाये।

लेकिन इससे स्वयं एकनिष्ठ विवाह के भीतर एक दूसरा अन्तर्विरोध पैदा हो जाता है। हैटेरिज्म की प्रथा द्वारा जिसका जीवन सुरभित है, उस पति के साथ-साथ उपेक्षित पत्नी होती है। जिस प्रकार आधा सेब खाने के बाद पूरा सेब हाथ में रखना असम्भव है, उसी प्रकार विरोध

के दूसरे पहलू के बिना पहले पहलू का होना भी नामुमकिन है। परन्तु यह मालूम होता है कि जब तक उनकी पत्नियों ने उन्हें सबक नही सिखाया, तब तक पुरुष ऐसा नही सोचते थे। एकनिष्ठ विवाह के साथ-साथ दो नये पात्र समाज के रंगमच पर स्थायी रूप से उतर आये: एक – पत्नी का प्रेमी यानी जार, दूसरा–जारिणी का पति। इसके पहले ये पात्र इतिहास में नहीं देखे गये थे। पुरुषों ने नारियों पर विजय प्राप्त की थी, किन्तु विजेता के माथे पर टीका लगाने का काम पराजित ने बडी उदारतापूर्वक अपने हाथ मे लिया था। व्यभिचार, परस्त्रीगमन पर प्रतिबंध था, उसके लिये सख्त सजा मिलती थी, पर फिर भी वह दबाया नही जा सकता था। वह एकनिष्ठ विवाह और हैटेरिज्म के साथ-साथ एक लाजिमी सामाजिक रिवाज बन गया था। पहले की तरह अब भी बच्चों के पितृत्व का निश्चित होना केवल नैतिक विश्वास पर आधारित था, और किसी भी तरह हल न होने-वाले इस अन्तर्विरोध को हल करने के लिये Code Napoléon की धारा ३१२ मे यह विधान किया गया था:

> L'enfant conçu pendant le mariage a pour père le mari–
> "विवाह-काल में गर्भ-धारण होने पर पति को बच्चे का पिता समझा जायेगा।"

एकनिष्ठ विवाह-प्रथा के तीन हजार वर्ष तक चलने का अन्तिम परिणाम यही निकला था।

इस प्रकार, एकनिष्ठ परिवार के वे उदाहरण, जिनके द्वारा उसकी ऐतिहासिक उत्पत्ति सच्चे रूप में प्रतिबिम्बित होती है और जिनके द्वारा पुरुष के एकच्छत्र आधिपत्य से उत्पन्न पुरुष और नारी का तीखा विरोध साफ जाहिर होता है, हमारे सामने उन विरोधों और द्वंद्वों का चित्र लघु रूप मे पेश करते हैं, जिनमें से होकर सभ्यता के युग के प्रारम्भ से वर्गों मे बंटा हुआ समाज बढ रहा है, और जिन्हें वह कभी न तो हल कर पाता है और न दूर कर पाता है। जाहिर है कि मैं यहां एकनिष्ठ विवाह के केवल उन उदाहरणों का जिक्र कर रहा हूं जिनमें वैवाहिक जीवन सही माने में इस पूरी प्रथा के प्रारम्भिक स्वरूप के नियमों के अनसार चलता है, पर जिनमें पति के आधिपत्य के खिलाफ पत्नी विद्रोह करती है। लेकिन सब विवाहों मे ऐसा नही होता, यह जर्मन कूपमंडूक से अधिक और कौन

जानता है, जो न राज्य में शासन करने के योग्य है और न अपने घर में, और इसलिये जिसकी पत्नी पूर्ण औचित्य के साथ, शासन करती है जिसकी योग्यता पति में नही होती। परन्तु अपने को सान्त्वना देने के लिये वह यह कल्पना कर लेता है कि दु:ख के अपने फ्रांसीसी साथी से, जिसकी अधिकांश मामलो मे और भी अधिक दुर्गति होती है, वह फिर भी अच्छा है।

लेकिन एकनिष्ठ परिवार, हर जगह और हमेशा अपने उस क्लासिकीय कठोर रूप मे नही प्रगट हुआ, जिस रूप में वह यूनानियो में प्रगट हुआ था। संसार के भावी विजेताओं की हैसियत से, यूनानियों से कम परिष्कृत, पर कही अधिक दूरदर्शी दृष्टिकोण से काम लेनेवाले रोमन लोगो की स्त्रिया अधिक स्वतंत्र थी और उनका आदर भी अधिक होता था। रोमन पुरुष समझता था कि उसे चूंकि अपनी पत्नी के ऊपर जिन्दगी और मौत का अधिकार प्राप्त है, इसलिये वैवाहिक पवित्रता भली-भांति सुरक्षित है। इसके अलावा, पति के समान पत्नी को भी यह अधिकार था कि वह जब चाहे विवाह भंग कर दे। लेकिन एकनिष्ठ विवाह ने सबसे बडी उन्नति निश्चय ही उस समय की जब जर्मनो ने इतिहास में प्रवेश किया, क्योंकि लगता है कि उनमे, शायद उनकी गरीबी की वजह से, एकनिष्ठ विवाह अभी तक युग्म-विवाह की अवस्था से पूरी तरह नही निकल पाया था। टेसिटस द्वारा बतायी हुई तीन बातों से हम इस नतीजे पर पहुचते हैं। एक तो यह कि विवाह की पवित्रता में दृढ विश्वास के बावजूद – "प्रत्येक पुरुष केवल एक पत्नी से संतुष्ट है और स्त्रियों के चारों ओर उनके सतीत्व की दुर्लंघ्य दीवार है,"[70] – उच्च स्तर के पुरुष तथा कबीले के मुखिया कई-कई पत्नियां रखते थे, अर्थात् जर्मनो में भी अमरीकियों जैसी हालत थी, जिनमे कि युग्म-विवाह का चलन था। दूसरे, इन लोगो मे मातृ-सत्ता से पितृ-सत्ता मे अंतरण थोड़े दिन ही पहले सम्पन्न हुआ होगा, क्योंकि उनमें मामा – मातृ-सत्ता के अनुसार सबसे निकट का पुरुष गोत्र-सम्बन्धी – अब भी स्वयं पिता से अधिक निकट का सम्बन्धी माना जाता था। यह बात भी अमरीकी इंडियनो के दृष्टिकोण से मिलती है, जिनमे मार्क्स ने, जैसा कि वह अक्सर कहा करते थे, हमारे अपने प्रागैतिहासिक भूत-काल को समझने की कुजी पायी थी। और तीसरे, जर्मनो मे स्त्रियों का बडा आदर होता था और वे सार्वजनिक जीवन मे भी प्रभावशाली होती थी। यह बात पुरुष के आधिपत्य से, जोकि एकनिष्ठ विवाह की विशेषता है,

सीधे तौर पर टकराती थी। लगभग ये सारी बातें ऐसी हैं जिनमे जर्मन लोग स्पार्टावासियों से मिलते हैं, क्योंकि जैसा कि हम ऊपर देख चुके हैं, स्पार्टावासियों में भी युग्म-विवाह पूरी तरह नही मिटा था। अतएव जर्मनों के इतिहास के रंगमंच पर उतरने के साथ-साथ इस मामले मे भी, एक बिलकुल नये तत्त्व का संसार मे प्राधान्य स्थापित हो गया। रोमन संसार के ध्वंसावशेषों पर नस्लों के सम्मिश्रण से एकनिष्ठ विवाह का जो नया रूप विकसित हुआ, उसने पुरुष के आधिपत्य को कुछ कम कठोर रूप दिया और स्त्रियों को, कम से कम बाह्य जीवन में, प्राचीन क्लासिकीय युग से कहीं अधिक स्वतंत्र और सम्मानित स्थान प्रदान किया। इससे इतिहास मे पहली बार नैतिक प्रगति का वह सबसे बडा कदम उठाया जा सका, जो एकनिष्ठ विवाह के आधार पर और उसके कारण अभी तक उठाया जा सका है। हमारा मतलब आधुनिक व्यक्तिगत यौन-प्रेम से है, जो इसके पहले संसार मे कही नही देखा गया था। यह विकास कही पर एकनिष्ठ विवाह के भीतर हुआ, कहीं उसके समानान्तर हुआ और कही उसका विरोध करके हुआ।

परन्तु, इसमें कोई संदेह नही है कि इस विकास का उद्भव इस स्थिति से हुआ कि जर्मन लोग अब भी युग्म-परिवारों में रहते थे और जहा तक सम्भव था, उन्होंने नारी की तदनुरूप स्थिति को एकनिष्ठ विवाह पर आरोपित कर दिया। इसकी उत्पत्ति कदापि जर्मन मनोवृत्ति की अद्भुत नैतिक शुद्धता के कारण नही हुई, जो वास्तव मे इस बात तक सीमित थी कि व्यवहार में युग्म-परिवार के अन्दर वैसे भीषण नैतिक विरोध नही प्रगट होते थे, जैसे कि एकनिष्ठ विवाह मे होते हैं। इसके विपरीत, सच तो यह है कि जर्मन लोग देश से बाहर निकलने पर—विशेष रूप से दक्षिण-पूर्व में काले सागर की तटवर्त्ती स्तेपियों मे रहनेवाले बंजारों के बीच पहुंचकर—नैतिक दृष्टि से काफी पतित हो गये थे और बंजारों से जर्मनों ने घुड़सवारी सीखने के अलावा भयंकर अप्राकृतिक व्यभिचार भी सीख लिया था। इसकी बहुत साफ गवाही एमियानस ने ताइफालों के बारे में और प्रोकोपियस ने हेरुलों के बारे मे दी है।

यद्यपि एकनिष्ठ परिवार ही परिवार का वह एकमात्र ज्ञात रूप है जिससे आधुनिक यौन-प्रेम का विकास हो सकता था, तथापि इसका यह मतलब नही है कि इस प्रकार के परिवार के भीतर पति-पत्नी के पारस्परिक

प्रेम के रूप में, एकमात्र इस रूप में या अधिकतर इस रूप मे ही, – इस यौन-प्रेम का विकास हुआ। पुरुष के आधिपत्य के अंतर्गत कठोर एकनिष्ठ विवाह का पूरा रूप ही ऐसा था कि यह बात असम्भव थी। उन सभी वर्गों मे, जो ऐतिहासिक रूप से सक्रिय थे, यानी जो शासन करते थे, विवाह का सदा वही रूप रहा, जो युग्म-विवाह के समय से चला आ रहा था, यानी यह कि माता-पिता अपनी सुविधा से बच्चों का विवाह कर देते थे। इतिहास मे यौन-प्रेम का जो पहला रूप प्रगट हुआ, अर्थात् आवेग का रूप, ऐसे आवेग का, जिसका (कम से कम शासक वर्ग का) प्रत्येक व्यक्ति अधिकारी समझा जाता था, और जो यौन-भावना का सर्वोच्च रूप समझा जाता था – और यही उसकी ख़ास विशेषता होती है – वह पहला रूप मध्य युग के नाइटों का प्रेम था, जो किसी भी हालत में वैवाहिक प्रेम नही था। इसके विपरीत! प्रोवेंस प्रात के लोगों मे, जहा यह नाइटो का प्रेम अपने क्लासिकीय रूप मे विद्यमान था, उसने खुल्लमखुल्ला विवाहेतर प्रेम का रूप धारण किया। उनके कवि-गण खुलेआम इसके गीत गाते थे। Albas जर्मन में Tagelieder (उषा के गीत) प्रोवेंसीय प्रेम-काव्य[71] के उत्कृष्ट रूप हैं। इन गीतों मे हमें इसका बडा रंगीन वर्णन मिलता है कि नाइट किस प्रकार अपनी प्रेमिका के साथ, जो सदा किसी दूसरे पुरुष की पत्नी होती है, विहार करता है, और पहरेदार बाहर खड़ा पहरा देता रहता है और उषा की पहली धुंधली किरणो (alba) के फूटने पर उसे आवाज़ देता है ताकि किसी के देखने से पहले ही वह निकल जाये। इसके बाद विदाई के क्षण के वर्णन में कविता अपने चरम शिखर पर पहुंच जाती है। उत्तरी फ़्रांस के निवासियो ने, और उनके साथ-साथ हमारे योग्य जर्मनों ने भी, नाइटों के प्रेम के तौर-तरीकों के साथ-साथ उनके अनुकूल इस काव्य-शैली को भी अपना लिया, और हमारे अपने बुज़ुर्ग वोल्फ़ाम फ़ॉन एशनबाख़ ठीक इसी विषय पर तीन अत्यन्त सुन्दर उषा के गीत छोड़ गये, जो मुझे उनकी तीन लम्बी वीर रस की कविताओं से कहीं ज्यादा पसन्द हैं।

हमारे ज़माने के पूंजीवादी समाज मे विवाह दो तरह का होता है। कैथोलिक देशों मे पहले की तरह आज भी माता-पिता अपने युवा पूंजीवादी पुत्र के लिये उपयुक्त पत्नी ढूंढ लेते हैं और उसका परिणाम स्वभावतः यह होता है कि एकनिष्ठ विवाह मे निहित अन्तर्विरोध पूरी तरह उभर

ग्राता है–पति जमकर हैटेरिज्म करता है और पत्नी जमकर व्यभिचार करती है। कैथोलिक चर्च ने निस्संदेह तलाक की प्रथा को केवल इसलिये ख़तम कर दिया कि उसे विश्वास हो गया था कि जैसे मृत्यु का दुनिया में कोई इलाज नही है, वैसे ही व्यभिचार का भी नही है। दूसरी ओर, प्रोटेस्टेंट देशों में यह नियम है कि पूजीवादी पुत्र को अपने वर्ग में से, कमोबेश आज़ादी के साथ, खुद अपने लिये पत्नी तलाश कर लेने की इजाज़त रहती है। अतएव, इन देशो मे विवाह का आधार कुछ हद तक थोड़ा-बहुत प्रेम हो सकता है, गो प्रेम हो या न हो, प्रोटेस्टेंटो के बगुलाभगती लोकाचार में माना यही जाता है कि पति-पत्नी मे प्रेम है। यहा पुरुष उतने सक्रिय रूप से गणिका-गमन नही करते, और स्त्री का परपुरुष से प्रेम करना भी उतना प्रचलित नही है। विवाह का चाहे जो भी रूप हो, पर चूकि वह किसी की प्रकृति नही बदल देता, और चूकि प्रोटेस्टेंट देशों के नागरिक अधिकतर कूपमंडूक होते हैं, इसलिये यदि हम सबसे अच्छे उदाहरणों का औसत निकालें, तो यह पायेंगे कि इस प्रोटेस्टेंट एकनिष्ठ विवाह में पति-पत्नी ऊबा हुआ निरानन्द जीवन, जिसे गृहस्थ-जीवन का परमानन्द कहकर पुकारते हैं, बिताते हैं। विवाह के इन दो रूपों की सबसे अच्छी झलक उपन्यासों में मिलती है–कैथोलिक विवाह को समझना हो, तो फ़ांसीसी उपन्यास पढिए और प्रोटेस्टेंट विवाह का असली स्वरूप देखना हो, तो जर्मन उपन्यास पढ़िए। दोनों में पुरुष को "प्राप्ति हो जाती है"। जर्मन उपन्यास में युवक को लडकी प्राप्त होती है, फ़ासीसी उपन्यास मे पति को जारिणी-पति का पद प्राप्त होता है। दोनो मे से किसका हाल ज्यादा बुरा है, यह कहना हमेशा आसान नही होता। जर्मन उपन्यास की नीरसता फ़ांसीसी नागरिक को उतनी ही भयावनी लगती है, जितनी कि जर्मन कूपमंडूक को फ़ासीसी उपन्यास की "अनैतिकता"। हा, हाल मे, जब से "बर्लिन भी एक महानगर बन रहा है," तब से हैटेरिज्म और व्यभिचार के बारे में, जो बरसों से जर्मनी मे होते आये हैं, जर्मन उपन्यास पहले से कुछ कम भीरुता के साथ वर्णन करने लगे हैं।

परन्तु इन दोनों प्रकार के विवाहो में वर और वधू की वर्ग-स्थिति से ही विवाह का निश्चय होता है और इस हद तक वह सुविधा की चीज ही रहता है। और दोनों ही सूरतों मे सुविधा के विवाह की यह प्रथा अक्सर घोर वेश्या-प्रथा मे बदल जाती है। कभी-कभी दोनों ही पक्ष इस

प्रथा मे शरीक होते हैं, पर आम तौर पर पत्नी कही ज्यादा शरीक होती है। साधारण वेश्या और उसमे केवल यह अन्तर है कि मजूरी पर काम करनेवाले मजदूर की तरह, वह कार्यानुमार दर पर अपनी देह किराये पर नही उठाती, बल्कि एक ही बार मे सदा के लिये उसे बेचकर दासी बन जाती है। और फूरिये के ये शब्द सुविधा के सभी विवाहों के लिये सत्य हैं :

"व्याकरण मे जैसे दो नकारो के मिल जाने से एक सकार बन जाता है, ठीक उसी प्रकार विवाह की नैतिकता में वेश्याकर्म और वेश्यागमन के योग का फल सदाचार है।"[72]

पति-पत्नी के बीच यौन-प्रेम एक नियम के रूप में केवल उत्पीड़ित वर्गों में, अर्थात् आजकल केवल सर्वहारा वर्ग में ही, सम्भव हो सकता है, और होता भी है—चाहे इस सम्बन्ध को समाज मानता हो या न मानता हो। परन्तु यहा क्लासिकीय एकनिष्ठ विवाह की सारी बुनियाद ही ढह जाती है। जिस सम्पत्ति की रक्षा करने के लिये और उसे अपने पुत्रों को विरासत में सौंपने के लिये एकनिष्ठ विवाह और पुरुष के आधिपत्य की स्थापना की गयी थी, उसका यहां पूर्ण अभाव है। इसलिये पुरुष का आधिपत्य स्थापित करने के लिये यहां कोई प्रेरणा नही रहती। इससे भी बडी बात यह है कि इसके लिये साधन भी नही रहते। इस आधिपत्य की रक्षा करते हैं पूजीवादी कानून—परन्तु वे तो केवल मिल्की वर्गों के लिये और सर्वहाराओं के साथ उनके कारबार तय करने के लिये होते हैं। कानून की शरण लेने मे पैसा लगता है और पैसा मजदूर के पास नही होता। इसलिये अपनी पत्नी के साथ जहां तक उसके रवैये का सवाल है, मजदूर के लिये कानून मान्य नही है। यहा बिलकुल दूसरे ढंग के निजी और सामाजिक सम्बन्धों का निर्णायक महत्त्व होता है। इसके अतिरिक्त, बडे पैमाने के उद्योग ने चूंकि नारी को घर से निकालकर श्रम के बाज़ार में और कारखाने में लाकर खड़ा कर दिया है, और अक्सर उसे कुनबा-परवर बना दिया है, इसलिये सर्वहारा के घर में पुरुष के अधिपत्य के आखिरी अवशेषों का आधार भी पूरी तरह खतम हो जाता है। यदि कुछ बच रहता है तो स्त्रियों के प्रति वह क्रूरता, जो एकनिष्ठ विवाह की स्थापना के बाद से पुरुष की प्रकृति का एक अंग बन गया है। इस प्रकार, सर्वहारा परिवार

शुद्धतः एकनिष्ठ परिवार नहीं रह जाता, यहां तक कि उन सूरतों में भी, जहां पति-पत्नी में उत्कट प्रेम होता है और दोनों पक्ष एक दूसरे के प्रति बिलकुल वफादार होते है, और जहा चाहे उन्हें सांसारिक तथा आध्यात्मिक सारे सुख हों, वहा भी एकनिष्ठ विवाह का शुद्ध रूप नहीं मिलता। इसलिये एकनिष्ठ विवाह के सदा-सर्वदा साथ चलनेवाली उन दो प्रथाओं की – हैटेरिज्म और व्यभिचार की – यहां लगभग नगण्य भूमिका रह जाती है। यहां नारी ने वास्तव में पति से अलग हो जाने का अधिकार फिर से प्राप्त कर लिया है, और जब पुरुष और स्त्री साथ-साथ नही रह सकते, तो वे अलग हो जाना बेहतर समझते हैं। साराश यह कि सर्वहारा विवाह व्युत्पत्तिमूलक अर्थ मे एकनिष्ठ होता है, परन्तु ऐतिहासिक अर्थ में नहीं।

निस्सदेह हमारे न्याय-शास्त्रियों का यह मत है कि कानून बनाने मे जो प्रगति हुई है, उससे नारी के लिये शिकायत करने के कारण अधिकाधिक खतम होते गये हैं। कानून की आधुनिक सभ्य प्रणालियां इस बात को अधिकाधिक मानती जा रही हैं कि पहले तो, यदि विवाह को सफल होना है, तो आवश्यक है कि दोनो पक्ष स्वेच्छा से आपस मे विवाह करने के लिए राजी हो, और दूसरे यह कि विवाह-काल मे दोनों पक्षों के समान अधिकार और समान कर्त्तव्य होने चाहिये। परन्तु यदि इन दोनों सिद्धान्तो पर सचमुच पूरी तरह अमल किया जाये, तो नारियां जो कुछ चाहती हैं, वह सब उन्हे मिल जायेगा।

यह वकीलों जैसी दलील ठीक उसी प्रकार की दलील है जैसी दलीलें देकर उग्रवादी जनतंत्रवादी पूंजीपति सर्वहारा की दलीलों को ख़ारिज कर देता है। मजदूर और पंजीपति के बारे में भी तो यही माना जाता है कि उनके बीच श्रम-सविदा स्वेच्छा से की जाती है। परन्तु इस संविदा को स्वेच्छापूर्वक किया गया इसलिये समझा जाता है कि क़ानून की निगाह में काग़ज़ पर दोनो पक्ष समान हैं। एक पक्ष को अपनी भिन्न वर्ग-स्थिति के कारण जो शक्ति प्राप्त है, जो दबाव वह दूसरे पक्ष पर डाल सकता है, उससे, दोनो पक्षों की असली आर्थिक स्थिति से, कानून को कोई वास्ता नही है। और कानून की निगाह में तो जब तक यह संविदा बरक़रार है, और जब तक दोनों में से कोई एक पक्ष खुद अपने अधिकारो को नहीं त्याग देता, तब तक दोनों पक्षो के समान अधिकार रहते हैं। यदि वास्तविक आर्थिक परिस्थिति मजदूर के पास समान अधिकारों का कोई

चिह्न भी नही छोड़ती श्रौर उसे अपने सारे अधिकार त्याग देने को विवश कर देती है—तो इसमे कानून क्या कर सकता है!

जहा तक विवाह का सम्बन्ध है—प्रगतिशील से प्रगतिशील कानून भी बस इतनी-सी बात मे पूरी तरह संतुष्ट हो जाता है कि दोनो पक्ष जाकर सरकारी दफ़्तर मे यह दर्ज करा दें कि उन्होंने स्वेच्छा से विवाह किया है। कानून के पर्दे के पीछे जहां अमली जीवन चलता है, वहा क्या होता है, यह स्वैच्छिक संविदा किस प्रकार सम्पन्न होती है, इससे कानून को या क़ानून के पडितो को कोई गरज नही। श्रौर फिर भी, सचाई यह है कि कानून के पंडित यदि विभिन्न कानूनों की थोड़ी-सी भी तुलना करके देखें, तो उन्हे तुरन्त मालूम हो जायेगा कि इस स्वैच्छिक संविदा का वास्तविक अर्थ क्या है। उन देशो मे जहां कानून के अनुसार यह जरूरी है कि बच्चो को अपने माता-पिता की जायदाद का एक हिस्सा मिले, श्रौर जहा माता-पिता उनको यह हिस्सा देने से इनकार नही कर सकते—यानी जर्मनी मे, उन देशों में, जहा फ्रांसीसी कानून चलता है, आदि मे—वहा सन्तान को विवाह के मामले में माता-पिता की मंजूरी लेनी पड़ती है। जो देश अंग्रेजी क़ानन के मातहत हैं, उनमे क़ानन की दृष्टि से माता-पिता की रजामदी तो जरूरी नही है, परन्तु वहा माता-पिता को वसीयत के जरिए अपनी सम्पत्ति किसी के भी नाम लिख देने का, श्रौर यदि वे चाहें तो अपनी सन्तान को एक भी पैसा न देने का पूर्ण अधिकार होता है। अतएव यह स्पष्ट है कि जहां तक उन वर्गो का सम्बन्ध है, जिनके सदस्यो को अपने मा-बाप से कुछ सम्पत्ति मिलने को होती है उनमे, इसके बावजूद—बल्कि कहना चाहिए कि इसी कारण से—इंगलैंड श्रौर अमरीका मे, विवाह की स्वतंत्रता फ्रांस या जर्मनी से जरा भी अधिक नही है।

विवाहित अवस्था में, पुरुष श्रौर नारी की कानूनी समानता के बारे में भी स्थिति इससे अच्छी नहीं है। पुरानी सामाजिक परिस्थितियो की विरासत के रूप में स्त्री श्रौर पुरुष के बीच क़ानून की नजर मे जो असमानता है, वह स्त्रियों के आर्थिक उत्पीडन का कारण नही, बल्कि परिणाम है। पुराने सामुदायिक कुटुम्ब मे, जिसमें अनेक दम्पत्ति श्रौर उनकी संतानें शामिल होती थी, स्त्रियां घर का प्रबध किया करती थी, श्रौर यह काम उतना ही महत्त्वपूर्ण, सार्वजनिक श्रौर सामाजिक दृष्टि से आवश्यक उद्योग-धधा माना जाता था, जितना कि भोजन जुटाने का वह काम माना जाता

था जो पुरुषों को करना पडता था। पितृसत्तात्मक परिवार की स्थापना से यह परिस्थिति बदल गयी, और एकनिष्ठ वैयक्तिक परिवार की स्थापना के बाद तो और भी बडा परिवर्तन हो गया। घर का प्रबंध करने के काम का सार्वजनिक रूप जाता रहा। अब वह समाज की चिन्ता का विषय न रह गया। यह एक **निजी काम** बन गया। पत्नी को सार्वजनिक उत्पादन के क्षेत्र से निकाल दिया गया, वह घर की मुख्य दासी बन गयी। केवल बडे पैमाने के आधुनिक उद्योग ने ही उसके लिये—पर अब भी केवल सर्वहारा स्त्री के ही लिये—सार्वजनिक उत्पादन के दरवाज़े फिर खोले हैं, पर इस रूप में कि जब नारी अपने परिवार की निजी सेवा में अपना कर्त्तव्य पालन करती है, तब उसे सार्वजनिक उत्पादन के बाहर रहना पड़ता है और वह कुछ कमा नही सकती, और जब वह सार्वजनिक उद्योग मे भाग लेना और स्वतंत्र रूप से अपनी जीविका कमाना चाहती है, तब वह अपने परिवार के प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा करने की स्थिति मे नहीं होती। और जो बात कारखाने मे काम करनेवाली स्त्री के लिये सत्य है, वह डाक्टरी या वकालत करनेवाली स्त्री के लिये भी, यानी सभी तरह के पेशों मे काम करनेवाली स्त्रियों के लिए सत्य है। आधुनिक वैयक्तिक परिवार, नारी की खुली या छिपी हुई घरेलू दासता पर आधारित है। और आधुनिक समाज वह समवाय है जो केवल वैयक्तिक परिवारों के अणुओ से मिलकर बना है। आज अधिकतर परिवारों में, कम से कम मिल्की वर्गो मे, पुरुष को जीविका कमानी पड़ती है और परिवार का पेट पालना पड़ता है, और इससे परिवार के अन्दर उसका आधिपत्य क़ायम हो जाता है और उसके लिये किसी कानूनी विशेषाधिकार की आवश्यकता नही पड़ती। परिवार मे पति बुर्जुआ होता है, पत्नी सर्वहारा की स्थिति मे होती है। परन्तु उद्योग-धधो के संसार मे सर्वहारा जिस आर्थिक उत्पीड़न के बोझ के नीचे दबा हुआ है, उसका विशिष्ट रूप केवल उसी समय स्पष्ट होता है, जब पूजीपति वर्ग के तमाम क़ाननी विशेषाधिकार हटाकर अलग कर दिये जाते है और क़ानून की नजरों मे दोनों वर्गों की पूर्ण समानता स्थापित हो जाती है। जनवादी जनतन्त्र दोनों वर्गों के विरोध को मिटाता नही है, इसके विपरीत, वह तो उनके लिये लड़कर फ़ैसला कर लेने के वास्ते मैदान साफ कर देता है। इसी प्रकार आधुनिक परिवार मे नारी पर पुरुष के आधिपत्य का विशिष्ट रूप, और उन दोनो के बीच वास्तविक सामाजिक समानता स्थापित करने की

आवश्यकता तथा उसका ढंग, केवल उसी समय पूरी स्पष्टता के साथ हमारे सामने आयेंगे, जब पुरुष और नारी क़ानून की नजर मे बिलकुल समान हो जायेंगे। तभी जाकर यह बात साफ होगी कि स्त्रियो की मुक्ति की पहली शर्त यह है कि पूरी नारी जाति फिर से सार्वजनिक श्रम में प्रवेश करे, और इसके लिये यह आवश्यक है कि समाज की आर्थिक इकाई होने का वैयक्तिक परिवार का गुण नष्ट कर दिया जाये।

* * *

इस प्रकार, मोटे तौर पर मानव विकास के तीन मुख्य युगों के अनुरूप, हमे विवाह के भी तीन मुख्य रूप मिलते हैं: जांगल युग मे यूथ-विवाह, बर्बर युग मे युग्म-विवाह और सभ्यता के युग में एकनिष्ठ विवाह और उसके साथ जड़ा हुआ व्यभिचार तथा वेश्यावृत्ति। बर्बर युग की उन्नत अवस्था मे, युग्म-परिवार तथा एकनिष्ठ विवाह के बीच के दौर मे, हम दासियों पर पुरुषो का आधिपत्य, और बहुपत्नीत्व पाते हैं।

जैसा कि हमारे पूरे वर्णन से प्रकट होता है कि इस क्रम मे जो प्रगति होती है, उसके साथ यह खास बात जुड़ी हुई है कि स्त्रियो से तो यूथ-विवाह के काल की यौन-स्वतंत्रता अधिकाधिक छिनती जाती है, पर पुरुषो से नही छिनती। पुरुषों के लिये तो, वास्तव मे, आज भी यूथ-विवाह प्रचलित है। नारी के लिये जो बात एक ऐसा अपराध समझी जाती है जिसका भयानक सामाजिक और कानूनी परिणाम होता है, वही पुरुष के लिये एक सम्मानप्रद बात, या अधिक से अधिक एक मामली-सा नैतिक धब्बा समझा जाता है जिसे वह खुशी से सहन करता है। पुराने परम्परागत हैटेरिज्म को, माल का वर्त्तमान पूंजीवादी उत्पादन जितना ही बदलता और अपने रंग मे ढालता जाता है, यानी जितना ही वह खुली वेश्यावृत्ति मे परिणत होती जाती है, उतना ही समाज पर उसका अधिक ख़राब असर पड़ता है। और वह स्त्रियों से ज्यादा पुरुषो पर खराब असर डालती है। स्त्रियो में वेश्यावृत्ति केवल उन्ही अभागिनो को पतन के गढे मे धकेलती है जो उसके चंगुल मे फंस जाती हैं, और इन स्त्रियो का भी उतना पतन नही होता जितना आम तौर पर समझा जाता है। परन्तु दूसरी ओर, वेश्यावृत्ति सारे पुरुष संसार के चरित्र को बिगाड़ देती है। और इस प्रकार, दस मे से नौ उदाहरणो मे, विवाह के पहले सगाई की लंबी अवधि कार्यतः दाम्पत्य बेवफाई की ट्रेनिंग की अवधि बन जाती है।

अब हम एक ऐसी सामाजिक क्रांति की ओर अग्रसर हो रहे हैं जिसके परिणामस्वरूप एकनिष्ठ विवाह का वर्तमान आर्थिक आधार उतने ही निश्चित रूप से मिट जायेगा, जितने निश्चित रूप से एकनिष्ठ विवाह की पूरक, वेश्यावृत्ति का आर्थिक आधार मिट जायेगा। एकनिष्ठ विवाह की प्रथा एक व्यक्ति के–और वह भी एक पुरुष के–हाथों में बहुत-सा धन एकत्रित हो जाने के कारण, और उसकी इस इच्छा के फलस्वरूप उत्पन्न हुई थी कि वह *यह धन किसी दूसरे की सन्तान के लिये नहीं, केवल अपनी सन्तान* के लिये छोड़ जाये। इस उद्देश्य के लिये आवश्यक था कि स्त्री एकनिष्ठ रहे, परन्तु पुरुष के लिये यह आवश्यक नहीं था। इसलिये नारी की एकनिष्ठता से पुरुष के खुले या छिपे बहुपत्नीत्व में कोई बाधा नहीं पड़ती थी। परंतु आनेवाली सामाजिक क्रांति स्थायी दायाद्य धन-सम्पदा के अधिकतर भाग को–यानी उत्पादन के साधनों को–सामाजिक सम्पत्ति बना देगी और ऐसा करके अपनी सम्पत्ति को बच्चों के लिये छोड़ जाने की इस सारी चिन्ता को अल्पतम कर देगी। पर एकनिष्ठ विवाह चूंकि आर्थिक कारणों से उत्पन्न हुआ था, इसलिये क्या इन कारणों के मिट जाने पर वह भी मिट जायेगा?

इस प्रश्न का यदि कोई यह उत्तर दे तो वह शायद गलत न होगा: मिटना तो दूर, एकनिष्ठ विवाह तभी पूर्णता प्राप्त करने की ओर बढ़ेगा। कारण कि उत्पादन के साधनों के सामाजिक सम्पत्ति में रूपान्तरण के फलस्वरूप *उजरती श्रम, सर्वहारा वर्ग भी मिट जायेगा, और उसके साथ-*साथ यह आवश्यकता भी जाती रहेगी कि एक निश्चित संख्या में–जिस संख्या को हिसाब लगाकर बताया जा सकता है–स्त्रियां पैसे लेकर अपनी देह को पुरुषों के हाथों में सौंप दें। तब वेश्यावृत्ति का अन्त हो जायेगा, और एकनिष्ठ विवाह-सम्बन्ध मिटने के बजाय, पहली बार वास्तविकता बन जायेगा–पुरुषों के लिये भी बन जायेगा।

बहरहाल, तब पुरुषों की स्थिति में बहुत बड़ा परिवर्तन हो जायेगा। परन्तु स्त्रियों की, सभी स्त्रियों की स्थिति में भी महत्त्वपूर्ण परिवर्तन होगा। उत्पादन के साधनों के समाज की सम्पत्ति बन जाने से वैयक्तिक परिवार समाज की आर्थिक इकाई नहीं रह जायेगा। घर का निजी प्रबंध सामाजिक उद्योग-धंधा बन जायेगा। बच्चों का लालन-पालन और एक सार्वजनिक विषय हो जायेगा। समाज सब बच्चों का समान

पालन करेगा, चाहे वे विवाहित की सन्तान हों या अविवाहित की। इस प्रकार, आजकल सबसे ज्यादा जो बात किसी लड़की को उस पुरुष के सामने स्वतन्त्रतापूर्वक आत्मसमर्पण करने से रोकती है, जिसे वह प्यार करती है, यानी यह चिन्ता कि "इसका परिणाम क्या होगा" और जो ऐसे मामलों के लिये वर्तमान समाज में सबसे महत्त्वपूर्ण सामाजिक बात—नैतिक व आर्थिक दोनों ही—बन जाती है, वह चिन्ता तब बिलकुल नही रहेगी। प्रश्न उठ सकता है कि तब क्या इस बात के लिये काफ़ी आधार नही तैयार हो जायेगा कि धीरे-धीरे अनियंत्रित यौन-व्यापार बढ़ने लगे और उसके साथ-साथ कौमार्य-रक्षा, नारी-कलंक आदि के बारे मे जनमत अधिक उदार हो जाये? और अन्तिम बात यह कि क्या हम ऊपर यह नही देख चुके हैं कि आधुनिक संसार मे एकनिष्ठ विवाह और वेश्यावृत्ति एक दूसरे की उल्टी वस्तुएं होते हुए भी, एक ही सामाजिक परिस्थिति के दो छोर मात्र हैं और इसलिये एक दूसरे से अलग नही किये जा सकते? क्या यह सम्भव है कि वेश्यावृत्ति तो मिट जाये, पर वह अपने साथ एकनिष्ठ विवाह को न लेती जाये?

यहा एक नया तत्त्व काम करने लगता है। यह एक ऐसा तत्त्व है जो एकनिष्ठ विवाह के विकसित होने के समय यदि था तो केवल बीज-रूप मे ही था। हमारा मतलब व्यक्तिगत यौन-प्रेम से है।

मध्य-युग के पहले व्यक्तिगत यौन-प्रेम जैसी कोई वस्तु ससार मे नही थी। जाहिर है कि तब भी व्यक्तिगत सौन्दर्य, अंतरंग साहचर्य, समान रुचि, आदि से नारी और पुरुष मे परस्पर सम्भोग की इच्छा उत्पन्न होती थी, और उस वक़्त भी नर-नारी इस प्रश्न की ओर से बिलकुल उदासीन नही थे कि वे किस व्यक्ति के साथ यह सबसे अंतरंग सम्बन्ध स्थापित करते है। परन्तु उसमे और हमारे काल के यौन-प्रेम में बहुत अन्तर था। प्राचीन काल मे शादिया बराबर माता-पिता की इच्छा से होती थी; लड़के-लड़की चुपचाप उन्हें मान लेते थे। प्राचीन काल मे पति-पत्नी के बीच जो प्रेम थोड़ा-बहुत देखने मे आता था, वह मनोगत प्रवृत्ति नही, वरन् वस्तुगत कर्त्तव्य था, वह विवाह का कारण नही, उसका पूरक था। आधुनिक अर्थ मे प्रेम-व्यापार प्राचीन काल में केवल अधिकृत समाज से बाहर ही घटित होता था। थियोक्रिटस और मोसकस ने, या 'डाफनिस और क्लोए' में लागस ने जिन गड़रियों के प्रेम के गीत गाये है और जिनके 'विरह-मिलन

के दुख-सुख का वर्णन किया है, वे दास मात्र थे, उनका राज-काज में कोई भाग नहीं था, क्योंकि वह केवल स्वतंत्र नागरिकों का क्षेत्र था। दासों के सिवा, यदि कहीं प्रेम-व्यापार घटित होता था तो केवल पतनोन्मुख संसार के विघटन के फलस्वरूप ही होता था, और वह भी उन स्त्रियों के साथ होता था जो अधिकृत समाज के बाहर समझी जाती थीं—यानी हैटेराओं, अर्थात् विदेशी या स्वतंत्र कर दी गयी स्त्रियों के साथ होता था। एथेंस में यह बात उसके पतन के आरम्भ मे देखी गयी थी और रोम मे उसके सम्राटों के काल मे। स्वतंत्र नागरिको मे यदि कभी पुरुष और नारी के बीच सचमच प्रेम होता था, तो केवल विवाह का बधन तोड़कर व्यभिचार के रूप मे। प्राचीन काल मे प्रेम के उस प्रसिद्ध कवि, वृद्ध एनाक्रियोन को ही लीजिये। हमारे अर्थ मे यौन-प्रेम का उसके लिये इतना कम महत्त्व था कि वह इस बात तक से उदासीन था कि माशूक़ औरत है या मर्द।

प्राचीनकालीन सरल यौन-इच्छा, eros से, हमारा यौन-प्रेम बहुत भिन्न है। एक तो, हमारा यौन-प्रेम यह मानकर चलता है कि यह प्रेम दोतरफा है; जिससे प्रेम किया जाये उससे प्रेम मिलता भी है। इस तरह औरत का दर्जा मर्द के बराबर होता है, जबकि प्राचीनकालीन eros में औरत की हमेशा राय भी नही ली जाती थी। दूसरे, यौन-प्रेम इतना तीव्र और स्थायी रूप धारण कर लेता है कि दोनों पक्षों को लगता है कि यदि उन्होंने एक दूसरे को न पाया, या वे एक दूसरे से अलग रहे, तो यह यदि सबसे बड़ा नहीं, तो बहुत बड़ा दुर्भाग्य अवश्य होगा। एक दूसरे को पाने के लिये वे भारी ख़तरों का सामना करते हैं, यहा तक कि अपने जीवन को भी संकट मे डालने मे नही हिचकिचाते। प्राचीन काल में यह सब, अधिक से अधिक, केवल विवाहेतर यौन-व्यापार मे होता था। और अन्तिम बात यह है कि अब सम्भोग का औचित्य अथवा अनौचित्य एक नये नैतिक मानदंड से निश्चित होने लगता है। अब केवल यही सवाल नहीं किया जाता कि सम्भोग वैध है अथवा अवैध, बल्कि यह भी किया जाता है कि वह पारस्परिक प्रेम का परिणाम है या नही। कहने की आवश्यकता नही कि सामन्ती या पूंजीवादी व्यवहार में दूसरे नैतिक मानदंडों का जो हाल हुआ उससे बेहतर इस नये नैतिक मानदंड का नहीं हुआ—अर्थात् इसकी भी उपेक्षा कर दी गयी। परन्तु अगर उसका हाल बेहतर नहीं हुआ, तो बदतर भी नही हुआ। अन्य मानदंडों के समान यह मानदंड भी

रूप में, यानी काग़ज़ी तौर पर, सब को मान्य है। और इससे अधिक फिलहाल आशा भी नहीं की जा सकती।

जिस विन्दु पर प्राचीन काल में यौन-प्रेम की ओर प्रगति बीच में रुक गयी थी, मध्य काल में उस विन्दु से वह प्रारम्भ हुई। हमारा मतलब विवाहेतर प्रेम-व्यापार से है। नाइटों के प्रेम का हम ऊपर वर्णन कर चुके हैं जिसने "उषा के गीतों" को जन्म दिया था। प्रेम के इस रूप का उद्देश्य था विवाह-सम्बन्ध को तोड़ डालना। इसलिये, ऐसे प्रेम के और उस प्रेम के बीच बहुत चौड़ी खाई थी, जो विवाह-सम्बन्ध की नींव बननेवाला था। नाइटों के प्रेम के काल में यह खाई कभी नहीं पाटी जा सकी। उच्छृंखल लैटिन लोगों को छोड़कर सदाचारी जर्मनों को लीजिए, तो भी हम पाते हैं कि 'नीबेलुंगेनलीड' में क्राइमहिल्ड यद्यपि गुप्त रूप से सिगफ़ाइड से उतना ही प्रेम करती थी, जितना वह खुद उससे करता था, फिर भी जब गुंथर ने उसे बताया कि उसने क्राइमहिल्ड का विवाह एक नाइट के साथ करने का वचन दे दिया है और उसका नाम तक नहीं बताया, तो क्राइमहिल्ड ने केवल यह उत्तर दिया:

> "आपको मुझसे पूछने की आवश्यकता नहीं है, आप जैसा आदेश देंगे, मैं सदा वैसा ही करूंगी। मेरे प्रभु, आप जिसे भी मेरे लिये चुनेंगे, उसी को मैं सहर्ष अपना पति स्वीकार करूंगी।"[74]

इस बात का क्राइमहिल्ड को कभी ख़याल तक नहीं आया कि इस मामले में उसके प्रेम का भी कोई महत्त्व हो सकता है। गुंथर ने ब्रुनहिल्ड को देखा तक नहीं था, तब भी वह उसे विवाह में माग बैठा। इसी प्रकार, एटज़ेल ने क्राइमहिल्ड को बिना देखे ही उससे विवाह करना चाहा। और 'गुडरुन'[75] नामक काव्य में भी यही होता है। उसमें आयरलैंड का सिगबाट नार्वेवासिनी ऊटा से विवाह करना चाहता है, हेगेलिंगेन का हेटेल आयरलैंड की हिल्डा को विवाह में मांगता है, और अन्त में, मोरलैंड का सिगफ़ाइड, ओर्मनी का हार्टमुट तथा ज़ीलैंड का हेरविग, तीनों ही गुडरुन को विवाह में मांगते हैं; और यहां पहली बार यह होता है कि गुडरुन अपनी इच्छा से हेरविग को वर चुन लेती है। सामान्यतः प्रत्येक युवा राजकुमार के लिये उसके माता-पिता वधू चुनते हैं। यदि वे जीवित नहीं हैं तो राजकुमार खुद अपने सबसे बड़े सरदारों की राय से वधू चुन लेता है, जिनकी बात का

सभी मामलों में बहुत मूल्य होता है। अन्यथा हो भी नही सकता। क्योंकि नाइट अथवा सामन्त के लिये, और खुद राजा या राजकुमार के लिये, विवाह एक राजनीतिक मामला होता है। उनके लिये विवाह नये गठबंधन करके अपनी शक्ति बढाने का एक अवसर होता है। इसलिए विवाह में राजकुल अथवा सामन्तकुल के हित निर्णायक होते हैं, न कि व्यक्तिगत इच्छा या प्रवृत्ति। भला ऐसी परिस्थिति में, विवाह का निर्णय प्रेम पर निर्भर होने की आशा कैसे की जा सकती थी?

मध्य युग के नागरिकों के लिये भी यही बात सत्य थी। उसे ऐसे विशेषाधिकार प्राप्त थे जो उसकी रक्षा करते थे—जैसे कि शिल्प-संघो के अधिकारपत्र और उनकी विशेष शर्तें, दूसरे शिल्प-संघो से और स्वयं अपने संघ के दूसरे सदस्यो से, तथा अपने मजदूर कारीगरो और शागिर्दों से, उसे क़ानूनी तौर पर अलग रखने के लिये बनायी गयी बनावटी सीमाएं। पर ये ही विशेषाधिकार उस दायरे को बहुत छोटा कर देते थे जिसमे वह अपने लिये पत्नी तलाश करने की उम्मीद कर सकता था। और यह प्रश्न कि कौनसी लड़की उसके लिये सबसे उपयुक्त है, इस पेचीदा प्रणाली में निश्चय ही व्यक्तिगत इच्छा से नही, बल्कि परिवार के हित से तय होता था।

अतएव मध्य काल के अन्त तक, विवाह का अधिकांशतः वही रूप रहा जो शुरू से चला आया था—यानी वह एक ऐसा मामला बना रहा जिसका फ़ैसला दोनों प्रमुख पक्ष—वर और वधू—नही करते थे। शुरू में व्यक्ति जन्म से विवाहित होता था—पुरुष स्त्रियो के एक पूरे समूह के साथ, और स्त्री पुरुषो के। यूथ-विवाह के बाद के रूपो में भी शायद इसी तरह की हालत चलती रही, बस केवल यूथ अधिकाधिक छोटा होता गया। युग्म-परिवार मे सामान्यतः माताएं अपनी सन्तान का विवाह तय करती हैं; और यहां भी निर्णायक महत्त्व इसी बात का होता है कि नये संबंध से गोत्र मे और क़बीले के अन्दर विवाहित जोड़े की स्थिति कितनी मजबूत होती है। और जब सामाजिक सम्पत्ति के ऊपर निजी सम्पत्ति की प्रधानता क़ायम होने और सम्पत्ति को अपनी सन्तान के लिये छोड़ने का सवाल पैदा होने पर, पितृ-सत्ता और एकनिष्ठ विवाह की प्रधानता क़ायम हो जाती है, तब विवाह पहले से भी कही ज्यादा आर्थिक कारणों से निश्चित होने लगता है। क्रय-विवाह का रूप तो ग़ायब हो जाता है, पर नि-

निश्चय अधिकाधिक इस ढंग से होता है कि न केवल स्त्री का, बल्कि पुरुष का भी, उसके व्यक्तिगत गुणो के आधार पर नही, बल्कि उसकी सम्पत्ति के आधार पर मूल्याकन किया जाता है। शुरू से ही शासक वर्गों का ऐसा व्यवहार रहा है कि उनमे यह बात कभी सुनी तक नही जा सकती थी कि विवाह के मामले मे दोनो प्रमुख पक्षों की पारस्परिक इच्छा या प्रवृत्ति का निर्णायक महत्त्व हो सकता है। ऐसी बाते तो ज्यादा से ज्यादा किस्से-कहानियो मे होती थी, या फिर वे होती थी उत्पीड़ित वर्गों मे, जिनका कोई महत्त्व न था।

जिस समय, भौगोलिक खोजों के युग के बाद पूजीवादी उत्पादन, विश्व-व्यापार तथा मैनुफ़ेक्चर के जरिये दुनिया को जीतने निकला था, उस समय यही परिस्थिति थी। हर आदमी यही सोचेगा कि विवाह का यह रूप पूंजीवादी उत्पादन के सर्वथा उपयुक्त था, और वास्तव मे बात भी ऐसी ही थी। परन्तु, विश्व-इतिहास का व्यंग्य देखिये — उसकी गहराई तक कौन पहुंच सकता है — विवाह के इस रूप मे सबसे बड़ी दरार पूजीवादी उत्पादन ने ही डाली। सभी वस्तुओ को बाजार में बिकनेवाले मालो में बदलकर उसने सारे प्राचीन एवं परम्परागत सम्बन्धो को भंग कर दिया, और पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलते आये रीति-रिवाजों तथा ऐतिहासिक अधिकारों की जगह क्रय-विक्रय और "स्वतंत्र" क़रार[76] की स्थापना की। और अंग्रेज विधिवेत्ता एच० एस० मेन को लगा कि मानो उन्होने बड़ा भारी आविष्कार किया है, जब उन्होंने यह कहा कि पिछले युगो की तुलना में हमारी पूरी प्रगति इस बात मे निहित है कि अब हम हैसियत की जगह क़रार को — बाप-दादों से विरासत मे मिली स्थिति की जगह स्वेच्छापूर्वक किये करार के द्वारा स्थापित स्थिति को, मानने लगे है। यह बात, जहा तक वह सही है, बहुत दिन पहले ही 'कम्युनिस्ट घोषणापत्र'[77] मे कह दी गयी थी।

परन्तु करार करने के लिये जरूरी है कि ऐसे लोग हों जो अपने व्यक्तित्व, अपनी क्रिया-शक्ति और सम्पत्ति का स्वतंत्रतापूर्वक जिस प्रकार चाहें उस प्रकार उपयोग कर सकें, और साथ ही जो समानता के आधार पर मिलें। ठीक ऐसे ही "स्वतंत्र" और "समान" लोगों को प्रस्तुत करना पूजीवादी उत्पादन का एक मुख्य काम था। यद्यपि शुरू मे यह बात अर्द्ध-चेतन ढंग से, और वह भी धार्मिक वेष मे हुई, फिर भी लूथर और कैल्विन के सुधारों के समय से ही यह पक्का सिद्धान्त बन गया कि कोई

व्यक्ति केवल उसी समय अपने कामों के लिये पूरी तरह जिम्मेदार माना जायेगा, जब इन कामो को करते समय उसे अपनी इच्छानुसार कार्य करने की पूरी स्वतंत्रता रही हो; और यह हर आदमी का नैतिक कर्त्तव्य है कि यदि कोई उस पर अनैतिक कार्य करने के लिये दबाव डालता है, तो वह उसका विरोध करे। परन्तु विवाह की पुरानी प्रथा से यह बात कैसे मेल खाती है? पूंजीवादी विचारों के अनुसार विवाह भी एक करार होता है, क़ानूनी करार होता है, बल्कि कहना चाहिये कि सबसे महत्त्वपूर्ण करार होता है, क्योंकि उसके द्वारा दो व्यक्तियो के तन और मन का जीवन भर के लिये फैसला कर दिया जाता है। इसमे कोई शक नही कि रस्मी तौर पर विवाह का करार दोनों पक्ष स्वेच्छा से करते थे। दोनों पक्षों की सहमति के बिना विवाह का करार नही किया जाता था। परन्तु हम यह भी अच्छी तरह जानते हैं कि यह सहमति किस प्रकार ली जाती थी, और वास्तव मे विवाह कौन तय करता था। परन्तु यदि दूसरे सभी क़रारो का पूर्ण स्वतंत्रता के साथ निश्चय किया जाना आवश्यक है, तो फिर विवाह के करार के लिये यह क्यों आवश्यक नही है? दो युवा व्यक्ति, जो युगल दम्पति बनाये जानेवाले है, क्या यह अधिकार नही रखते कि वे स्वतंत्रतापूर्वक अपने आप का, अपने शरीर का, और अपनी इन्द्रियो का जिस प्रकार चाहे उस प्रकार उपयोग करे? क्या यह बात सच नही है कि यौन-प्रेम नाइटों के प्रेम-व्यापार के कारण प्रचलित हुआ था, और क्या नाइटों के विवाहेतर प्रेम के विपरीत इसका सही पूंजीवादी रूप पति-पत्नी का प्रेम नही है? और यदि विवाहित लोगों का कर्त्तव्य है कि वे एक दूसरे से प्रेम करें, तो क्या प्रेमियों का यह कर्त्तव्य नहीं है कि वे केवल एक दूसरे से ही विवाह करे और किसी दूसरे से न करे? और क्या इन प्रेमियों का एक दूसरे से विवाह करने का अधिकार माता-पिता, सगे-सम्बन्धियों और विवाह तय करानेवाले अन्य परम्परागत दलालो के अधिकार से ऊंचा नही है? स्वतंत्रतापूर्वक व्यक्तिगत रूप से जांच लेने का अधिकार, यदि धड़धड़ाता हुआ धर्म तथा गिरजाघर मे भी पहुंच गया है, तो वह पुरानी पीढ़ी के इस असहनीय दावे के सामने ही कैसे ठिठककर रह जा सकता है कि उसे नयी पीढ़ी के तन-मन, सम्पत्ति और सुख-दुख का फैसला करने का अधिकार है?

ऐसे युग मे, जिसने पुराने सारे सामाजिक बंधनों को ढीला कर दिया था और सभी परम्परागत विचारों की नीव हिला दी थी, इन प्रश्नों का

परन्तु एक बात में यह मानव अधिकार दूसरे सभी तथाकथित मानव अधिकारों से भिन्न था। दूसरे तमाम अधिकार, व्यवहार में शासक वर्ग तक, यानी पूंजीपति वर्ग तक ही सीमित बने रहे और उत्पीडित वर्ग से--सर्वहारा वर्ग से--प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष ढंग से ये अधिकार छीने जाते रहे। पर इतिहास का व्यंग्य एक बार फिर सामने आया। शासक वर्ग अब भी परिचित आर्थिक प्रभावो के वश में रहता है और इसलिये कुछ अपवादस्वरूप उदाहरणों में ही उसके यहां सचमुच स्वेच्छा से विवाह होते हैं; परन्तु शासित वर्ग में, जैसा कि हम ऊपर देख चुके है, आम तौर पर विवाह स्वेच्छा से होते हैं।

अतएव, विवाह में पूर्ण स्वतंत्रता केवल उसी समय आम तौर पर कार्य-रूप ले सकेगी जब पूंजीवादी उत्पादन तथा उससे उत्पन्न सम्पत्ति के सम्बन्ध मिट जायेंगे और उसके परिणामस्वरूप वे सब गौण आर्थिक कारण भी मिट जायेंगे जो आज भी जीवन-साथी के चुनाव पर इतना भारी प्रभाव डालते हैं। तब आपस में प्रेम के सिवा और कोई उद्देश्य विवाह के मामले मे काम नही करेगा।

यौन-प्रेम चूंकि स्वभाव से एकांतिक होता है--यद्यपि यह एकांतिकता आज अपने पूर्ण रूप मे केवल नारी के लिये ही होती है,--इसलिये, यौन-प्रेम पर आधारित विवाह स्वभाव से ही एकनिष्ठ होता है। हम यह देख चुके हैं कि बाख़ोफ़ेन तब कितने सही नतीजे पर पहुचे थे जब उन्होंने कहा था कि यूथ-विवाह से व्यक्तिगत विवाह तक की प्रगति का श्रेय मुख्यतः स्त्रियों को है। हां, युग्म-विवाह से एकनिष्ठ विवाह में प्रवेश करने का श्रेय पुरुष को दिया जा सकता है। इतिहास की दृष्टि से इस परिवर्तन का सार यह था कि स्त्रियो की स्थिति और गिर गयी और पुरुषों के लिये बेवफ़ाई और आसान हो गयी। जब वे आर्थिक कारण मिट जायेंगे जिनसे स्त्रिया पुरुषों की हस्ब मामूल बेवफाई को सहन करने के लिये विवश हो जाती थी--अर्थात् जब स्त्री को अपनी जीविका की और, इससे भी अधिक अपने बच्चों के भविष्य की चिन्ता न रह जायेगी--और इस प्रकार जब स्त्रियो और पुरुषों के बीच सचमुच समानता स्थापित हो जायेगी, तब पहले का सारा अनुभव यही बताता है कि इस समानता का परिणाम उतना यह नही होगा कि स्त्री बहुपतिका हो जायेगी, बल्कि कही अधिक प्रभावपूर्ण रूप से यह होगा कि पुरुष सही माने मे एकपत्नीक बन जायेंगे।

परन्तु एकनिष्ठ विवाह से वे सारी विशेषताएं निश्चित रूप से मिट जायेंगी, जो सम्पत्ति के सम्बन्धों से उसके उत्पन्न होने के कारण पैदा हो गयी हैं। वे विशेषताएं ये हैं: एक तो पुरुष का आधिपत्य, और दूसरे विवाह-सम्बन्ध का अविच्छेद्य रूप। दाम्पत्यजीवन में पुरुष का आधिपत्य केवल उसके आर्थिक प्रभुत्व का एक परिणाम है, और उस प्रभुत्व के मिटने पर वह अपने आप ख़तम हो जायेगा। विवाह-सम्बन्ध का अविच्छेद्य रूप कुछ हद तक उन आर्थिक परिस्थितियों का परिणाम है जिनमें एकनिष्ठ विवाह की उत्पत्ति हुई थी, और कुछ हद तक वह उस समय से चली आती हुई एक परम्परा है जबकि इन आर्थिक परिस्थितियों तथा एकनिष्ठ विवाह के सम्बन्ध को ठीक-ठीक नहीं समझा गया था और धर्म ने उसे अतिरंजित कर दिया था। आज इस परम्परा में हज़ारों दरारें पड़ चुकी हैं। यदि केवल प्रेम पर आधारित विवाह नैतिक होते हैं, तो जाहिर है कि केवल वे विवाह ही नैतिक माने जायेंगे जिनमें प्रेम क़ायम रहता है। व्यक्तिगत यौन-प्रेम के आवेग की अवधि प्रत्येक व्यक्ति के लिये भिन्न होती है। विशेषकर पुरुषों में तो इस मामले मे बहुत ही अन्तर होता है। और प्रेम के निश्चित रूप से नष्ट हो जाने पर, या किसी और व्यक्ति से उत्कट प्रेम हो जाने पर, पति-पत्नी का अलग हो जाना दोनों पक्ष के लिये और समाज के लिये भी हितकारक बन जाता है। तब वे तलाक के मुकदमे की कीचड़ मे से व्यर्थ में गुजरने से बच जायेंगे।

अतएव, पूंजीवादी उत्पादन के आसन्न विनाश के बाद यौन-सम्बन्धों का स्वरूप क्या होगा, उसके बारे मे आज हम केवल नकारात्मक अनुमान कर सकते हैं,—अभी हम केवल इतना कह सकते हैं कि क्या चीजें तब नहीं रहेंगी। परन्तु उसमे कौनसी नयी चीजें जुड़ जायेंगी? यह उस समय निश्चित होगा जब एक नयी पीढ़ी पनपेगी—ऐसे पुरुषों की पीढ़ी जिसे जीवन भर कभी किसी नारी की देह को पैसा देकर या सामाजिक शक्ति के किसी अन्य साधन के द्वारा ख़रीदने का मौका नहीं मिला है, और ऐसी नारियों की पीढ़ी जिसे कभी सच्चे प्रेम के सिवा और किसी कारण से किसी पुरुष के सामने आत्मसमर्पण करने के लिये विवश नहीं होना पड़ा है, और न ही जिसे आर्थिक परिणामों के भय से अपने को अपने प्रेमी के सामने आत्मसमर्पण करने से कभी रोकना पड़ा है। और जब एक बार ऐसे स्त्री-पुरुष इस दुनिया मे जन्म ले लेंगे, तब वे इस बात की तनिक भी चिन्ता

नही करेंगे कि आज हमारी राय में उन्हें क्या करना चाहिये। वे स्वयं तय करेंगे कि उन्हें क्या करना चाहिये और उसके अनुसार वे स्वय ही प्रत्येक व्यक्ति के आचरण के बारे मे जनमत का निर्माण करेंगे – और बस, मामला ख़तम हो जायेगा।

इस बीच, चलिये, हम लोग फिर मौर्गन के पास लौट चलें जिनसे हम बहुत दूर भटक गये हैं। सभ्यता के युग में जो सामाजिक संस्थाएं विकसित हुई हैं, उनका ऐतिहासिक अन्वेषण मौर्गन की पुस्तक के अध्ययन क्षेत्र के बाहर है। इसलिये, इस काल मे एकनिष्ठ विवाह का क्या होगा, इस विषय की उन्होंने बहुत संक्षेप में चर्चा की है। मौर्गन भी एकनिष्ठ परिवार के विकास को एक प्रगतिशील कदम मानते हैं। उनकी राय मे भी यह नारी और पुरुष की समानता के लक्ष्य की ओर एक क़दम है, पर वह यह नही मानते कि इसके द्वारा मानवजाति उस लक्ष्य पर पूरी हद तक पहुंच गयी है। परन्तु मौर्गन के शब्दों में,

> "जब यह सत्य स्वीकार कर लिया जाता है कि परिवार एक के बाद एक, चार अलग-अलग रूपों से गुज़र चुका है और अब वह अपने पाचवें रूप में है, तब फौरन यह सवाल उठता है कि क्या भविष्य में यह रूप स्थायी बना रहेगा? इस सवाल का सिर्फ़ यही जवाब दिया जा सकता है कि जैसा कि भूतकाल में हुआ, समाज की प्रगति के साथ-साथ परिवार का रूप भी प्रगति करेगा और समाज के बदलने के साथ-साथ परिवार का रूप भी बदलेगा। परिवार सामाजिक व्यवस्था की उपज है, और वह उसकी संस्कृति को प्रतिबिम्बित करेगा। सभ्यता के प्रारंभ से लेकर अब तक चूंकि एकनिष्ठ परिवार में बड़ा सुधार हुआ है और आधुनिक काल मे अत्यन्त युक्तिसंगत सुधार हुआ है, इसलिये कम से कम इतना तो माना ही जा सकता है कि उसमें अभी और सुधार हो सकता है और वह उस समय तक होता रहेगा जब तक कि नारी और पुरुष की समानता स्थापित नही हो जायेगी। और यदि सुदूर भविष्य में एकनिष्ठ परिवार समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने मे असमर्थ सिद्ध होता है, तो आज यह भविष्यवाणी करना असम्भव है कि उसका स्थान विवाह का कौनसा रूप लेगा।"[73]

३
इरोक्वाई गोत्र

अब हम मौर्गन की एक और खोज पर आते हैं, जो कम से कम उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितनी महत्त्वपूर्ण रक्त-सम्बद्धता की व्यवस्थाओं के आधार पर परिवार के आदिम रूप की पुनर्रचना थी। मौर्गन ने साबित कर दिया है कि अमरीकी इंडियन क़बीलों में रक्त-सम्बन्धियों के जो समूह थे, और जिनके नाम पशुओं के नामों पर रखे जाते थे, वे बुनियादी तौर पर यूनानियों के genea और रोमन लोगों के gentes से अभिन्न थे; कि गोत्र का प्रारम्भिक रूप वह है जो अमरीका में मिलता है और बाद के रूप वे हैं जो यूनानियों में और रोमन लोगों में पाये गये हैं; कि प्राचीनतम काल के यूनानियों तथा रोमन लोगों में गोत्र, बिरादरियों और कबीलों के रूप मे समाज का जो संगठन मिलता था, हूबहू वैसा ही संगठन अमरीकी इंडियनों मे मिलता है; और (जहां तक आज उपलब्ध सूत्रों से हम जान सके हैं) गोत्र एक ऐसा संगठन है जो सभ्यता के युग में प्रवेश करने के पहले तक, और यहां तक कि उसके बाद भी, संसार की सभी बर्बर जातियों मे पाया जाता रहा है। यह साबित हो जाने से प्राचीनतम काल के यूनानी तथा रोमन इतिहास की सबसे कठिन गुत्थियां एक ही बार मे सुलझ गयीं। साथ ही इस खोज ने आदिम काल के,—अर्थात् राज्य के आविर्भाव के पहले के—सामाजिक गठन की बुनियादी विशेषताओं पर अप्रत्याशित प्रकाश डाला है। एक बार जानकारी हो जाने पर यह चीज़ भले ही सरल और सीधी मालूम पड़ती हो, पर मौर्गन ने इसका बिलकुल हाल में ही पता लगाया। १८७१ मे उनकी जो रचना प्रकाशित हुई थी,* उसमें वह इस भेद का पता नहीं लगा पाये थे। और जब मौर्गन ने इस

रहस्य का पता लगाया तो इंगलैंड के पुरातत्त्वविदों की, जिन्हें अमूमन् अपने में बहुत विश्वास रहता था, कुछ समय के लिये बोलती बंद हो गयी।

मौर्गन ने रक्त-सम्बन्धियों के इस समूह के लिये साधारण रूप से जिस लैटिन शब्द gens का प्रयोग किया है, वह अपने यूनानी पर्याय genos की ही तरह, समान आर्य धातु gan (जो जर्मन भाषा में, आर्य भाषा के g के k बन जाने के नियम के अनुसार kan हो जाता है) से व्युत्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ है "जन्म देना"। Gens, genos, संस्कृत भाषा का जनस, *गौथिक भाषा का kuni (यह शब्द भी उपरोक्त नियम* के अनुसार बना है), प्राचीन नौर्डिक और एंग्लो-सैक्सन भाषा का kyn अंग्रेजी भाषा का kin और मध्योत्तर जर्मन भाषा का künne—इन सब शब्दों का एक ही अर्थ है, और वह है: रक्त-सम्बन्ध, वंश। परन्तु लैटिन भाषा में gens और यूनानी भाषा में genos विशेष रूप से रक्त-संबंधियों के उन समूहों के लिये प्रयुक्त होते हैं जो एक वंश के होने का (यहा एक ही पुरुष के वंशज होने का) दावा करते हैं, और जो कुछ विशेष सामाजिक तथा धार्मिक रीतियों से बंधकर एक विशिष्ट जन-समुदाय बन गये हैं, परन्तु जिनकी उत्पत्ति और प्रकृति के विषय में अभी तक सभी इतिहासकार अंधकार में थे।

हम ऊपर पुनालुआन परिवार के सम्बन्ध में देख चुके हैं कि शुरू में gens, अर्थात् गोत्र कैसे बनता था। उसमे वे तमाम लोग शामिल होते थे जो पुनालुआन विवाह की बदौलत और उसके साथ अनिवार्यतः प्रचलित विचारों के अनुसार, एक निश्चित पूर्वजा के, यानी इस गोत्र की स्थापना करनेवाली नारी के वंशज माने जाते थे। परिवार के इस रूप में चूंकि यह निश्चय के साथ नहीं कहा जा सकता था कि बच्चे का पिता कौन है, इसलिये वंश केवल नारी के नाम से चलता था। और भाई-बहन में चूंकि विवाह वर्जित था, और पुरुष केवल किसी और वंश की स्त्रियों से ही विवाह कर सकता था, इसलिये इन स्त्रियों से पैदा होनेवाले बच्चे मातृ-*सत्ता के नियम के अनुसार गोत्र के बाहर होते थे।* अतएव, हर एक पीढ़ी की केवल पुत्रियों की संतान ही गोत्र में रह पाती थी, और पुत्रों की संतान अपनी माताओं के गोत्रों की मानी जाती थी। अस्तु, इस रक्तसम्बद्ध समुदाय का उस समय क्या होता है जब वह क़बीले के अन्दर, ऐसे ही अन्य समुदायों से पृथक् रूप में गठित होता है?

मौर्गन ने इरोक्वा लोगों के, विशेषकर सेनेका क़बीले के गोत्रों को प्रारम्भिक गोत्रो का क्लासिकीय रूप माना है। इन लोगो में आठ गोत्र होते है जिनके नाम नीचे लिखे पशुओ के नामो पर रखे गये है: १) भेड़िया, २) भालू, ३) कछुआ, ४) ऊदविलाव, ५) हिरन, ६) कुनाल, ७) वगुला, ८) वाज़। प्रत्येक गोत्र मे नीचे लिखी प्रथाएं प्रचलित है:

१. गोत्र अपना "साख़ेम" (अर्थात् शान्ति-काल का नेता) और अपना मुखिया (युद्ध-काल का नेता) चुनता है। साखेम को गोत्र में से ही चुनना पड़ता है और यह पदवी गोत्र मे वंशगत होती है–इस अर्थ में कि उसका स्थान खाली होते ही उसे तुरन्त भरना पड़ता है। युद्ध-काल का नेता गोत्र के बाहर से भी चना जा सकता था और यह पद कुछ समय तक खाली रह सकता था। एक साखेम का पुत्र कभी उसका स्थान नही ले सकता था, क्योकि इरोक्वा लोगो मे मातृ-सत्ता थी, और इसलिये पुत्र एक भिन्न गोत्र का सदस्य होता था। परन्तु साखेम का भाई या उसका भाजा अक्सर उसके स्थान पर चुन लिया जाता था। चुनाव मे सभी नारी व पुरुष दोनो ही भाग लेते थे, परन्तु यह जरूरी था कि इस प्रकार जो व्यक्ति चुना जाता था, उसे बाकी सातों गोत्र मंजूर करे। इसके बाद ही कही उसे बाक़ायदा साखेम के पद पर बैठाया जाता था–यह काम पूरे इरोक्वा महासंघ की आम परिषद् करती थी। इसका महत्त्व बाद मे स्पष्ट हो जायेगा। गोत्र के भीतर साखेम का अधिकार पितातुल्य और केवल नैतिक प्रकार का होता था। उसके पास दमन के कोई साधन नही थे। साखेम होने के नाते वह सेनेका लोगों की कबीला-परिषद् का भी सदस्य होता था, और साथ ही इरोक्वा महासंघ की आम परिषद् का भी। युद्ध-काल का नेता केवल सैनिक अभियान के समय आदेश दे सकता था।

२. गोत्र साख़ेम को और युद्धकालीन नेता को जब चाहे हटा सकता था। यह फैसला भी स्त्री-पुरुष मिलकर करते थे। पद से हटाये जाने पर ये व्यक्ति गोत्र के वाकी सदस्यों की भांति साधारण योद्धा और साधारण व्यक्ति बन जाते थे। कबीले की परिषद्, गोत्र की इच्छा के खिलाफ भी, साखेमों को उनके पदों से हटा सकती थी।

३. किसी सदस्य को गोत्र के भीतर विवाह करने की इजाजत नही थी। यह गोत्र का बुनियादी नियम था। यह वह बंधन था जो गोत्र को

एकसाथ बंधे रखता था। इस नकारात्मक रूप में, वास्तव मे वह अत्यन्त सकारात्मक रक्त-सम्बन्ध प्रगट हुआ था जिसके कारण इस जन-समुदाय में एकत्रित व्यक्ति एक गोत्र के रूप में गठित थे। इस साधारण सत्य की खोज करके मौर्गन ने पहली बार गोत्र के असली स्वरूप को प्रगट किया था। तब तक गोत्र को लोगों ने कितना कम समझा था, यह जांगल तथा वर्बर जातियों के इसके पहले के उन वर्णनों को पढ़ने पर मालूम हो जाता है, जिनमे विभिन्न समुदायो को, जो सभी गोत्रीय संगठन के अन्तर्गत थे, बिना सोचे-समझे कबीला, कुटुम्ब और "थुम", आदि नामों से पुकारा गया था। कभी-कभी कहा जाता है कि ऐसे किसी समुदाय के अन्दर विवाह करना मना है। इस प्रकार वह घोर अव्यवस्था पैदा कर दी गयी थी जिसमे मि० मैक-लेनन नेपोलियन की भांति मैदान मे आये और उन्होंने यह फतवा देकर व्यवस्था स्थापित की कि सभी क़बीले दो श्रेणियों में बंटे होते हैं। एक वे कबीले होते हैं जिनके भीतर विवाह करना मना है (वहिर्विवाही), और दूसरे वे जिनके अन्दर विवाह करने की इजाजत है (अन्तर्विवाही)। और इस तरह गड़वड़ी को और भी गड़वड़ करने के बाद मैक-लेनन साहब इस बात की गहरी खोजबीन में व्यस्त हो गये थे कि इन दो बेतुकी श्रेणियों में अधिक पुरानी कौनसी है—अन्तर्विवाही श्रेणी या वहिर्विवाही। रक्त-सम्बन्ध पर आधारित गोत्र का तथा फलतः उसके सदस्यो में विवाह के असम्भव होने का पता लगते ही यह सारी मूर्खता अपने आप बन्द हो गयी। स्पष्ट है कि इरोक्वा लोग विकास की जिस अवस्था में हैं, उस अवस्था में गोत्र के भीतर विवाह करने पर लगा हुआ प्रतिबंध पूरी सख़्ती के साथ लागू किया जाता है।

४. मृत व्यक्तियो की सम्पत्ति गोत्र के बाक़ी सदस्यो में बांट दी जाती थी क्योंकि हर हालत मे सम्पत्ति को गोत्र के भीतर ही रहना था। चूंकि इरोक्वाओं का कोई भी सदस्य मरने पर नगण्य सम्पत्ति ही छोड़ जा सकता था, इसलिये वह गोत्र के भीतर उसके सबसे निकट के सम्बन्धियो में बांट दी जाती थी। जब कोई पुरुष मरता था तो उसकी सम्पत्ति उसके सगे भाई-बहनों और उसके मामा के बीच बांट दी जाती थी और जब कोई स्त्री मर जाती थी तो उसकी सम्पत्ति उसके बच्चों और उसकी सगी बहनों के बीच बांट दी जाती थी, पर उसके भाइयों को उसमें कोई हिस्सा नही मिलता था। ठीक यही कारण था कि पति-पत्नी के लिये एक दूसरे की

सम्पत्ति उत्तराधिकार में पाना असम्भव था और बच्चे पिता की सम्पत्ति नही पा सकते थे।

५. गोत्र के सदस्यों का कर्त्तव्य था कि वे एक दूसरे की मदद और हिफाजत करें, और यदि कोई बाहर का आदमी गोत्र के किसी सदस्य को चोट पहुंचा गया हो, तो उसका बदला लेने में ख़ास तौर पर मदद करें। व्यक्ति अपनी सुरक्षा के लिये गोत्र की शक्ति पर निर्भर कर सकता था और करता भी था। जो कोई गोत्र के किसी सदस्य को चोट पहुंचाता था, वह पूरे गोत्र पर चोट करता था। गोत्र के इस रक्त-सम्बन्ध से रक्त-प्रतिशोध के कर्त्तव्य की उत्पत्ति हुई, जिसे इरोक्वा लोग विला शर्त मानते थे। गोत्र के किसी सदस्य को यदि बाहर का कोई आदमी मार डालता था, तो हत व्यक्ति का पूरा गोत्र ख़ून का बदला ख़ून से लेने के लिये कर्त्तव्यबद्ध होता था। पहले मध्यस्थता की कोशिश की जाती थी। मारनेवाले गोत्र की परिपद् बैठती थी और हत व्यक्ति के गोत्र की परिपद् के पास झगड़ा निपटाने के लिये विभिन्न प्रस्ताव भेजती थी। इसका तरीका प्रायः यह होता था कि जो कुछ हो गया, उस पर दुख प्रकट किया जाता था और काफी मूल्यवान् भेंट भेजी जाती थी। यदि भेंट स्वीकार कर ली गयी तो समझा जाता था कि झगड़ा निपट गया। नही, तो हत व्यक्ति का गोत्र अपने एक या एक से अधिक सदस्यो को बदला लेने के लिये नियुक्त करता था, और उनका कर्त्तव्य होता था कि वे कातिल का पीछा करें और उसे जान से मार डालें। यदि यह काम पूरा कर लिया जाता था तो कातिल के गोत्र को शिकायत करने का कोई अधिकार नही होता था; यह समझा जाता था कि हिसाब पूरा हो गया।

६. गोत्र के पास निश्चित नाम या नामो की निश्चित माला होती है, जिन्हे पूरे कबीले के अन्दर केवल गोत्र विशेष ही इस्तेमाल कर सकता है। इस प्रकार, किसी व्यक्ति का नाम लेने पर यह भी ज्ञात हो जाता है कि वह किस गोत्र का सदस्य है। जो गोत्र के नाम का प्रयोग करता है, उसे स्वभावतः गोत्र के अधिकार भी प्राप्त होते हैं।

७. गोत्र अजनबियों को अपना सदस्य बना सकता है, और इस प्रकार उन्हे पूरे क़बीले मे शामिल कर सकता है। जो युद्धवंदी जान से नही मारे जाते थे, वे एक गोत्र द्वारा अपनाये जाकर सेनेका क़बीले के सदस्य बन जाते थे और इस प्रकार वे गोत्र के और कबीले के पूरे अधिकार प्राप्त

कर लेते थे। अजनबियों को गोत्र के सदस्यों की व्यक्तिगत सिफ़ारिश पर सदस्य बनाया जाता था—पुरुष अजनबी को भाई या बहन और स्त्रियां अपनी सन्तान मान लेती थी। सम्बन्ध के पक्का होने के लिये आवश्यक था कि गोत्र बाक़ायदा रस्मी तौर पर अजनबी को अपना सदस्य स्वीकार करे। जिन गोत्रों के सदस्यों की संख्या बहुत ज्यादा घट जाती थी, वे अक्सर दूसरे गोत्रों मे से, उनकी सहमति से, सामूहिक भर्ती करके फिर भरे-पूरे बन जाते थे। इरोक्वा लोगों मे बाहरी आदमियों को गोत्र के सदस्य के रूप मे अंगीकार करने का अनुष्ठान क़बीले की परिषद् की एक आम सभा मे सम्पन्न किया जाता था। इससे व्यवहार मे यह एक धार्मिक अनुष्ठान बन गया था।

८. इंडियन गोत्रो मे विशेष धार्मिक अनुष्ठानो का अस्तित्व सिद्ध करना कठिन है; फिर भी इसमे शक नही कि इन लोगों के धार्मिक अनुष्ठान न्यूनाधिक गोत्रो से ही सम्बन्धित होते थे। इरोक्वा लोगो के छः वार्षिक धार्मिक अनुष्ठानों में अलग-अलग गोत्रों के साख़ेमों और युद्धकालीन नेताओं की गिनती, उनके पदो के कारण, "धर्म पालकों" मे होती थी और वे पुरोहितों का काम करते थे।

९. हर गोत्र का एक सामूहिक कब्रिस्तान होता है। न्यूयार्क राज्य के इरोक्वा के गोरे लोगो से चारों ओर से घिर जाने के कारण उनका क़ब्रिस्तान अब नही मिलता, पर पहले वह था। दूसरे इंडियन क़बीलो में वह अब भी मिलता है। उदाहरण के लिये टस्कारोरा कबीले में, जिसका कि इरोक्वा से घनिष्ठ सम्बन्ध है। वह यद्यपि ईसाई हो गया है, फिर भी उसके कब्रिस्तान मे अभी तक हर गोत्र के लिये कब्रों की एक अलग पक्ति है, यानी मां तो उसी पंक्ति में दफनायी जाती है जिसमे उसके बच्चे दफनाये जाते हैं, पर पिता को उस पंक्ति मे स्थान नही मिलता। और इरोक्वा लोगों में भी, गोत्र के सभी सदस्य अंतिम क्रिया के समय शोक प्रकट करते है, क़ब्र खोदते है, दफनाने के समय के भाषण देते है, इत्यादि।

१०. गोत्र की एक परिषद् होती है जो गोत्र के सभी बालिग सदस्यो—स्त्री और पुरुष दोनो—की जनसभा है। उसमे सभी सदस्यों की आवाज़ बराबर होती है। यह परिषद साख़ेमों और युद्ध-काल के नेताओं को चुनती थी और इनको अपदस्थ करती थी और इसी प्रकार शेष "धर्म-पालकों"

को भी चुनती और बर्ख़ास्त करती थी। गोत्र के किसी सदस्य के मारे जाने पर वह प्रायश्चित के रूप में भेंट लेने या रक्त-प्रतिशोध का निर्णय करती थी। वह अजनबियों को गोत्र का सदस्य बनाती थी। साराश यह *कि वह गोत्र की सार्वभौम सत्ता थी।*

एक ठेठ इंडियन गोत्र के ये ही अधिकार थे।

> "*इरोक्वाई गोत्र के सभी सदस्य व्यक्तिगत रूप से स्वतंत्र होते* थे, और एक दूसरे की स्वतंत्रता की रक्षा करना उनका कर्तव्य समझा जाता था। उन्हें समान सुविधाएं प्राप्त थी और उनके समान व्यक्तिगत अधिकार होते थे। *साखेम या युद्ध-काल के नेता को कोई विशेष अधिकार* नही प्राप्त थे। ये लोग रक्त-सम्बन्ध के बंधन मे जुड़े एक भ्रातृसंघ के समान थे। स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व – ये गोत्र के मुख्य सिद्धान्त होते थे, यद्यपि किसी ने उनकी इस रूप मे स्थापना नही की थी। गोत्र समाज-व्यवस्था की एक इकाई था, वह बुनियाद था जिस पर इडियन समाज खड़ा था। आत्मसम्मान और स्वतन्त्रता की वह भावना, जो सर्वत्र इंडियनो के चरित्र की विशेषता थी, इसी की उपज थी।"[80]

जिस समय इंडियनों का पता लगा, उस समय वे उत्तरी अमरीका मे हर जगह मातृसत्तात्मक गोत्रों मे संगठित थे। डैकोटा जैसे चन्द कबीले ही ऐसे थे जिनमे गोत्र-व्यवस्था जर्जर हो गयी थी। ओजिब्वे और ओमाहा जैसे कुछ दूसरे क़बीले पितृ-सत्ता के अनुसार संगठित थे।

इंडियनो के बहुत-से ऐसे क़बीले थे जिनमे से हर एक के पाच-पाच छः-छः से अधिक गोत्र थे। इन कबीलो मे तीन-चार या उससे अधिक संख्या मे गोत्र एक विशेष समूह मे सयुक्त होते हैं। उसे मौर्गन ने – इडियन नाम को हूबहू यूनानी भाषा मे अनुवाद करके – "फ़्रेटरी", अर्थात् बिरादरी कहा है। इस प्रकार सेनेका क़बीले मे दो बिरादरियां हैं, पहली मे एक से चार *नम्बर तक के गोत्र शामिल हैं* और दूसरी मे पाच से आठ नम्बर तक के। अधिक निकट से खोज करने पर पता चलता है कि ये बिरादरिया, मुख्यतः शुरू के उन गोत्रो का प्रतिनिधित्व करती हैं जिनमे कबीला सबसे पहले विभाजित हुआ था। *क्योंकि जब गोत्रो के भीतर विवाह करने की मनाही* कर दी गयी, तो हर कबीले के लिये आवश्यक हो गया कि उसमे कम से कम दो गोत्र हों ताकि कबीला अपना स्वतन्त्र अस्तित्व कायम रख सके।

जैसे-जैसे क़बीला बढ़ता गया, हर एक गोत्र फिर दो या दो से अधिक गोत्रों में विभाजित होता गया। और अब इनमें से प्रत्येक एक अलग गोत्र हो जाता है, और पुराना गोत्र, जिसमे सभी संतति-गोत्र शामिल होते हैं, बिरादरी के रूप मे जीवित रहता है। सेनेका क़बीले मे, और इंडियनों के दूसरे अधिकतर क़बीलो मे एक बिरादरी मे शामिल गोत्र आपस में सगे भ्रातृ-गोत्र होते हैं, और दूसरी बिरादरी के गोत्र उनके रिश्ते के भ्रातृ-गोत्र समझे जाते है। हम ऊपर देख चुके है कि रक्त-सम्बद्धता की अमरीकी व्यवस्था मे इन नामो का बहुत यथार्थ और भावपूर्ण अर्थ होता है। शुरू मे तो सेनेका क़बीले का कोई व्यक्ति अपनी बिरादरी के भीतर विवाह नही कर सकता था, पर अब बहुत अरसे से यह प्रतिबंध नहीं रह गया है और वह केवल गोत्र तक ही सीमित है। सेनेका क़बीले के लोगों मे परम्परा थी कि शुरू मे "भालू" और "हिरन" नाम के दो गोत्र थे, जिनसे दूसरे गोत्र निकले थे। एक बार जब इस नयी प्रथा ने जड़ पकड़ ली तो आवश्यकता के अनुसार उसमें परिवर्तन कर दिया गया। सतुलन बनाये रखने के लिये कभी-कभी तो, दूसरी बिरादरियो के पूरे के पूरे गोत्र उन बिरादरियों में शामिल किये जाते थे जिनके गोत्र नष्ट हो गये थे। यही कारण है कि विभिन्न क़बीलो की बिरादरियों में हम एक ही नाम के अनेक गोत्रों को विभिन्न समूहो मे सगठित पाते हैं।

इरोक्वा लोगो में बिरादरी के काम कुछ हद तक सामाजिक और कुछ हद तक धार्मिक है। (१) गेंद का खेल खेलते समय एक बिरादरी एक तरफ़ हो जाती है, दूसरी बिरादरी दूसरी तरफ़। हर एक अपने सबसे अच्छे खिलाड़ियो को मैदान में उतारती है। बिरादरी के बाक़ी सदस्य दर्शक होते है। ये दर्शक, जो अपनी-अपनी बिरादरी के अनुसार समूहबद्ध होते है, अपने-अपने पक्ष की जीत के बारे मे एक दूसरे से शर्त लगाते है। (२) कबीले की परिषद् में प्रत्येक बिरादरी के साखेम और युद्ध-काल के नेता एकसाथ बैठते हैं। दो बिरादरियो के लोग एक दूसरे के आमने-सामने बैठते है, और प्रत्येक वक्ता हर एक बिरादरी के प्रतिनिधियों को दूसरी के प्रतिनिधियों से अलग मानकर सम्बोधित करता है। (३) यदि कबीले के अंदर कोई कत्ल हो गया है, और मारनेवाला तथा मृत व्यक्ति एक बिरादरी के है, तो जिस गोत्र का सदस्य मारा गया है, वह अक्सर अपने

से अपील करता है। ये बिरादरी की परिषद् बुलाते हैं और फिर मिलकर दूसरी बिरादरी से सामूहिक रूप मे बातचीत शुरू करते हैं और उससे कहते हैं कि मामले को निपटाने के लिये वह भी अपनी परिषद् बुलाये। यहा भी बिरादरी अपने शुरू के, यानी मूल गोत्र के, रूप में सामने आती है, और चूंकि वह अपनी सन्तान से, यानी अलग-अलग गोत्रों से अधिक शक्तिशाली होती है, इसलिये ऐसे मामलो में उसके सफल होने की अधिक सम्भावना होती है। (४) किसी बिरादरी के महत्त्वपूर्ण व्यक्तियो के मर जाने पर, दूसरी *बिरादरी अंतिम क्रिया और दफ़नाने आदि की व्यवस्था* करती है और मृत व्यक्ति की बिरादरी के लोग मातम मनानेवालो के रूप मे साथ जाते हैं। यदि कोई साखेम मर जाता है तो उसकी बिरादरी नही, दूसरी बिरादरी इरोक्वा महापरिषद् को सूचना देती है कि अमुक पद ख़ाली हो गया है। (५) साखेम के चुनाव के समय बिरादरी की परिषद् फिर सामने आती है। भ्रात-गोत्र द्वारा चुनाव की मजूरी मानी हुई बात समझी जाती है पर हो सकता है कि दूसरी बिरादरी के गोत्र विरोध करें। ऐसी सूरत मे इस बिरादरी की परिषद् बैठती है और यदि वह भी चुनाव को अस्वीकार करती है, तो चुनाव रद्द घोषित कर दिया जाता है। (६) पहले इरोक्वा लोगो मे कुछ विशेष गुप्त धार्मिक अनुष्ठान हुआ करते थे जिन्हे गोरे लोग medicine-lodges कहते थे। सेनेका क़बीले मे ये अनुष्ठान दो धार्मिक मंडलियां किया करती थी; प्रत्येक बिरादरी के लिये एक अलग मडली होती थी, और नये सदस्यो को उनमे भर्ती करने के लिये उनका विधिपूर्वक संस्कार किया जाता था। (७) यदि, जैसा कि लगभग निश्चित है, विजय के समय[81] त्लासकाला के चारो भागों में जो चार वश (रक्तसम्बद्ध समुदाय) रहते थे, वे चार बिरादरियां थे, तो साबित हो जाता है कि यूनानियों की तरह और जर्मनो के बीच रक्त-सम्बन्धियो के समान समुदायों की भांति, यहा भी बिरादरियां सैनिक टुकड़ियों के रूप मे भी काम करती थी। ये चारो वश जब लड़ने जाते थे, तो हर एक अलग सेना के रूप मे चलता था और उसकी अपनी अलग वर्दी, अलग झंडा और अलग नेता होता था।

जिस प्रकार कई गोत्रों से मिलकर एक बिरादरी बनती है, उसी प्रकार ठेठ रूप मे, कई बिरादरियों से मिलकर एक कबीला बनता है। कई क़बीलों

मे, जो बहुत कमजोर हो जाते है, बीच की कड़ी – बिरादरी – नहीं होती। अमरीका के इंडियन क़बीलों की मुख्य विशेषताएं क्या है?

१. हर कबीले का अपना इलाक़ा और अपना नाम होता था। इस इलाके के अलावा, जहा बस्ती होती थी, हर क़बीले के पास काफ़ी क्षेत्र शिकार करने और मछली मारने के लिये होता था। इसके भी आगे बहुत लम्बी-चौड़ी तटस्थ भूमि होती थी जो दूसरे क़बीले के इलाके तक चली जाती थी। यदि दो कबीलो की भाषाएं मिलती-जुलती होती थीं, तो उनके बीच की यह तटस्थ भूमि विस्तार मे अपेक्षाकृत कम होती थी। जहां दो कबीलो की भाषाओं मे कोई सम्बन्ध नहीं होता था, वहां इस भूमि का विस्तार अपेक्षाकृत अधिक होता था। ऐसी तटस्थ भूमि के उदाहरण हैं: जर्मनों का सरहदी जंगल; वह वीरान इलाक़ा जो सीजर के सुएवी लोगों ने अपने क्षेत्र के चारो ओर बना लिया था; डेनो तथा जर्मनो के बीच का Isarnholt (डेन भाषा मे jarnved, limes Danicus); जर्मन तथा स्लाव लोगों के बीच का सैक्सन जंगल और branibor (स्लाव भाषा मे "रक्षा-जंगल"), जिससे ब्रांडनबर्ग (Brandenburg) नाम निकला है। इन अधूरी और अस्पष्ट सीमाओं से घिरा हुआ यह क्षेत्र क़बीले का सामूहिक क्षेत्र होता था जिसे पड़ोस के क़बीले मानते थे। यदि कोई उसमें घुसने की कोशिश करता था तो क़बीला इस इलाक़े की रक्षा करता था। सीमाओं की अस्पष्टता से प्रायः केवल उसी समय व्यावहारिक कठिनाई पैदा होती थी जब आबादी बहुत बढ़ जाती थी। कबीलों के नाम, मालूम पड़ता है, इतना सोच-समझकर नहीं चुने गये हैं जितना कि संयोग से पड़ गये है। समय बीतने के साथ-साथ अक्सर यह होता था कि कोई कबीला खुद अपने लिये जिस नाम का प्रयोग करता था, पड़ोस के क़बीले उससे भिन्न कोई नाम उसे दे देते थे। उदाहरण के लिये, जर्मन लोगों (die Deutschen) का इतिहास में पहला नाम, जिसकी व्यंजना अत्यन्त व्यापक है, अर्थात् "जर्मन" (Germanen) केल्ट लोगों का दिया हुआ है।

२. हर कबीले की अपनी एक ख़ास बोली होती है। बल्कि सच तो यह है कि क़बीला और बोली बड़ी हद तक सहविस्तारी होते हैं। अमरीका मे उपविभाजन के द्वारा नये क़बीलों और बोलियों का बनना अभी हाल तक जारी था, और अब भी वह एकदम बंद नहीं हो गया होगा। जब दो कमजोर कबीले मिलकर एक हो जाते हैं, तब अपवादस्वरूप कभी-कभी

यह देखने को भी मिलता है कि एक कबीले में दो बहुत घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित बोलिया बोली जाती हैं। अमरीकी कबीलो मे औसतन् २,००० से कम लोग होते हैं। परन्तु चिरोकियो की संख्या लगभग २६,००० है। अमरीका के एक बोली बोलनेवाले इडियनो मे उनकी संख्या सबसे अधिक है।

३. क़बीलो को गोत्रो द्वारा चुने गये साख़ेमों और युद्ध-काल के नेताओं का अभिषेक करने का अधिकार होता है।

४. उन्हे गोत्र की इच्छा के विरुद्ध भी पद से हटा देने का भी अधिकार कबीले को प्राप्त है। साख़ेम और युद्ध-काल के नेता चूकि कबीले की परिषद् के सदस्य होते हैं, इसलिये उनके बारे मे कबीले के इन अधिकारों के लिये किसी स्पष्टीकरण की आवश्यकता नही है। जहा कुछ कबीलो का महासंघ कायम हो जाता है और इन कबीलो के प्रतिनिधि एक सघीय परिषद् मे जमा होते हैं, वहा उपरोक्त अधिकार परिषद् को सौप दिये जाते हैं।

५. हर क़बीले की समान धार्मिक धारणायें (पौराणिक कथाएं) और पूजा-पाठ की रीति होती है।

"बर्बर लोगों के ढंग पर अमरीकी इडियन भी धार्मिक लोग थे।"[82]

उनकी पौराणिक कथाओ की अभी तक कोई भी समीक्षात्मक खोज नही हुई है। उन्होने अपने धार्मिक विचारो को व्यक्ति-रूप – तरह-तरह के भूतप्रेत या देवी-देवताओ का रूप – दिया था, परन्तु बर्बर युग की निम्न अवस्था मे, जिसमे वे रह रहे थे, उन्होने अभी उन्हें आकार, यानी मूर्त्तियो का रूप नही दिया था। यह प्रकृति और महाभूतो की पूजा थी, जो धीरे-धीरे बहुदेववाद का रूप धारण कर रही थी। अलग-अलग कबीलों के अपने नियमित त्योहार होते थे जिनमे विशेष ढग से, खासकर नृत्य और खेलो के द्वारा, पूजा की जाती थी। विशेष रूप से नृत्य सभी धार्मिक अनुष्ठानो के आवश्यक अंग होते थे; हर कबीला अपने नृत्य अलग करता था।

६. हर कबीले की अपनी कबायली परिषद् होती थी जो कबीले के आम मामलो का निर्णय करती थी। इस परिषद् मे अलग-अलग गोत्रो के सभी साखेम और युद्ध-काल के नेता होते थे। ये गोत्रों के सच्चे प्रतिनिधि होते थे, क्योकि इन्हें कभी भी अपने पद से अलग किया जा सकता था।

परिषद् की बैठक खुले रूप से होती थी। बीच मे परिषद् बैठती थी, उसके चारो ओर क़बीले के बाकी सदस्य बैठते थे और उन्हें बहस मे भाग लेने और अपनी राय देने का हक होता था। फैसला परिषद् करती थी। आम तौर पर बैठक के समय मौजूद हर आदमी को परिषद् के सामने अपनी बात कहने का अधिकार होता था। यहां तक कि स्त्रियां भी किसी को अपना प्रवक्ता बनाकर उसके जरिये अपनी बात परिषद् के सामने रख सकती थी। इरोक्वा लोगों मे परिषद् को अपना अंतिम फैसला एकमत से करना पडता था। जर्मन लोगों के बहुत-से मार्क-समुदायो के फैसले भी इसी प्रकार होते थे। दूसरे कबीलों के साथ सम्बन्ध रखने की जिम्मेदारी कबायली परिषद् की ही होती थी। वह दूसरे कबीलों के दूतों का स्वागत करती थी और उनके पास अपने दूत भेजती थी। वह युद्ध की घोषणा करती थी और शांति-संधि करती थी। युद्ध छिड जाने पर आम तौर पर वे ही लोग लड़ने के लिये भेजे जाते थे जो स्वेच्छा से इसके लिये तैयार होते थे। सिद्धान्ततः तो एक क़बीले का उन तमाम कबीलो से युद्ध का सम्बन्ध होता था जिनसे उसकी बाकायदा शांति-संधि नही हो गयी हो। ऐसे शत्रुओ के खिलाफ प्रायः कुछ विशिष्ट योद्धा सैनिक अभियान संगठित करते थे। वे युद्ध-नृत्य करते थे; जो कोई भी नृत्य में शामिल हो जाता था, उसके बारे में समझा जाता था कि उसने अभियान में भाग लेने के अपने निश्चय की घोषणा कर दी है। तब तुरन्त एक दस्ता तैयार करके रवाना कर दिया जाता था। कबायली इलाक़े पर कोई हमला होता था तो उस वक्त भी इसी प्रकार मुख्यतः स्वयंसेवक उसकी रक्षा करते थे। ऐसे दस्तों के रवाना होने और लौटने के समय सार्वजनिक उत्सव किया जाता था। ऐसे अभियानों के लिये कबायली परिषद् से इजाज़त लेना जरूरी नही होता था। न कोई इजाजत लेता था, न परिषद् इजाज़त देती थी। ये हूबहू जर्मन खिदमतगार सैनिकों के उन निजी युद्ध-अभियानों के समान होते थे जिनका टैसिटस ने वर्णन किया है।[83] अन्तर केवल यह था कि जर्मनों में खिदमतगार सैनिको की जमात कुछ अधिक स्थायी रूप धारण कर चुकी थी; वह शान्ति-काल में संगठित उस केन्द्र-बिन्दु का काम करती थी जिसके चारो ओर युद्ध-काल में और बहुत-से स्वयंसेवक आकर संगठित हो जाते थे। इन फौजी दस्तो मे लोगों की संख्या कभी बहुत ज्यादा नही होती थी। इंडियनों के अत्यंत महत्त्वपूर्ण अभियानो मे भी, उनमें भी,,

जिनमे काफी बड़ी दूरियां तय की जाती थी, सैनिको की संख्या नगण्य ही होती थी। किसी महत्त्वपूर्ण महिम के लिये जब ऐसे कई दस्ते इकट्ठा होते थे, तो हर दस्ता सिर्फ अपने नेता का हुक्म मानता था। युद्ध योजना की एकसूत्रता कमोवेश इन नेताओं की परिषद् द्वारा सुनिश्चित होती थी। चौथी शताब्दी में ऊपरी राइन क्षेत्र के निवासी एलामान्नी लोग भी इसी तरह अपने युद्ध का संचालन करते थे, जैसा कि एमियानस मार्सेलिनस[५४] के वर्णन से स्पष्ट है।

७. कुछ कबीलो में एक प्रधान मुखिया भी होता है, परन्तु उसे बहुत कम अधिकार प्राप्त होते हैं। वह साखेमो में से ही एक होता है। जब कोई ऐसी समस्या उठ खड़ी होती है जिसका तुरन्त कोई फ़ैसला करना जरूरी होता है, तब आरज़ी तौर से प्रधान मुखिया फैसला कर देता है, जो तब तक लागू रहता है जब तक कि कबायली परिषद् बैठकर कोई अन्तिम फ़ैसला नही कर देती। यह कार्यकारी अधिकारी नियुक्त करने की ढीली-ढाली और जैसा कि बाद में मालूम हुआ, आम तौर पर निष्फल और अधूरी कोशिश थी। वास्तव में, जैसा कि पाठक आगे देखेंगे, हमेशा नहीं, तो प्रायः हर मामले में क़बीले का सर्वोच्च सेनानायक ही कार्यकारी अधिकारी बन बैठा।

अधिकतर अमरीकी इडियन कभी कबायली सगठन की अवस्था से आगे नही बढ़ पाये। थोड़े-थोड़े लोगो के अनेक कबीले होते थे, जो एक दूसरे से कटे हुए रहते थे, क्योंकि उनके बीच बड़े-बड़े सीमान्त प्रदेश होते थे। उनमे सदा लड़ाइयां चलती रहती थी, जिनसे वे कमजोर बने रहते थे। परिणाम यह था कि थोड़े-से लोग एक बहुत विशाल इलाक़े मे बिखरे हुए थे। कही कोई अस्थायी संकट आ जाता था तो उसका सामना करने के लिये रक्त-सम्बन्धी क़बीलो मे सहयोग हो जाता था, पर संकट के दूर होते ही यह मोर्चा फिर बिखर जाता था। परन्तु कुछ ख़ास इलाकों मे ऐसे कबीलों ने, जो शुरू मे रक्त-सम्बन्धी थे पर बाद मे अलग हो गये थे, स्थायी संघ बनाकर अपनी एकता फिर से कायम कर ली। इस प्रकार इन कबीलो ने राष्ट्र गठन की ओर पहला क़दम उठाया। अमरीका मे ऐसे संघ का सबसे विकसित रूप हमें इरोक्वा लोगो मे मिलता है। उनका आदिदेश मिसीसिपी नदी के पश्चिम में था। वहा वे शायद महान डैकोटा परिवार की एक शाखा के रूप मे रहते थे। अपने आदिदेश को छोडने के

बाद और बहुत दिनों तक इधर-उधर भटकने के बाद ये लोग उस इलाके में बस गये जो आजकल न्यूयार्क राज्य कहलाता है। ये लोग पांच क़बीलों में बंटे हुए थे: सेनेका, कैयूगा, ओनोनडेगा, ओनीडा और मोहौक। इन लोगो का भोजन था: मछली, शिकार में मारे गये जानवरो का मांस और पिछड़े ढंग की बागवानी की उपज। ये लोग प्राय: बाड़ों से घिरे गांवों मे रहते थे। उनकी संख्या कभी २०,००० से ज्यादा नही हुई। उनके कई मिले-जुले गोत्र थे जो पांचों क़बीलों में पाये जाते थे। ये एक ही भाषा की कई बोलिया बोलते थे जिनका आपस में निकट का सम्बन्ध होता था। वे साथ लगे हुए इलाके में रहते थे जो पाच क़बीलों के बीच बंटा हुआ था। चूंकि इस इलाके पर उन्होंने हाल में ही कब्ज़ा किया था, इसलिये जिन लोगों को उन्होंने वहां से हटाया था, उनके मुकाबले में इन क़बीलों का आपस मे हस्ब मामूल सहयोग स्वाभाविक था। अधिक से अधिक पन्द्रहवी सदी के शुरू तक, इस सहयोग ने बाकायदा एक "स्थायी लीग", एक महासंघ का रूप धारण कर लिया था। इस महासंघ ने अपनी नव-प्राप्त शक्ति को महसूस करते ही तुरंत आक्रमणकारी रुख़ अपना लिया। अपनी शक्ति के शिखर पर–अर्थात् १६७५ के लगभग तक–उसने आसपास के काफी बड़े इलाकों को जीत लिया था, और वहां के निवासियों को या तो भगा दिया था, या उन्हें ख़िराज देने पर मजबूर कर दिया था। अमरीका के आदिवासियों में, जो बर्बर युग की निम्न अवस्था से नही निकल पाये थे (यानी मैक्सिको, न्यू मैक्सिको[85] और पेरू के आदिवासियों को छोड़कर), सामाजिक संगठन का सबसे उन्नत स्वरूप इरोक्वा महासंघ के रूप में मिलता था। इस महासंघ की बुनियादी विशेषताएं ये थी:

१. पूर्ण समानता और सभी अन्दरूनी कबायली मामलों में पूर्ण स्वाधीनता के आधार पर पाच रक्तसम्बद्ध कबीलों का सदा के लिये संश्रय। यह रक्त-सम्बन्ध ही महासंघ का असली आधार था। पांच कबीलों मे से तीन पिता-कबीले कहलाते थे और एक दूसरे के भाई समझे जाते थे; बाकी दो पुत्र-क़बीले कहलाते थे तथा इसी प्रकार वे भी आपस मे भाई समझे जाते थे। सबसे पुराने तीन गोत्रों के लोग अभी भी पांचों कबीलों में पाये जाते थे। दूसरे तीन गोत्रों के सदस्य केवल तीन कबीलों में पाये जाते थे। इन गोत्रों मे से प्रत्येक के सदस्य पाचों क़बीलों में भाई-भाई समझे जाते थे। हर कबीले मे केवल बोली का थोड़ा भेद पाया जाता था और उनकी

एक सी भाषा इस बात की सूचक और सबूत थी कि पाचो क़बीले एक ही वंश के हैं।

२. महासंघ के अंग के रूप में एक संघ-परिषद् होती थी जिसके सदस्य पचास साख़ेम थे। इन पचासों का पद और प्रतिष्ठा समान थी। महासंघ से सम्बन्धित सभी मामलो में अन्तिम फैसला यह परिषद् करती थी।

३. जिस समय महासंघ बना, उस समय ये पचास साखेम नये पदाधिकारियों के रूप मे—इन पदों की महासंघ के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर सृष्टि की गयी थी—विभिन्न कबीलो और गोत्रो मे बांट दिये गये थे। जब किसी पदाधिकारी का स्थान खाली हो जाता था, तो सम्बन्धित गोत्र फिर से उसके लिये चुनाव कर लेता था; गोत्र उसे किसी भी समय पद से हटा सकता था। परन्तु उसका अभिषेक करने का अधिकार संघ-परिषद् के हाथ में रहता था।

४. ये संघीय साखेम अपने-अपने कबीलो मे भी साख़ेम थे, और उनमें से हर एक को अपने कबीले की परिषद् में भाग लेने और वोट देने का अधिकार था।

५. संघ-परिषद् के लिये आवश्यक था कि वह सभी फैसले सर्वसम्मति से करे।

६. वोट कबीलेवार ली जाती थी, यानी हर क़बीले को, और संघ-परिषद् के हर कबीले के सदस्य को एकमत होना पड़ता था, तब कहीं जाकर ऐसा फैसला होता था जिसको मानना सब के लिये जरूरी होता था।

७. पांचों कबीलों की परिषदों में से कोई भी संघ-परिषद् की बैठक बुलवा सकती थी, परन्तु संघ-परिषद् को स्वयं अपनी बैठक बुलाने का कोई अधिकार न था।

८. संघ-परिषद् की बैठक जनता की आम सभा के समक्ष होती थी। प्रत्येक इरोक्वा को बोलने का अधिकार था; फ़ैसला सिर्फ परिषद् करती थी।

९. महासंघ का कोई अधिकृत अध्यक्ष, कोई प्रमुख कार्याधिकारी नहीं होता था।

१०. परन्तु उसके दो सर्वोच्च युद्ध-काल के नेता अवश्य होते थे, जिनकी समान शक्ति और समान अधिकार होते थे (स्पार्टावासियों के दो "राजा" और रोम मे दो कौंसिल)।

यही वह पूरा समाज-विधान था जिसके मातहत रहते हुए इरोक्वा लोगो को चार सौ साल से अधिक हो गये थे और आज भी वे उसी के मातहत रहते है। मौर्गन ने इस समाज-विधान का जो वर्णन किया है, उसे मैंने यहा काफी विस्तार के साथ दिया है, क्योकि हमें उससे एक ऐसे समाज-संगठन का अध्ययन करने का अवसर मिलता है, जिसमें अभी तक राज्य का अस्तित्व न था। राज्य के लिये सम्बन्धित तमाम लोगों से अलग एक विशेष सार्वजनिक प्राधिकार पूर्वापेक्षित है। इसलिये मारेर ने तब बड़ी सही समझ का परिचय दिया था, जब उन्होंने जर्मनों के मार्क-विधान को बुनियादी तौर पर एक शुद्ध सामाजिक संस्था माना था और कहा था कि राज्य से इसमें बुनियादी भेद है, गोकि आगे चलकर यही मोटे तौर पर उसकी बुनियाद बना। अतएव अपनी सभी रचनाओं मे मारेर ने इस बात की खोज की है कि *मार्कों, गावों, जागीरों और क़सबो के पुराने विधानों* मे से, और उनके साथ-साथ, धीरे-धीरे कैसे सार्वजनिक प्राधिकार का विकास हुआ है।[86] उत्तरी अमरीकी इंडियनों से हमें पता चलता है कि एक कबीला, जो शुरू में संयुक्त था, धीरे-धीरे किस तरह एक विशाल महाद्वीप मे फैल गया; किस प्रकार कबीलों के विभाजन के परिणामस्वरूप जातियां, क़बीलो के पूरे समूह बन गये; किस प्रकार भाषाएं इतनी बदल गयी कि न सिर्फ एक भाषा बोलनेवाला दूसरी भाषा को नही समझता था, बल्कि उनकी प्राचीन एकता का प्रत्येक चिह्न ग़ायब हो गया; किस प्रकार इसके साथ-साथ कबीलो के गोत्र भी कई भागों मे बंट गये; किस प्रकार पुराने मातृ-गोत्र विरादरियो के रूप मे क़ायम रहे और किस प्रकार इन सबसे प्राचीन गोत्रों के नाम बहुत दिनो से अलग-अलग और बड़ी दूरी पर रहनेवाले कबीलो मे अब भी पाये जाते है—मिसाल के लिये "भालू" और "भेड़िया" नाम के गोत्र अब भी अमरीकी आदिवासियों के अधिकतर क़बीलो में मिलते हैं। ऊपर हमने जिस समाज-विधान का वर्णन किया है, वह आम तौर पर इन सभी क़बीलो पर लागू होता है। अन्तर केवल इतना है कि उन मे से बहुत-से कबीले सम्बन्धी कबीलों के महासंघ बनाने की अवस्था तक नही पहुंच सके।

परन्तु साथ ही हमने यह भी देखा कि जहां एक बार गोत्र को समाज की इकाई मान लिया गया, वहां उस इकाई से गोत्रों, विरादरियों और कबीलो की पूरी व्यवस्था मानो अपने आप और लाज़िमी तौर पर विकसित

हो जाती है। यह विकास लाजिमी होता है, क्योंकि यही स्वाभाविक विकास है। ये तीनों समूह रक्त-सम्बन्ध के विभिन्न स्तरो का प्रतिनिधित्व करते हैं; उनमें से हर एक अपने मे पूर्ण होता है और स्वयं अपनी व्यवस्था और प्रबंध करता है, परन्तु साथ ही अन्य सब संगठनों का अनुपूरक भी होता है। इनके हाथों में जो मामले होते है, उनमें बर्बर युग की निम्न अवस्था के लोगों के सभी सार्वजनिक मामले आ जाते हैं। इसलिये, जहा कही भी किसी जाति की सामाजिक इकाई के रूप में गोत्र दिखायी पड़े, वहा हम क़बीले के उपरोक्त ढंग का सगठन पाने की भी आशा कर सकते हैं। और जहां कही काफ़ी मूल सामग्री मौजूद है, जैसा कि, मिसाल के लिये, यूनानियों और रोमन लोगों के विषय में मौजूद है, वहां हम ऐसा ही संगठन पायेंगे। यही नही, जहां कहीं सामग्री कम पड़ जाती हैं, वहां हम यह विश्वास रख सकते हैं कि अमरीकी समाज-विधान से तुलना करने पर हम अपनी बड़ी से बड़ी कठिनाइयों को हल कर सकेंगे और बड़े से बड़े सन्देहों और उलझनों को दूर कर सकेंगे।

और शिशुवत सीधा-सादा यह गोत्र-संगठन सचमुच एक विलक्षण चीज है! न फ़ौज है, न जेन्दार्म और न पुलिस; न सामन्त हैं और न राजा, न गवर्नर है, न प्रीफ़ेक्ट और न न्यायाधीश; न अदालतें हैं और न जेलख़ाने, और तब भी सब काम बड़े मजे से चलता रहता है। कोई झगड़ा उठ खड़ा होता है तो उससे सम्बन्धित सभी लोग – गोत्र या क़बीले या कई अलग-अलग गोत्रों के लोग – मिलकर उसे निपटा देते हैं। रक्त-प्रतिशोध भी, केवल उस समय लिया जाता है जब और किसी तरह झगड़ा नहीं निपटता, इसलिये उसकी नौबत बहुत कम आ पाती है। हमारा मृत्यु-दंड इसी चीज का सभ्य रूप है – जिसमें सभ्यता की अच्छाइयां भी हैं और बुराइयां भी। उस समय लोगों को आज से कही अधिक मामलों को मिलकर तय करना पड़ता था। कई-कई परिवार एकसाथ मिलकर और सामुदायिक ढंग से घर चलाते थे, जमीन पूरे क़बीले की सम्पत्ति होती थी, अलग-अलग घरों को केवल छोटे-छोटे बगीचे अस्थायी रूप से मिलते थे। बहुत सारे काम लोग मिलकर करते थे, फिर आजकल के जैसे लम्बे-चौड़े और जटिल प्रशासन-मशीनरी की रत्ती बराबर आवश्यकता नहीं होती थी। जिनका जिस मामले से सम्बन्ध होता था, वे ही उसका फ़ैसला कर देते थे और अधिकतर मामले तो सदियों पुराने रीति-रिवाजों के अनुसार अपने

ग्राप निपट जाते थे। किसी का ग़रीब या ज़रूरतमन्द होना असम्भव था—सामुदायिक कुटुम्ब और गोत्र को भली-भांति मालम था कि बूढ़ों, बीमार लोगों और युद्ध मे अपंग हो गये व्यक्तियों के प्रति उनका क्या कर्त्तव्य है। सब स्वतंत्र और समान थे—स्त्रियां भी। अभी समाज मे न दासों के लिये स्थान था, न ही आम तौर पर, दूसरे क़बीलों को अपने अधीन रखने की गुंजाइश थी। जब इरोक्वा लोगों ने १६५१ के लगभग, एरी लोगों को और "तटस्थ जाति"[87] को जीता, तो उन्होंने उन्हें अपने महासंघ में समान सदस्य की हैसियत से शामिल हो जाने के लिये आमंत्रित किया। जब पराजित कबीलो ने इस प्रस्ताव को मानने से इनकार किया, सिर्फ तभी उन्हें अपने इलाको से खदेड़ दिया गया। और यह समाज कैसे नर-नारी पैदा करता था, यह इस बात से प्रगट होता है कि जो गोरे लोग इंडियनो के सम्पर्क में थे, जो अभी भ्रष्ट नही हुए थे, उन सभी ने इन बर्बर लोगो की आत्म-गरिमा, सीधे और सरल स्वभाव, चरित्र-बल और वीरता की भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

इस वीरता की अनेक मिसालें अभी हाल में हमने अफ़्रीका में देखी हैं। कुछ साल पहले ज़ूलू काफिरो ने और दो-एक महीने पहले नूबियनों ने—इन दोनों क़बीलों में गोत्र-संगठन अभी लुप्त नही हुआ है—वह काम करके दिखाया जो कोई यूरोपीय सेना नही कर सकती थी।[88] उनके पास हथियारों के नाम पर केवल बल्लम और भाले थे। तोप-बन्दूक या तमंचे को वे जानते तक न थे। दूसरी ओर से ब्रीचलोडर बन्दूकें दनादन गोलिया बरसा रही थीं। पर ये बहादुर बराबर बढ़ते गये, यहा तक कि वे अंग्रेज पैदल सेना की संगीनों की नोकों पर जा पहुंचे। और उस अंग्रेज़ सेना को, जो व्यूह बनाकर लड़ने में दुनिया में अपना सानी नहीं रखती थी, उन्होंने अस्त-व्यस्त कर दिया और कई बार तो पीछे हटने पर मजबूर किया, बावजूद इस बात के कि दुश्मन की तुलना में उनके पास मामूली हथियार भी नहीं थे, न उनके यहां सैनिक सेवा नाम की कोई चीज कभी रही थी, और न ही उन्होंने कभी फौजी ट्रेनिंग ली थी। उनकी क्षमता और सहनशीलता अंग्रेज़ों की इस शिकायत से प्रगट होती है कि काफिर घोड़े से भी ज्यादा तेज चल सकता है और चौबीस घंटे में इससे ज्यादा फ़ासला तय कर सकता है। जैसा कि एक अंग्रेज चित्रकार ने कहा है, इन लोगों की छोटी-सी-छोटी मांस-पेशिया इस तरह तनी रहती है मानो इस्पात की ऐंठी हुई डोरियां

वर्ग-भेदों के पैदा होने से पहले ऐसी थी मानवजाति और मानव समाज। और यदि हम उनकी हालत की आज के अधिकतर सभ्य लोगों की हालत से तुलना करें, तो हम पायेंगे कि वर्त्तमान सर्वहारा तथा छोटे किसान और प्राचीन काल के किसी गोत्र के स्वतंत्र सदस्य के बीच एक बहुत चौड़ी और गहरी खाई है।

यह तसवीर का एक पहलू है। परन्तु इसको देखने के साथ-साथ हमें यह न भूलना चाहिये कि इस संगठन का मिट जाना अवश्यम्भावी था। उसने कभी कबीले से आगे विकास नहीं किया। क़बीलों का महासंघ बनने का मतलब, जैसा हम आगे चलकर देखेंगे और जैसा दूसरों को जीतने और अपने अधीन बनाने के इरोक्वा लोगों के प्रयत्नों से भी प्रकट होता है, यह था कि इस संगठन का पतन आरम्भ हो गया। कबीले के बाहर जो कुछ था, वह क़ानून के बाहर था। जहां बाकायदा शान्ति-सधि नहीं हो गयी थी, वहां क़बीलों के बीच जंग चलती रहती थी। और यह जग उस बेरहमी के साथ चलायी जाती थी जो मनुष्य को दूसरे सब पशुओं से अलग करती है, और जो बाद में केवल स्वार्थवश कुछ कम की गयी। गोत्र-संगठन जब खूब पनप और फूल-फल रहा था, जैसा कि हमने उसे अमरीका में पनपते देखा है, तब उसका लाज़िमी तौर पर यह मतलब होता था कि उत्पादन-प्रणाली बहुत ही पिछड़ी हुई है, बहुत थोड़ी आबादी एक लम्बे-चौड़े इलाके में फैली हुई है, और इसलिये मनुष्य पर बाह्य *प्रकृति का लगभग पूर्ण आधिपत्य है; प्रकृति उसे परायी, विरोधी और* अज्ञेय प्रतीत होती है। प्रकृति का यह आधिपत्य उसके बचकाने धार्मिक विचारों में प्रतिबिम्बित होता है। अपने से और बाहरी लोगों से मनुष्य के सम्बन्ध पूरी तरह क़बीले तक ही सीमित थे। क़बीला, गोत्र और उनकी प्रथाएं पवित्र और अनुल्लंघनीय थीं; वे सर्वोच्च शक्ति थीं जिन्हें स्वयं प्रकृति ने प्रतिष्ठित किया था। व्यक्ति की भावनाएं, विचार और कर्म— सब पूरी तरह इस शक्ति के *अधीन* थे। इस युग के लोग हमें भले ही बड़े जोरदार और प्रभावशाली लगते हों, पर वे सारे एक जैसे थे। मार्क्स के शब्दों में वे अभी आदिम समुदाय की नाभिरज्जु से बंधे हुए थे। इन आदिम समुदायों की शक्ति का तोड़ना आवश्यक था, और वह टूटी। परन्तु वह ऐसे कारणों से टूटी जो हमें शुरू से ही पतन के चिह्न प्रतीत होते हैं, और प्राचीन गोत्र-समाज की सरल नैतिक महानता के नष्ट होने की सूचना

देते हैं। घृणित लोभ, पाशविक काम-वासना, ओछी लोलुपता, सामूहिक सम्पत्ति की स्वार्थपूर्ण लूट-खसोट—ऐसी ही कदर्थतम भावनाएं नये, सभ्य समाज, वर्ग-समाज को रंगमंच पर लाती हैं। चोरी, बलात्कार, छल-कपट और विश्वासघात जैसे घृणित से घृणित तरीकों से पुराने, वर्ग-विहीन गोत्र-समाज की जड़ खोदी जाती है और उसे ढहाया जाता है। पिछले ढाई हजार वर्षों से जो नया समाज कायम है, उसमें विशाल बहुसंख्या, शोषित और दलित जनता के मत्थे थोड़े-से लोगों के फूलने-फलने के अलावा और कुछ नहीं हुआ है। और आज तो ऐसा हमेशा से ज्यादा हो रहा है।

४

यूनानी गोत्र

यूनानी, और पेलासजियन तथा उसी कबीले से उत्पन्न अन्य जन-जातिया प्रागैतिहासिक काल से उसी क्रम में संगठित थी जिसमे अमरीकी इंडियन संगठित थे: वे भी गोत्र, बिरादरी, क़बीले और क़बीलो के महासघ मे संगठित थे। सम्भव था कि कही बिरादरी न हो, जैसे डोरियनो में नही थी, या हर जगह क़बीलों का महासंघ पूरी तरह विकसित न हुआ हो, परन्तु समाज की इकाई हर जगह गोत्र था। जिस समय यूनानियों ने इतिहास मे प्रवेश किया, उस समय वे सभ्यता के द्वार पर खड़े थे। यूनानियो और उपरोक्त अमरीकी क़बीलों के बीच विकास के लगभग दो पूरे बड़े युग पड़ते थे, क्योकि वीर-काल के यूनानी इरोक्वा लोगो से इतने ही आगे थे। इस कारण यूनानी गोत्रो का वह आदिम रूप नही रह गया था जो हम इरोक्वा गोत्रों मे देखते हैं। यूथ-विवाह की छाप काफी धुधली पड़ती जा रही थी। मातृ-सत्ता की जगह पितृ-सत्ता स्थापित हो गयी थी; उसके कारण नयी बढ़ती हुई निजी धन-सम्पदा ने गोत्र-संघटन मे पहली दरार डाल दी थी। पहली दरार के बाद स्वभावत. दूसरी दरार पड़ी: पितृ-सत्ता के क़ायम हो जाने के बाद प्रचुर धन की उत्तराधिकारिणी की सम्पदा, उनके विवाह-सम्बन्ध के कारण, उसके पति को ही मिलती, अर्थात् वह अन्य गोत्र में चली जाती। इस तरह समस्त गोत्रीय कानून का आधार भग कर दिया गया और ऐसी सूरत मे लड़की को न सिर्फ़ अपने गोत्र के भीतर विवाह करने की इजाज़त दे दी गयी, बल्कि उसके लिये ऐसा करना अनिवार्य बना दिया गया, ताकि यह सम्पदा गोत्र के भीतर ही रहे।

ग्रोट की किताब 'यूनान का इतिहास'[89] के अनुसार, एथेंस के गोत्र को विशेष रूप से निम्नलिखित तत्वों ने एकता के सूत्र में बांध रखा था:

१. समान धार्मिक अनुष्ठान, और एक विशेष देवता के सम्मान में पुरोहितों को मिले हुए विशेषाधिकार। यह देवता गोत्र का आदि-पुरुष समझा जाता था और इस हैसियत से उसका एक विशेष गोत्र-नाम होता था।

२. गोत्र का एक क़ब्रिस्तान (इस सम्बन्ध में डेमोस्थेनीज़ का 'इयुबुलिडीज़' भी देखिये[90])।

३. विरासत के पारस्परिक अधिकार।

४. गोत्र के किसी सदस्य के विरुद्ध बल-प्रयोग होने पर एक दूसरे की सहायता, रक्षा और समर्थन करना सबका कर्त्तव्य।

५. कुछ सूरतों में, विशेषकर बे मां-बाप की लड़कियों और उत्तराधिकारिणियों के मामले में गोत्र के भीतर विवाह करने का पारस्परिक अधिकार और बाध्यता।

६. कम से कम कुछ जगहों पर तो अवश्य ही सामूहिक मिलकियत तथा अपने एक आर्कोन (मजिस्ट्रेट) और कोषाध्यक्ष का होना।

बिरादरी मे, जिसमें कई गोत्र शामिल होते थे, इतनी घनिष्ठता नही होती थी। पर यहां भी हम इसी प्रकार के पारस्परिक अधिकार और कर्त्तव्य पाते हैं। विशेष रूप से यहां भी पूरी बिरादरी सामूहिक रूप से कुछ विशेष धार्मिक अनुष्ठानों में भाग लेती थी और किसी बिरादर के मारे जाने पर उसे उसकी मौत का बदला लेने का अधिकार होता था। इसके अलावा एक क़बीले की सभी बिरादरियां समय-समय पर एक मजिस्ट्रेट की अध्यक्षता मे कुछ सामूहिक पवित्र अनुष्ठान किया करती थी। यह मजिस्ट्रेट फीलोबेसिलियस (कबायली मजिस्ट्रेट) कहलाता था और उसे कुलीनों (इयुपैट्रिडीज़) में से चुना जाता था।

ग्रोट ने यह लिखा है। मार्क्स ने इसमें इतना जोड़ दिया है: "यूनानी गोत्र मे हम साफ़-साफ जांगल लोगों को (मिसाल के लिये इरोक्वा लोगों को) देख सकते हैं।"[91] कुछ और खोज करने पर यह मूल जांगल रूप और भी स्पष्ट रूप में दिखायी पड़ने लगता है।

कारण कि यूनानी गोत्र मे ये विशेषताएं और होती हैं:

७. पितृ-सत्ता के अनुसार वंश का चलना।

८. उत्तराधिकारिणियों को छोड़कर, बाकी सब के लिये गोत्र के भीतर विवाह करने की मनाही। यह अपवाद, और ऐसी सूरत में गोत्र के भीतर ही विवाह करने का आदेश, स्पष्ट रूप में सिद्ध करते है कि पुराना नियम अब भी कायम है। यह बात इस सर्वमान्य नियम से और स्पष्ट हो जाती है कि स्त्री विवाह करने पर अपने गोत्र की धार्मिक रीतियों को त्याग देती थी और अपने पति के गोत्र की धार्मिक रीतियों को स्वीकार कर लेती थी। साथ ही पत्नी पति की बिरादरी की सदस्या हो जाती थी। इस नियम से, तथा डिकिआरकीज[92] के एक प्रसिद्ध उद्धरण से सिद्ध हो जाता है कि नियम गोत्र के बाहर ही विवाह करने का था। 'चैरीक्लीज़' में बेकर सीधे-सीधे यह मानकर चलते हैं कि किसी को भी अपने गोत्र के भीतर विवाह करने की इजाज़त नहीं थी।[93]

९. गोत्र को अधिकार था कि चाहे तो वह किसी बाहरी आदमी को भी अपना सदस्य बना ले। यह कार्य उसे किसी परिवार का सदस्य बनाकर, परन्तु सार्वजनिक समारोह के द्वारा सम्पन्न होता था। लेकिन ऐसा अपवादस्वरूप ही होता था।

१०. गोत्रों को अपने मुखियाओं को चुनने और बर्खास्त करने का अधिकार था। हम यह जानते हैं कि हर गोत्र का एक आर्कोन होता था; परन्तु यह कहीं नहीं लिखा गया है कि यह पद कुछ विशेष परिवारों के लोगों को ही वंशानुक्रम से मिलता था। बर्बर युग के अन्त तक सदा इसी की अधिक सम्भावना रहती है कि आनुवंशिक पद न होंगे, क्योंकि वे उन अवस्थाओं से मेल नहीं खा सकते जिनके अंतर्गत गोत्र में अमीर और ग़रीब के बिलकुल बराबर अधिकार होते हैं।

ग्रोट ही नहीं, नियूहर, मोम्मसेन और प्राचीन काल के अन्य इतिहासकार भी गोत्र की समस्या को सुलझाने में असमर्थ रहे थे। इन इतिहासकारों ने गोत्र की बहुत-सी विशेषताओं को सही देखा, परन्तु उन्होंने गोत्र को सदा परिवारों का समूह समझा, और इसलिये उसकी प्रकृति और उत्पत्ति को समझना उनके लिये असम्भव हो गया। गोत्र-व्यवस्था में परिवार संगठन की इकाई न तो कभी था और न हो सकता था, क्योंकि पति-पत्नी आवश्यक रूप से दो भिन्न गोत्रों के सदस्य होते थे। पूरा गोत्र एक बिरादरी का अंश होता था। बिरादरी कबीले का हिस्सा होती थी। परन्तु परिवार का आधा भाग पति के गोत्र का होता था और आधा—पत्नी के।

राज्य भी सार्वजनिक कानून में परिवार को नहीं मानता था, आज भी परिवार को केवल दीवानी क़ानून मे मान्यता मिली हुई है। फिर भी, आज तक का समस्त लिखित इतिहास इसी बेतुकी धारणा पर चलता है– और अठारहवीं सदी मे तो इसे एक अनुल्लंघनीय सिद्धान्त मान लिया गया– कि एकनिष्ठ व्यक्तिगत परिवार ही, जो सभ्यता से ज्यादा पुरानी संस्था नहीं है, वह केन्द्र-बिन्दु है, जिसके चारो ओर समाज और राज्य-सत्ता ने धीरे-धीरे स्थायी रूप धारण किया है।

मार्क्स ने इस विषय में लिखा है: "श्री ग्रोट कृपा करते इस बात को और भी टाक ले कि यूनानियो का विचार गोकि यह था कि उनके गोत्रो का पुराण-कथाओ के देवी-देवताओं से जन्म हुआ है, परन्तु वास्तव मे, गोत्र पुराण-कथाओं से, और उनके देवी-देवताओं और अर्ध-देवताओं से अधिक पुराने थे, *जिन्हें स्वयं गोत्रों ने ही पैदा किया था।*"[94]

मॉर्गन ग्रोट को एक विख्यात और असन्दिग्ध गवाह के रूप मे उद्धृत करना पसन्द करते है। वह आगे बताते है कि एथेंस के प्रत्येक गोत्र का एक नाम होता था, यह संज्ञा उसके ख्यात पूर्वज के नाम से प्राप्त होती थी। वह यह भी बताते है कि सामान्य नियम के अनुसार सोलन के काल के पहले और उसके बाद किसी आदमी के बिन वसीयत किये मर जाने पर उसकी सम्पत्ति उसके गोत्र के सदस्यों (gennêtes) को मिलती थी। यदि किसी आदमी की हत्या हो जाती थी तो पहले उसके रिश्तेदारो का, फिर उसके गोत्र के सदस्यों का और अन्त में, उसकी बिरादरी के सदस्यो का यह अधिकार और कर्त्तव्य होता था कि वे अपराधी पर अदालत में मुकदमा चलायें:

> "एथेंस के अति-प्राचीन क़ानूनो के बारे मे हम जो कुछ जानते हैं, वह सब गोत्रों और बिरादरियों के विभाजन पर आधारित है।"[95]

"तोतारटंत मे पूरे पर ज्ञान में अधूरे कूपमंडूकों" (मार्क्स)[96] के लिये समान पूर्वजों से गोत्रों की उत्पत्ति एक ऐसी पहेली बनी हुई है कि वे सिर पटक-पटककर रह गये है, पर उसे समझ नही पाये हैं। चूकि इन लोगो का दावा है कि इस प्रकार के पूर्वज केवल कल्पना की उपज हैं, इसलिये स्वभावतः वे यह समझाने में पूर्णतया असमर्थ है कि गोत्र कैसे एक दूसरे से अलग तथा भिन्न, और शुरू में पूरी तरह असम्बद्ध परिवारों से विकसित

हुए। लेकिन किसी न किसी प्रकार यह विकास दिखलाना उनके लिये जरूरी था, अन्यथा यह बात स्पष्ट नही होती थी कि गोत्र क्यों बने। इसलिये वे शब्दों का जाल बुनना शुरू करते हैं और अन्त मे उसी मे फंसकर रह जाते हैं। वे कहते हैं: वंशावली काल्पनिक है, पर गोत्र वास्तविक है। इस वाक्य के आगे वे नही बढ़ पाते। और अन्त में ग्रोट कहते हैं—यहा कोष्ठकों के भीतर जो शब्द दिये गये हैं वे मार्क्स के हैं:

"इस वंशावली की चर्चा बहुत कम सुनने को मिलती है, क्योंकि केवल कुछ श्रेष्ठ और सम्मानित मामलों मे ही वशावली की सार्वजनिक रूप से चर्चा की जाती है। लेकिन, अधिक विख्यात गोत्रों की ही भांति निचले दर्जे के गोत्रों के भी अपने समान कर्मकाड होते हैं" (कितनी विचित्र बात है यह, मि० ग्रोट!), "और समान अलौकिक पूर्वज तथा वंशावली भी होती है" (सचमुच, मि० ग्रोट, यह तो बड़ी विचित्र बात है, *निचले दर्जे के गोत्रों मे भी!*), "*सभी गोत्रों मे* एक सी व्यवस्था और वैचारिक आधार पाया जाता है" (वैचारिक—ideal—नही, जनाब, यह पूरी तरह ऐन्द्रिय—carnal—दैहिक आधार है!)।"[97]

इस बात का मौर्गन ने जो जवाब दिया है, उसे मार्क्स ने संक्षेप मे इस तरह पेश किया है: "रक्त-सम्बद्धता की व्यवस्था जो गोत्र के आदि के अनुरूप होती थी—अन्य मनुष्यों की तरह यूनानियों मे भी एक समय गोत्र का यह आदिरूप पाया जाता था—गोत्र के सभी सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों के ज्ञान को सुरक्षित रखती थी। इस ज्ञान का उन लोगों के लिये निर्णायक महत्त्व था और यह ज्ञान उन्हे बचपन मे ही व्यवहार से मिल जाता था। जब एकनिष्ठ परिवार का उदय हुआ तो यह ज्ञान विस्मृति के अंधकार मे पड़ गया। गोत्र के नाम से जो वंशावली बनती थी, उसके मुकाबले में एकनिष्ठ परिवार की वशावली बहुत छोटी और महत्त्वहीन चीज मालूम पड़ती थी। अब गोत्र का नाम इस बात का प्रमाण था कि यह नाम धारण करनेवाले लोगों के पूर्वज एक थे। परन्तु गोत्र की वंश-परंपरा इतनी पुरानी थी कि उसके सदस्यों के लिये अब यह सिद्ध करना सम्भव न था कि उनके बीच रक्त-सम्बन्ध है। केवल वे थोड़े-से लोग ही अपना सम्बन्ध सिद्ध करने की स्थिति मे थे जिनकी समान पूर्वजों से वंशोत्पत्ति बहुत समय पहले नही हुई थी। गोत्र का नाम खुद इस बात

का पर्याप्त और निर्विवाद प्रमाण था कि उस गोत्र के सदस्यों के पूर्वज एक थे। केवल उन लोगों पर यह प्रमाण लागू नही होता था जिनको गोद लिया गया था। ग्रोट* और निबूहर की भांति यह मानने से इनकार करना कि गोत्र के सदस्यों के बीच रक्त-सम्बन्ध होता था, और इस प्रकार गोत्र को केवल एक काल्पनिक वस्तु, कल्पना की उडान भी बना डालना, यह सिर्फ़ 'वैचारिक' वैज्ञानिको को, यानी कुर्सीतोड़ किताबी कीड़ो को ही शोभा देता है। चूंकि पीढ़ियों की शृंखला अब, विशेषकर एकनिष्ठ विवाह की उत्पत्ति के कारण, बहुत दूर की चीज़ बन गयी है, और चूंकि अतीत की वास्तविकता अब पुराणकथा में प्रतिबिम्बित होती मालूम पड़ती है, इसलिये हमारे भलेमानस कूपमंडूकों ने यह मान लिया और आज भी वे समझे बैठे है कि काल्पनिक वंशावली से यथार्थ गोत्र उत्पन्न है!"[98]

अमरीकियो की तरह यहा भी बिरादरी एक मातृ-गोत्र थी, जो कई संतति-गोत्रो मे बंट गयी थी, पर साथ ही उसने उन्हे एक सूत्र मे भी बाध रखा था और अक्सर वह उन सब की एक ही वशमूल से उत्पत्ति का सकेत करती थी। इस प्रकार ग्रोट के अनुसार,

> "हेकेटीयस की बिरादरी के सभी समकालीन सदस्यो का वंश सोलह पीढी ऊपर चढने पर, एक समान देवता के रूप मे एक पूर्वज से जाकर मिल जाता है।"[99]

इसलिये, इस बिरादरी के सभी गोत्र शब्दशः भ्रातृ-गोत्र थे। होमर अब भी इस बिरादरी का उस प्रसिद्ध अंश मे, जहां एगामेम्नोन को नेस्टर यह सलाह देता है, एक फ़ौजी इकाई के रूप में ज़िक्र करते हैं: "अपनी सेना की व्यूह-रचना क़बीलों और बिरादरियो के अनुसार करो ताकि बिरादरी बिरादरी की मदद कर सके और क़बीला क़बीले की।"[100]

बिरादरी का यह अधिकार होता है और उसका यह कर्त्तव्य माना जाता है कि अपने किसी सदस्य का क़त्ल हो जाने पर क़ातिल पर मुक़दमा चलाये।

---

* मार्क्स की पाडुलिपि में ग्रोट की जगह दूसरी शताब्दी के यूनानी विद्वान पोलक्स का नाम दिया गया है जिसका ग्रोट अक्सर हवाला देते हैं। —सं०

इससे जाहिर होता है कि प्राचीन काल मे रक्त-प्रतिशोध लेना विरादरी का एक कर्तव्य था। इसके अलावा हर विरादरी के समान देव-स्थान और समान त्यौहार होते हैं। कारण कि आर्यों की प्राचीन परम्परागत प्रकृति-पूजा से समस्त यूनानी पुराण का विकास बुनियादी तौर पर गोत्रो और बिरादरियो के कारण और उनके भीतर हुआ था। विरादरी का एक मुखिया (phratriarchos) भी होता था, और दे कुलांज के मतानुसार उसकी ऐसी परिषदें भी होती थी जिनका फ़ैसला मानना अनिवार्य होता था और उसकी एक अदालत तथा शासन व्यवस्था भी होती थी।[101] परवर्ती काल के राज्य तक ने गोत्र की अवहेलना की पर बिरादरी के हाथ मे कुछ सार्वजनिक काम छोड़ दिये गये।

एक दूसरे से सम्बन्धित कई बिरादरियों को मिलाकर एक कबीला बनता था। ऐटिका में चार क़बीले थे जिन मे से हर एक मे तीन-तीन बिरादरियां थीं और हर एक बिरादरी मे तीस-तीस गोत्र थे। समूहो में इस विस्तृत विभाजन से प्रकट होता है कि जो व्यवस्था स्वयंस्फूर्त ढंग से कायम हुई थी उसमे सचेतन और सुनियोजित ढंग से हस्तक्षेप किया गया था। ऐसा क्यों, कब और कैसे किया गया, यह यूनानी इतिहास नही बताता, क्योंकि यूनानियो ने जिन स्मृतियों को सुरक्षित रखा था वे वीर-काल से ज्यादा पुरानी नही थीं।

यूनानी लोग चूंकि अपेक्षाकृत छोटे जनसंकुल प्रदेश मे रहते थे, इसलिये उनकी बोलियों में उतना स्पष्ट अन्तर नही था, जितना अमरीका के विस्तृत जंगलों मे रहनेवाले लोगों मे विकसित हुआ था। फिर भी हम यहां पाते हैं कि एक मुख्य बोली बोलनेवाले क़बीले ही एक बड़े समुदाय मे संघबद्ध होते हैं; यहा तक कि नन्हे से ऐटिका की भी अपनी बोली थी जो बाद में चलकर यूनानी गद्य की प्रचलित भाषा बन गयी थी।

होमर के महाकाव्यों मे आम तौर पर हम यह पाते है कि यूनानी कबीलों ने मिलकर छोटी-छोटी जन-जातियां बना ली थीं। परन्तु हर जन-जाति के भीतर गोत्रो, बिरादरियों और कबीलो को अब भी पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी। उन्होंने अभी से परकोटेदार शहरों मे रहना शुरू कर दिया था। जानवरों के रेवड़ों के बढ़ने, खेत बनाकर खेती करने की प्रथा के आरम्भ होने और दस्तकारी की शुरूआत से जनसंख्या में वृद्धि हुई। इसके साथ-साथ सम्पत्ति के भेद बढ़े, जिसके परिणामस्वरूप पुराने, सहज रूप

से विकसित जनवादी समाज के भीतर एक अभिजात तत्व उत्पन्न हुआ। छोटी-मोटी विभिन्न जन-जातियां सबसे अच्छी ज़मीन पर कब्ज़ा करने के लिये, और लूट-मार के उद्देश्य से भी, सदा आपस में लड़ती रहती थीं। युद्धबंदियों को दास बनाने की प्रथा मान्य हो गयी थी।

इन कबीलों और छोटी-मोटी जन-जातियों का संघटन इस प्रकार का होता था :

१. स्थायी रूप से अधिकार एक **परिषद्**, bulé, के हाथ में होता था। इसके सदस्य शुरू मे संभवतः गोत्रों के मुखिया हुआ करते थे, परन्तु बाद मे जब उनकी संख्या बहुत बडी हो गयी तो उनमें से भी कुछ लोगों को छांट करके परिषद् में लिया जाने लगा। इससे अभिजात तत्व को विकास करने और मजबूत होने का मौका मिला। डायोनीसियस निश्चित रूप से बताता है *कि वीर-काल मे प्रतिष्ठित व्यक्ति (kratistoi)*[102] *परिषद् के सदस्य* हुआ करते थे। महत्त्वपूर्ण मामलों में आख़िरी फ़ैसला परिषद् के हाथ मे होता था। ईस्खिलस मे हम पढ़ते हैं कि थीबीस की परिषद् ने यह फ़ैसला किया था – और उसे मानना सब के लिये ज़रूरी था – कि इतियोक्लीज़ के शव को पूर्ण सम्मान के साथ दफनाया जाये और पोलीनाइसीज़ के शव को कुत्तों के आगे फेंक दिया जाये।[103] बाद में जब राज्य का उदय हुआ, तो यह परिषद् सीनेट में बदल गयी।

२. **जन-सभा** (agora)। इरोक्वा लोगों में हम देख चुके हैं कि जब उनकी परिषद् बैठती थी तो साधारण लोग, स्त्री और पुरुष, एक घेरा बनाकर चारों ओर खडे हो जाते थे, व्यवस्थित ढंग से बहस में हिस्सा लेते थे, और इस प्रकार परिषद् के फ़ैसलों पर अपना असर डालते थे। होमर के काल के यूनानियों में यह "घेरा" (Umstand), यदि हम जर्मन भाषा के एक पुराने कानूनी शब्द का प्रयोग करें तो, एक पूर्ण जन-सभा मे बदल गया था जैसा कि वह प्राचीन जर्मनों में भी बदल गया था। परिषद् महत्त्वपूर्ण मामलों पर विचार करने के लिये जन-सभा को बुलाती थी। *सभा में हर पुरुष को बोलने का अधिकार होता था। फ़ैसला या* तो हाथ उठाकर किया जाता था (जैसा कि ईस्खिलस के 'प्रार्थी-गण' में वर्णन है), या आवाज़ देकर। जन-सभा का निर्णय सर्वोच्च और अन्तिम होता था, क्योंकि जैसा कि शोमान ने अपनी पुस्तक 'यूनानी पुरातत्त्व' मे कहा है :

"जब कभी किसी ऐसे मामले पर बहस होती थी जिसके निपटारे के लिये जनता का सहयोग लेना आवश्यक होता था, तब जनता से जबर्दस्ती कुछ कराने का भी कोई तरीका हो सकता था, इसका होमर की रचनाओं में कोई संकेत नही मिलता।"[104]

उस समय, जबकि कबीले का हर वयस्क पुरुष सदस्य योद्धा होता था, जनता से अलग कोई ऐसी सार्वजनिक सत्ता नही थी जो जनता के खिलाफ खड़ी की जा सके। आदिम जनवाद अभी तक पूरे उरूज पर था। परिषद् और basileus (सेनानायक) की शक्ति और हैसियत पर विचार करते समय हमें इस बात पर सबसे पहले ध्यान देना चाहिये।

३. **सेनानायक (basileus)**। इस विषय पर मार्क्स ने यह टीका की: "यूरोपीय विद्वान, जिनमे से अधिकतर जन्म से ही राजाओं के अनुचर थे, बैसिलियस को इस रूप मे पेश करते हैं मानो वह आधुनिक ढंग का राजा हो। अमरीकी जनतंत्रवादी मौर्गन इस पर एतराज़ करते है। मिठबोले मि० ग्लैडस्टन और उनकी पुस्तक 'संसार की युवावस्था'[105] का जिक्र करते हुए मौर्गन ने बहुत व्यंग्य के साथ, किन्तु सचाई के साथ कहा है:

"मि० ग्लैडस्टन ने वीर-काल के यूनानी मुखियाओं को अपने पाठको के सामने राजाओं और राजकुमारो के रूप मे पेश किया है और साथ ही उनमे भद्र पुरुषों के गुण भी जोड़ दिये है। परन्तु मि० ग्लैडस्टन भी यह मानने को मजबूर हैं कि कुल मिलाकर यूनानियों में ज्येष्ठाधिकार के कानून का प्रचलन काफी स्पष्ट है, पर बहुत अधिक स्पष्ट नही है।"[106]

सच तो यह है कि मि० ग्लैडस्टन ने खुद भी यह बात महसूस की होगी कि इस प्रकार की अनिश्चित ज्येष्ठाधिकार व्यवस्था—जो काफी स्पष्ट है, पर बहुत स्पष्ट नहीं है—वास्तव में न होने के बराबर है।

इरोक्वा तथा अन्य इण्डियनों मे मुखियाओं के पदों के मामले में वंशपरम्परा का क्या स्थान था, यह हम देख चुके हैं। चूंकि सभी पदाधिकारी प्रायः गोत्र के भीतर से ही चुने जाते थे, इसलिये इस हद तक ये पद गोत्र के भीतर पुश्तैनी थे। धीरे-धीरे यह प्रथा बन गयी कि कोई पद खाली होता था तो वह पुराने पदाधिकारी के सबसे निकट के गोत्र-सम्बन्धी—भतीजे या भांजे—को मिलता था। उसे छोड़ दूसरे को यह पद तभी दिया जाता

था जब ऐसा करने के पर्याप्त कारण हों। यूनान मे चूंकि पितृ-सत्ता थी, इसलिये बैसिलियस का पद प्रायः पुराने बैसिलियस के पुत्र को या उसके अनेक पुत्रों मे से एक को मिलता था। लेकिन इस बात से केवल यही जाहिर होता है कि सार्वजनिक चुनाव मे पिता की जगह पुत्र का चुना जाना संभाव्य होता था। इससे यह कदापि जाहिर नही होता कि बिना सार्वजनिक चुनाव के ही पिता का पद पुत्र को कानूनन् मिल जाता था। यहां हम इरोक्वा लोगों में तथा यूनानियों में गोत्रों के भीतर ही विशिष्ट कुलीन परिवारों के पहले चिह्न देखते हैं; और यूनानियों मे तो यह भविष्य की पुश्तैनी मुखियागीरी या बादशाहत का पहला चिह्न भी था। इसलिये हमें यह मानकर चलना चाहिये कि यूनानियों में बैसिलियस को या तो जनता चुनती थी, या कम से कम उसके लिये जनता की मान्य संस्था—परिपद् या अगोरा—की स्वीकृति आवश्यक होती थी, जैसा कि रोमन "राजा" (rex) के लिये आवश्यक हुआ करता था।

'इलियाड' महाकाव्य में मनुष्यों का शासक एगामेम्नोन, यूनानियों के सर्वोच्च राजा के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐसी संघीय सेना के सर्वोच्च सेनानायक के रूप में सामने आता है जो एक नगर के चारों ओर घेरा डाले हुए है। और जब यूनानी लोग आपस में झगड़ने लगते हैं, तब ओडीसियस इस महाकाव्य के एक प्रसिद्ध अंश में उसके इसी गुण की ओर संकेत करते हुए कहता है: बहुत-से सेनानायक होना अच्छी बात नही है, हमारा एक सेनानायक होना चाहिये, इत्यादि (बाद में इसमे वह प्रचलित पद भी जोड दिया गया जिसमें राजदंड का जिक्र आता है)।[107] अतः "ओडीसियस इस बात का उपदेश नही दे रहा है कि सरकार किस ढंग की होनी चाहिये, बल्कि इस बात की मांग कर रहा है कि रण-क्षेत्र में सर्वोच्च सेनानायक के आदेशो का पालन किया जाये। यूनानियों के [illegible] जो ट्रोय के सामने केवल एक सेना के रूप में आते है, उनकी अगोरा की कार्यवाही काफी जनवादी ढंग से होती है। जब एकिलस तोहफों से, माने लूट की चीजो के बंटवारे का जिक्र करता है तो वह यह कभी नहीं कहता कि एगामेम्नोन या कोई और बैसिलियस इन चीजों का वितरण करेगा, बल्कि वह हमेशा यही कहता है कि 'एकियनो की सन्तान' अर्थात् जनता उनका वितरण करेगी। गुणवाचक शब्दो से—'जीयस की सन्तान', 'जीयस द्वारा पालित-पोषित' कुछ भी सिद्ध नही होता क्योंकि [illegible]

न किसी देवता का वंशज होता है और कबीले के मुखिया का गोत्र किसी 'प्रमुख' देवता का—जो इस प्रसंग में ज़ीयस है—वंशज होता है, यहां तक कि सुअर चरानेवाला यूमीयस और अन्य भृत्य भी 'देव-कुल' के (dioi और theioi) माने गये हैं, और वह भी 'ओडीसी' में, अर्थात् 'इलियाड' से बहुत बाद के काल में भी है। इसी प्रकार हम 'ओडीसी' में यह भी पाते हैं कि मुलिओग नामक मुनादी को और डेमोडोकस* नामक अंधे चारण को भी 'वीर' कहा गया है। संक्षेप में, होमर की तथाकथित बादशाहत के लिये यूनानी लेखक जिस *basileia* शब्द का प्रयोग करते हैं, वह (चूंकि सैनिक नेतृत्व ही उसकी मुख्य विशेषता है) परिषद् तथा जन-सभा समेत महज़ सैनिक लोकतंत्र की व्यंजना करता है, और कुछ नहीं।" (मार्क्स)[108]

सैनिक ज़िम्मेदारियों के अलावा बैसिलियस पर कुछ पुरोहितगीरी की और कुछ न्याय-सम्बन्धी जिम्मेदारियां भी होती थीं। न्याय-सम्बन्धी ज़िम्मेदारियां बहुत साफ नहीं थीं; परन्तु पुरोहित का काम वह अपने कबीले के, अथवा कई कबीलों के महासंघ के सर्वोच्च प्रतिनिधि की हैसियत से करता था। नागर-जिम्मेदारियों, अथवा शासन-प्रबंध की जिम्मेदारियों का कहीं जिक्र नहीं मिलता। लेकिन मालूम पड़ता है कि बैसिलियस अपने पद के नाते परिषद् का सदस्य होता था। शब्दरचनाशास्त्र की दृष्टि से बैसिलियस का अर्थ जर्मन में König लगाना बिलकुल सही है क्योंकि König (Kuning) शब्द Kuni या Künne से व्युत्पन्न है जिनका मतलब होता है "*गोत्र का मुखिया*"। परन्तु Konig शब्द का जो आधुनिक अर्थ है (राजा), पुरानी यूनानी भाषा का "बैसिलियस" उससे कतई मेल नहीं खाता। थ्यूसीडिडीज तो प्राचीन basileia को साफ-साफ patrikê कहता है, जिसका मतलब है कि वह गोत्र से उत्पन्न हुआ है। उसने यह भी कहा है कि उसकी निश्चित और सीमित जिम्मेदारियां होती थीं।[109] और अरस्तू का कहना है कि वीर-काल में *basileia* स्वतंत्र नागरिकों का नेतृत्व

---

* मार्क्स की पाडुलिपि में इसके बाद यह वाक्यांश है, जिसे एंगेल्स ने छोड़ दिया है:

"'बैसिलियस' की ही भांति *choiranos* शब्द—जिसका उपयोग ओडीसियस एगामेम्नोन के लिये करता है—का अर्थ भी 'सेनानायक' या 'मुखिया' ही है।"—सं०

करता था, और बैसिलियस सेनानायक, न्यायाधीश और मुख्य पुरोहित हुआ करता था।[110] मतलब यह कि बाद के काल की शासन-सत्ता के अर्थ मे बैसिलियस के हाथ में कोई शासन-सत्ता न थी।*

इस प्रकार, वीर-काल के यूनानी समाज-सघटन मे, जहां हम यह पाते हैं कि पुरानी गोत्र-व्यवस्था अब भी शक्तिशाली है, वहा साथ ही हम उसके पतन का प्रारम्भ भी देखते हैं: पितृ-सत्ता मानी जाने लगी है और पिता की सम्पत्ति बच्चो को मिलने लगी है, जिससे परिवार के अन्दर सम्पत्ति एकत्रित करने की प्रवृत्ति को बल मिलता है और गोत्र के मुकाबले मे परिवार शक्तिशाली हो जाता है; कुछ लोगो के पास कम और कुछ के पास अधिक धन हो जाने का समाज के संघटन पर असर पडता है और आनवंशिक अभिजात वर्ग और राजतंत्र के पहले अंकुर निकल आते है; दास-प्रथा आरम्भ हो जाती है, जो शुरू मे युद्धबंदियो तक सीमित थी, पर जिसके परिणामस्वरूप बाद मे अपने कबीले के और यहां तक कि अपने गोत्र के सदस्यो को भी गुलाम बनाने का रास्ता साफ हो गया; पुराने जमाने मे कबीलो के बीच होनेवाले युद्ध भ्रष्ट होकर नया रूप लेते हैं–जीविकोपार्जन के साधन के रूप में ढोर, दास और धन लूटने के लिये जमीन और पानी के रास्ते से बाकायदा धावे बोले जाते हैं। संक्षेप मे, धन-दौलत को दुनिया मे सबसे बड़ी चीज समझा जाने लगता है, उसे प्रशसा और आदर की दृष्टि से देखा जाने लगा है और पुराने गोत्र-समाज की सस्थाओं और प्रथाओं को भ्रष्ट किया जाता है ताकि धन-दौलत को

---

* यूनानी बैसिलियस की तरह एज़्टेक लोगों के सैनिक मुखिया को भी गलत ढंग से आधुनिक काल के राजा के रूप में पेश किया जाता है। स्पेनियो ने एज़्टेक लोगों को शुरू मे गलत समझा, उनका अतिरंजित चित्र दिया, और बाद मे तो जान-बूझकर झूठी बाते गढ़ीं। स्पेनियो की रिपोर्टों की ऐतिहासिक दृष्टि से आलोचना सबसे पहले मौर्गन ने की। उन्होने बताया कि मैक्सिकोवासी बर्बर युग की मध्यम अवस्था मे थे; पर उनका स्तर न्यूमैक्सिको के पुएब्लो इडियनों के स्तर से ऊंचा था और उनका समाज-संघटन, जहां तक कोई भ्रष्ट रिपोर्टों से अनुमान कर सकता है, मोटे तौर पर इस ढंग का था: तीन कबीलों का एक महासंघ था, जो कई अन्य कबीलों से कर लेते थे; महासघ का प्रबंध एक महासघीय सेनानायक द्वारा होता था। इसी सेनानायक को स्पेनियो ने "सम्राट" के रूप में बदल दिया था। (*एंगेल्स का नोट*)

ज़बर्दस्ती लूटना उचित ठहराया जा सके। अब केवल एक चीज़ की कमी थी · ऐसी संस्था की, जो न केवल व्यक्तियो की नयी हासिल की हुई निजी सम्पत्ति को गोत्र-व्यवस्था की पुरानी सामुदायिक परम्पराओं से बचा सके, जो निजी सम्पत्ति को, जिसकी पहले अधिक प्रतिष्ठा नही थी, न केवल पवित्र क़रार दे और इस पवित्रता को मानव समाज का चरम लक्ष्य घोषित कर दे, बल्कि जो सम्पत्ति प्राप्त करने, और इसलिये सम्पत्ति को लगातार बढ़ाते रहने के नये और विकसित होते हुए तरीकों पर सार्वजनिक मान्यता की मुहर भी लगा दे; ऐसी संस्था की, जो न केवल समाज के नवजात वर्ग-विभाजन को, बल्कि सम्पत्तिवान वर्ग द्वारा सम्पत्तिहीन वर्गों के शोषण किये जाने के अधिकार को और सम्पत्तिहीन वर्गों पर सम्पत्तिवान वर्गों के शासन को भी स्थायी बना दे।

और यह संस्था भी आ पहुंची। राज्य का आविष्कार हुआ।

५
एथेनी राज्य का उदय

राज्य का विकास कैसे हुआ, जिसमें गोत्र-व्यवस्था की कुछ संस्थाएं नये ढंग की संस्थाओं में बदल गयीं और कुछ संस्थाओं का स्थान नयी संस्थाओं ने ले लिया, और अन्त में, पुरानी तमाम संस्थाओं की जगह पर असली सरकारी प्राधिकारी आ गये; वास्तविक "सशस्त्र जनता" की जगह, जो अपने गोत्रों, बिरादरियों और कबीलों के द्वारा खुद अपनी रक्षा किया करती थी, एक सशस्त्र "सार्वजनिक सत्ता" आ गयी, जिसका कि ये प्राधिकारी जैसा चाहें, उपयोग कर सकते थे, और इसलिये जो जनता के खिलाफ भी इस्तेमाल की जा सकती थी—इस पूरे विकास की रूप-रेखा, कम से कम उसके प्रारम्भिक काल की रूप-रेखा, जितनी स्पष्टता से प्राचीन एथेंस में देखी जा सकती है, उतनी स्पष्टता से वह और कहीं नहीं देखी जा सकती। परिवर्तन के रूप मोटे तौर पर मॉर्गन द्वारा बताये गये हैं, परन्तु जिस आर्थिक अन्तर्य से ये उत्पन्न हुए, वह अधिकांशतः मुझे खुद जोड़ देना पड़ा है।

वीर-काल में चार एथेनी कबीले ऐटिका के चार अलग-अलग हिस्सों में रह रहे थे। बल्कि लगता है कि जिन बारह बिरादरियों को लेकर ये चार कबीले बने थे, वे भी सेक्रोप्स के बारह शहरों में अलग-अलग रहते थे। कबीलों का संघटन भी वही वीर-काल वाला था: जन-सभा, जन-परिषद् और एक बैसिलियस। उस प्राचीनतम काल में, जिसका कि लिखित इतिहास मिलता है, हम पाते हैं कि जमीन लोगों में बंट चुकी थी और व्यक्तियों की निजी सम्पत्ति बन गयी थी। यह इस बात के अनुरूप ही थी कि इस काल में, बर्बर युग की उन्नत अवस्था के अन्तिम दि...

माल का उत्पादन अपेक्षाकृत उन्नति कर चुका था और उसी हद तक माल का व्यापार भी बढ़ गया था। अनाज के अलावा शराब बनाने के लिये अंगूर और तेल निकालने के लिये तिलहन की भी खेती होने लगी थी। ईजियन समुद्र में होनेवाला व्यापार फ़ीनीशियाई लोगों के हाथों से निकलकर अधिकाधिक ऐटिका वासियों के हाथों में पहुंच रहा था। ज़मीन की खरीद और बिक्री, तथा खेती और दस्तकारी, व्यापार और जहाज़रानी के बीच श्रम-विभाजन के बराबर बढ़ते जाने के फलस्वरूप गोत्रों, बिरादरियों और कबीलों के सदस्य जल्दी ही आपस में घुल-मिल गये। जिन इलाकों में पहले एक बिरादरी या कबीले के लोग रहा करते थे, वहां अब नये लोग पहुंच गये, जो इसी देश के निवासी होते हुए भी इन क़बीलों या बिरादरियों के सदस्य नहीं थे, और इसलिये जो खुद अपने निवास-स्थान में अजनबी थे। कारण कि शांति-काल में हर बिरादरी और हर क़बीला खुद अपने मामलों का प्रबंध करता था और एथेंस में बैठी जन-परिषद् या बैसिलियस की सलाह नहीं लेता था। परन्तु किसी बिरादरी या कबीले के इलाके के वे लोग, जो उस बिरादरी या कबीले के सदस्य नहीं थे, स्वभावतः इस प्रबंध में भाग नहीं ले सकते थे।

इससे गोत्र-व्यवस्था की विभिन्न संस्थाओं के नियमित रूप से काम करने में इतना व्याघात पड़ गया कि वीर-काल में ही इसके इलाज की ज़रूरत महसूस होने लगी थी। चुनांचे एक नया विधान लागू किया गया, जिसके बारे में कहा जाता है कि उसे थीसियस ने तैयार किया था। इस परिवर्तन की खास विशेषता यह थी कि एथेंस में एक केन्द्रीय प्रशासन कायम कर दिया गया था। मतलब यह कि कुछ ऐसे मामले, जिनका प्रबंध अभी तक कबीले स्वतंत्र रूप से किया करते थे, अब सब कबीलों के सामूहिक मामले घोषित कर दिये गये और उनका प्रबंध एथेंस में बैठी एक आम परिषद् को सौंप दिया गया। इस प्रकार अमरीका की किसी भी आदिवासी जन-जाति ने जितना विकास किया था उससे एथेनी लोग एक कदम आगे बढ़ गये। पड़ोसी कबीलों के साधारण संघ से आगे बढ़कर अब सारे कबीले एक ही जन-जाति के रूप में घुल-मिल गये। इससे एथेंसवासियों के सामान्य सार्वजनिक कानून की एक पूरी व्यवस्था उत्पन्न हो गयी, जो कबीलों और गोत्रों के कानूनी दस्तूर से ऊपर समझी जाती थी। इस व्यवस्था में एथेंस के सभी नागरिकों को नागरिक की हैसियत से कुछ अधिकार और अतिरिक्त

कानूनी सुरक्षा उन इलाकों में भी प्राप्त हो गयी थी जो उनके अपने कबीलों के इलाके न थे। परन्तु यह गोत्र-व्यवस्था की जड़ खोदने की दिशा मे पहला कदम था, क्योंकि यह ऐसे लोगों को नागरिक बनाने की दिशा में पहला कदम था, जो किसी भी ऐटिका के कबीले से सम्बन्धित नहीं थे और जो एथेंसवासियों की गोत्र-व्यवस्था की परिधि के एकदम बाहर थे और बाहर ही रहे थे। थीसियस को एक और प्रथा जारी करने का श्रेय दिया जाता है। वह यह कि गोत्रों, बिरादरियों और कबीलो का लिहाज किये बगैर पूरी जनसंख्या को तीन वर्गों मे बांट दिया गया: eupatrides, यानी कुलीन लोग; geomoroi, यानी जमीन जोतनेवाले और demiurgi, यानी दस्तकार। सार्वजनिक पदाधिकारी बनने का हक केवल कुलीन लोगों को दे दिया गया। सच है कि सार्वजनिक पदों को कुलीन लोगो के लिये सुरक्षित कर देने के अलावा, *यह विभाजन अमल मे नहीं आया, क्योंकि वह विभिन्न वर्गों के* बीच कोई और कानूनी अन्तर नहीं पैदा करता था। फिर भी यह विभाजन बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि उससे वे नये सामाजिक तत्त्व सामने आते हैं, जो इस बीच चुपचाप विकसित हो गये हैं। उससे पता चलता है कि गोत्रों मे कुछ परिवारों के सदस्यों के ही पदाधिकारी होने की प्रचलित प्रथा अब बढ़कर इन परिवारों का विशेषाधिकार बन गयी, जिसका कोई विरोध नहीं करता। उससे पता चलता है कि ये परिवार, जो अपनी धन-दौलत की वजह से पहले ही शक्तिशाली हो चुके थे, अब अपने गोत्रों के बाहर एक विशेषाधिकारप्राप्त वर्ग के रूप में संयुक्त होने लगे थे, और नवजात राज्य ने इस अधिकारहरण को मान्यता प्रदान की थी। इसके अतिरिक्त, उससे यह भी पता चलता है कि अब खेतिहर तथा दस्तकार के बीच श्रम-विभाजन इतना मजबूत हो गया था कि वह समाज मे गोत्रों तथा कबीलों के पुराने विभाजन की श्रेष्ठता को चुनौती देने लगा था। अन्त मे, इस विभाजन ने यह घोषित कर दिया कि गोत्र-समाज तथा राज्य-सत्ता के बीच एक ऐसा विरोध है जिसका समन्वय नही हो सकता। राज्य स्थापित करने की इस पहली कोशिश का मतलब यही था कि गोत्र के सदस्यों को विशेषाधिकारप्राप्त उच्च वर्ग और अधिकारहीन निम्न वर्ग में बांटकर गोत्र को छिन्न-भिन्न कर दिया गया और अधिकारहीन वर्ग को दो वृत्तिमूलक वर्गों मे बांट दिया गया और इस प्रकार उन्हें एक दूसरे के खिलाफ ल कर दिया गया।

इसके बाद सोलन के समय तक एथेंस का जो राजनीतिक इतिहास रहा है, उसका हमें केवल अपूर्ण ज्ञान है। बैसिलियस का पद धीरे-धीरे लुप्तप्रयोग हो गया और अभिजात वर्ग में से चुने हुए आर्कोन राज्य के प्रमुख बन गये। अभिजात वर्ग की शासन-सत्ता बराबर बढ़ती गयी, यहां तक कि ६०० ई० पू० तक वह असह्य हो उठी। साधारण लोगों की स्वतंत्रता का गला घोटने के दो मुख्य उपाय थे—मुद्रा और सूदखोरी। अभिजात वर्ग के लोग अधिकतर एथेंस में या उसके इर्द-गिर्द रहते थे, जहां समुद्री व्यापार और कभी-कभी इसके साथ-साथ समुद्री डकैती की बदौलत वे मालामाल हो रहे थे और बहुत-सा रुपया-पैसा अपने हाथों में बटोर रहे थे। यहीं से बढ़ती हुई मुद्रा-व्यवस्था, विनिमयहीन अर्थ-व्यवस्था की नींव पर खड़े गांव-समुदायों के परम्परागत जीवन को तेज़ाब की तरह काटती हुई उसमें घुस गयी। गोत्र-संघटन का मुद्रा-व्यवस्था से कतई मेल नहीं है। जैसे-जैसे ऐटिका के छोटे-छोटे किसान आर्थिक दृष्टि से बरबाद होते गये, वैसे-वैसे गोत्र-व्यवस्था के वे पुराने बंधन भी ढीले पड़ते गये जो पहले उनकी रक्षा किया करते थे। एथेंसवासियों ने इस समय तक रेहन की प्रथा का भी आविष्कार कर लिया था और महाजन की हुंडी और रेहननामा न तो गोत्र का लिहाज़ करते थे और न बिरादरी का। परन्तु पुरानी गोत्र-व्यवस्था मुद्रा, उधार और नकदी कर्ज़ से अपरिचित थी। इसलिये, अभिजात वर्ग के लगातार बढ़ते हुए मुद्रा-शासन के कर्ज़दार से महाजन की रक्षा करने के लिये और रुपयेवाले द्वारा छोटे किसान के शोषण को मान्यता प्रदान करने के लिये एक प्रथा के रूप में एक नये कानून को जन्म दिया। ऐटिका के देहाती इलाकों में जगह-जगह खेतों में खम्भे गड़ गये, हर खम्भे पर लिखा रहता था कि जिस जमीन पर यह खम्भा खड़ा है, वह इतने रुपये पर अमुक आदमी को रेहन कर दी गयी है। जिन खेतों में ऐसे खम्भे नहीं थे, उनमें से अधिकतर रेहन की मियाद बीत जाने के कारण, या सूद न अदा होने के कारण बिक चुके थे और अभिजातवर्गीय सूदखोरों की सम्पत्ति बन गये थे। किसान अपने को बड़ा भाग्यशाली समझता था यदि उसे लगान देनेवाले काश्तकार के रूप में खेत जोतने की इजाजत मिल जाती थी और अपनी पैदावार के छः में से पांच हिस्से लगान के रूप में नये मालिक को देकर उसे खुद छठे हिस्से के सहारे जीवित रहने दिया जाता था। यही नहीं, जो ज़मीन रेहन कर दी गयी थी, उसकी बिक्री से यदि महाजन का पूरा

रुपया अदा नही होता था, या यदि क़र्ज़ के बदले मे कोई वस्तु गिरवी नही रखी गयी थी, तो कर्ज़दार को महाजन का रुपया अदा करने के लिये अपने बच्चों को विदेश मे गुलामों की तरह बेचना पड़ता था। पिता अपने हाथो अपनी सन्तान को बेच डालता था – पितृ-सत्ता और एकनिष्ठ विवाह का पहला नतीजा यही निकला था! यदि रक्त शोषक इसके बाद भी सतुष्ट नहीं होता था तो वह खुद क़र्ज़दार को गुलाम की तरह बेच सकता था। एथेंसवासियो मे सभ्यता के युग का अरुणोदय इसी प्रकार हुआ था।

पहले, जब लोगो के जीवन की परिस्थितियां गोत्र-व्यवस्था के अनुरूप थी, तब इस तरह की क्रान्ति का होना असम्भव था, परन्तु अब यह क्रान्ति हो गयी थी और किसी को पता तक न चला कि वह हुई कैसे। आइये, कुछ क्षणो के लिये फिर इरोक्वा लोगों के बीच लौट चलें। जैसी स्थिति एथेंसवासियो के बीच अपने आप और मानो, बिना उनके कुछ किये ही और निश्चय ही उनकी इच्छा के विरुद्ध, पैदा हो गयी, वैसी स्थिति इरोक्वा लोगो मे अकल्पनीय होती। वहा जीवन-निर्वाह के साधनो के उत्पादन का ढंग, जो वर्ष-प्रति-वर्ष एक सा ही रहता था और जिसमे कभी कोई परिवर्तन नही होता था, ऐसा था कि उसमे बाहरी कारको से आरोपित विरोध कभी पैदा ही नही हो सकते थे। उत्पादन के उस ढग मे धनी और गरीब का विरोध, शोषको और शोषितो का विरोध उत्पन्न नही हो सकता था। इरोक्वा लोगो के लिये प्रकृति को वशीभूत करना अभी दूर की बात थी, परन्तु प्रकृति ने उनके लिये जो सीमायें निश्चित कर दी थीं, उनके भीतर वे अपने उत्पादन के स्वामी थे। कभी-कभी उनके छोटे-छोटे बग़ीचो मे फ़सल मारी जा सकती थी, कभी-कभार उनकी झीलो और नदियो मे मछलियाँ या जंगलों में शिकार के पशु-पक्षियो की कमी पड सकती थी, पर इन बातो के अलावा वे निश्चित रूप से जानते थे कि उनकी जीविकोपार्जन प्रणाली का क्या परिणाम होगा। उसका परिणाम यही हो सकता था कि जीवन-निर्वाह के साधन प्राप्त हों, कभी प्रचुर तो कभी न्यून; परन्तु उसका परिणाम यह नही हो सकता था कि समाज में अप्रत्याशित उथल-पुथल मच जाये, गोत्र-व्यवस्था के बंधन छिन्न-भिन्न हो जायें, गोत्रों और कबीलों के सदस्यो में फूट पड़ जाये और वे परस्पर-विरोधी वर्गों मे बंटकर आपस मे लड़ने लगें। उत्पादन बहुत सीमित दायरे मे होता था, परन्तु उत्पादन करनेवालो का अपनी पैदावार पर पूरा नियंत्रण रहता था। बर्बर

युग के उत्पादन का यह बड़ा भारी गुण था जो सभ्यता का उदय होने पर नष्ट हो गया। प्रकृति की शक्तियों पर ग्राज मनुष्य को जो प्रबल ग्रधिकार प्राप्त हो गया है और मनुष्यों के बीच जो स्वतंत्र सघबद्धता ग्राज सम्भव है, उनके ग्राधार पर उत्पादन के इस गुण को फिर से प्राप्त करना ग्रगली पीढ़ियों का काम होगा।

यूनानियों में ऐसी हालत नही थी। जब पशुग्रों के रेवड़ तथा ऐश-ग्राराम के सामान कुछ व्यक्तियों की निजी सम्पत्ति बन गये, तब व्यक्तियों के बीच वस्तुग्रो का विनिमय होने लगा ग्रौर उपज माल बन गयी। बाद मे जो क्रान्ति हुई, उसकी जड़ मे यही चीज थी। पैदा करनेवाले जब ग्रपनी पैदावार का खुद उपभोग करने की स्थिति मे न रह गये, बल्कि विनिमय के दौरान उसे हाथ से निकल जाने देने लगे, तो उस पर उनका नियंत्रण जाता रहा। ग्रब उन्हे इस बात का ज्ञान नही रहा कि उनकी पैदावार का क्या हुग्रा, ग्रौर इस बात की सम्भावना पैदा हो गयी कि पैदावार करनेवालों के ख़िलाफ इस्तेमाल की जाये, वह उनका शोषण तथा उत्पीड़न करने का साधन बन जाये। ग्रतएव, यदि कोई समाज व्यक्तियों के बीच होनेवाले विनिमय को बन्द नही करता, तो वह बहुत दिनों तक खुद ग्रपने उत्पादन का स्वामी नही रह सकता ग्रौर ग्रपनी उत्पादन की प्रक्रिया के सामाजिक परिणामों पर नियंत्रण नही बनाये रख सकता।

एथेंसवासियो को शीघ्र ही यह पता चल गया कि व्यक्तिगत विनिमय के ग्रारम्भ हो जाने तथा उपज के माल में बदल जाने के बाद वह कितनी जल्दी पैदावार करनेवाले पर ग्रपना शासन कायम कर लेती है। माल के उत्पादन के साथ-साथ व्यक्तिगत खेती भी शुरू हो गयी। लोग ग्रलग-ग्रलग ग्रपने फ़ायदे के लिये जमीन जोतने लगे। उसके थोड़े ग्ररसे बाद जमीन पर व्यक्तिगत स्वामित्व कायम हो गया। फिर मुद्रा ग्रायी, यानी वह सार्वत्रिक माल ग्राया जिसका ग्रन्य सभी मालों से विनिमय हो सकता है। परन्तु जब मनुष्यो ने मुद्रा का ग्राविष्कार किया, तब उन्होंने यह ज़रा भी नही सोचा था कि वे एक नयी सामाजिक शक्ति को, ऐसी सार्वत्रिक शक्ति को पैदा कर रहे है जिसके सामने पूरे समाज को झुकना पड़ेगा। यह थी वह नयी शक्ति जो ग्रपने पैदा करनेवालों की मर्ज़ी या जानकारी के बिना ग्रचानक पैदा हो गयी थी, ग्रौर जिसके यौवन की निर्मम प्रचंडता को एथेंसवासियो को झेलना पड़ा।

परन्तु फिर किया क्या जाता? पुराना गोत्र-संघटन मुद्रा के विजय-अभियान को रोकने में न केवल सर्वथा असमर्थ सिद्ध हो चुका था, वह इस बात के भी सर्वथा अयोग्य था कि मुद्रा, महाजन, क़र्ज़दार और कर्ज की जबर्दस्ती वसूली जैसी चीजों को अपनी व्यवस्था के अन्दर स्थान दे सके। परन्तु नयी सामाजिक शक्ति उत्पन्न हो चुकी थी, और न तो लोगों की सदेच्छाओं मे यह ताकत थी और न पुराने जमाने को फिर से लौटा लाने की उनकी अभिलाषाओं मे यह सामर्थ्य थी कि वे मुद्रा और सूदखोरी के अस्तित्व को नष्ट कर सकती। इसके अलावा, गोत्र-व्यवस्था मे अन्य अनेक छोटी-मोटी दरारे पड़ चुकी थीं। ऐटिका के हर कोने में, खासकर एथेंस नगर में गोत्रों और बिरादरियों के सदस्य आपस मे गडमड हो रहे थे। पीढ़ी-दर-पीढ़ी यह चीज बढती ही जा रही थी, हालांकि एथेंसवासियों को अपनी ज़मीन तो गोत्र के बाहर बेचने की इजाज़त थी, पर वे अपने घर को गोत्र के बाहर के लोगो के हाथ अब भी नही बेच सकते थे। उद्योग-धंधों और व्यापार की उन्नति के साथ-साथ उत्पादन की विभिन्न शाखाओं के बीच,—जैसे कि खेती, दस्तकारी, विभिन्न पेशो के अन्दर के विभिन्न शिल्पों, व्यापार, जहाज़रानी, इत्यादि के बीच—श्रम का विभाजन और भी पूर्ण रूप से विकसित हो गया था। अब लोग अपने-अपने पेशों के अनुसार पहले से अधिक सुनिश्चित समूहों मे बंट गये थे, और प्रत्येक समूह के कुछ ऐसे नये, समान हित पैदा हो गये थे जिनके लिये गोत्र मे या बिरादरी मे कोई स्थान न था और इसलिये उनकी देखभाल करने के लिये नये पदों को कायम करना आवश्यक था। दासों की संख्या बहुत बढ़ गयी थी और इस प्रारम्भिक अवस्था मे भी वह स्वतंत्र एथेंसवासियों की संख्या से कही अधिक रही होगी। गोत्र-व्यवस्था शुरू मे दास-प्रथा से अपरिचित थी और इसलिये वह ऐसे किसी उपाय को नही जानती थी जिसके द्वारा दासों के इस विशाल जन-समुदाय को दबाकर रखा जा सकता। और अन्तिम बात यह है कि व्यापार के आकर्षण से बहुत-से अजनबी एथेंस मे आकर बस गये थे, क्योंकि वहां धन कमाना ज्यादा आसान था; पुरानी व्यवस्था के अनुसार इन अजनबियो को न तो कोई अधिकार प्राप्त था और न कानून उनकी किसी तरह रक्षा करता था। एथेंसवासियों की सहनशीलता की पुरानी परम्परा के बावजूद, ये लोग जनता के बीच व्याघातकारी और विदेशी तत्त्व बने हुए थे।

साराश यह है कि गोत्र-व्यवस्था का अन्त होने को था। समाज दिन-प्रति-दिन उसकी सीमाश्रो से आगे निकला जा रहा था। समाज की आखो के सामने जो घोर चिन्ताजनक बुराइयां पैदा हो रही थी, वह उन्हें भी दूर करने या कम करने मे असमर्थ था। परन्तु, इसी बीच चुपचाप राज्य का विकास हो गया था। पहले शहर और देहात के बीच और फिर शहरी उद्योग की विभिन्न शाखाओ के बीच श्रम का विभाजन हो जाने से जो नये समूह बन गये थे, उन्होंने अपने हितो की रक्षा करने के लिये नये निकाय उत्पन्न कर डाले थे। नाना प्रकार के सार्वजनिक पद संस्थापित किये गये थे। इसके बाद नव-विकसित राज्य को सबसे अधिक स्वयं अपनी सेना की आवश्यकता थी, जो समुद्र मे विचरनेवाले एथेंसवासियो के लिये शुरू मे नौसेना ही हो सकती थी, जो कभी-कभी छोटी-मोटी लड़ाइयों के लिये, और व्यापारी जहाजों की रक्षा करने के काम आ सके। सोलन के पहले ही किसी अनिश्चित समय मे छोटे-छोटे प्रादेशिक जिले बना दिये गये थे जो नौक्रेरी कहलाते थे। हर कबीले के क्षेत्र में बारह नौक्रेरी थे और हर नौक्रेरी के लिये आवश्यक था कि वह एक जंगी जहाज बनाये, उसे साज-सामान और नाविको से लैस करे और इसके अलावा दो घुडसवारो को तैनात करे। इस व्यवस्था से गोत्र-संघटन पर दो तरफ़ से चोट होती थी: एक तो उससे एक ऐसी सार्वजनिक सत्ता पैदा हो गयी थी जो समूची सशस्त्र जनता से भिन्न थी, दूसरे, वह जनता को सार्वजनिक कामों के लिये पहली बार रक्त-सम्बन्ध के अनुसार नही, बल्कि प्रदेश के अनुसार, समान निवास-स्थान के आधार पर, अलग-अलग बाटती थी। आगे हम देखेंगे कि इस चीज का क्या महत्त्व था।

शोषित जनता को चूकि गोत्र-व्यवस्था से कोई सहायता नही मिल पाती थी, इसलिये वह केवल नये, उभरते हुए राज्य का ही भरोसा कर सकती थी। और राज्य ने सोलन के विधान के रूप मे उसकी सहायता की और साथ ही उसके द्वारा पुरानी व्यवस्था के मत्थे अपने को और सुदृढ़ कर लिया। सोलन के विधान ने—हमारा यहां इस बात से कोई सम्बन्ध नही है कि यह विधान ५६४ ई० पू० मे किस तरह से क़ायम किया गया—सम्पत्ति के अधिकारों का अतिक्रमण करके तथाकथित राजनीतिक क्रान्तियों के एक सिलसिले को शुरू कर दिया। अभी तक जितनी भी क्रान्तिया हुई हैं, उन सब का उद्देश्य एक तरह की सम्पत्ति की दूसरी तरह की सम्पत्ति

से रक्षा करना था। एक प्रकार की सम्पत्ति की रक्षा वे दूसरे प्रकार की सम्पत्ति पर हमला किये बिना नहीं कर सकती। महान फ्रांसीसी क्रान्ति में पूंजीवादी सम्पत्ति को बचाने के लिये सामन्ती सम्पत्ति की कुरबानी दी गयी। सोलन की क्रान्ति में कर्जदारों की सम्पत्ति के हित में महाजनों की सम्पत्ति को नुकसान उठाना पड़ा। क़र्ज सीधे-सीधे मंसूख कर दिये गये। विस्तृत जानकारी हमारे पास नहीं है, पर सोलन ने अपनी कविताओं में बड़े गर्व के साथ कहा है कि उसने ऋण-ग्रस्त खेतों से रेहन के खम्भे हटवा दिये हैं और उन सब लोगों को स्वदेश लौटने का अवसर दिया है जो कर्ज के कारण घर छोडकर भाग गये थे, या जो विदेशो मे बेच दिये गये थे। ऐसा सम्पत्ति के अधिकारों पर खुले आम चोट करके ही किया जा सकता था। सचमुच, आरम्भ से अंत तक सभी तथाकथित राजनीतिक क्रान्तियों का उद्देश्य यह था कि **एक** तरह की सम्पत्ति की रक्षा करने के लिये **दूसरी** तरह की सम्पत्ति को जब्त करे, यूं भी कहा जा सकता है कि चुरा ले। इसलिये यह बिलकुल सच है कि २,५०० वर्ष से सम्पत्ति के अधिकारो को तोड़कर ही निजी सम्पत्ति की रक्षा हो सकी है।

किन्तु अब इस बात की भी व्यवस्था करना आवश्यक था कि स्वतंत्र एथेंसवासियो को दोबारा गुलाम न बनाया जा सके। शुरू मे इसके लिये कुछ आम ढग कदम उठाये गये। मिसाल के लिये ऐसे क़रारो पर रोक लगा दी गयी जिनमे खुद कर्जदार को रेहन कर दिया जाता था। इसके अलावा एक सीमा निश्चित कर दी गयी जिससे अधिक ज़मीन कोई व्यक्ति नही रख सकता था। इसका उद्देश्य यह था कि किसानो की ज़मीन को हड़पने की अभिजात वर्ग की लिप्सा पर कुछ हद तक रोक लगायी जा सके। इसके बाद संवैधानिक संशोधन किये गये जिनमे से निम्नलिखित हमारे लिये सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं:

परिषद् के सदस्यो की संख्या बढाकर चार सौ कर दी गयी जिनमें हर क़बीले से सौ सदस्य होते थे। अतएव, क़बीला अभी भी आधार का काम दे रहा था। परन्तु पुराने विधान का यही एक पक्ष था जो नये राज्य-संविधान का अंग बनाया गया। इसको छोडकर सोलन ने नागरिकों को चार वर्गों में बांट दिया था। इस विभाजन का आधार यह था कि किस नागरिक के पास कितनी जमीन है और उस जमीन की उपज कितनी है। पहले तीन वर्गों मे वे लोग रखे गये थे जिनकी ज़मीन से क्रमश: कम से

कम पांच सौ, तीन सौ और डेढ सौ मेडिम्नस अनाज की उपज होती थी (१ मेडिम्नस करीब ४१ लिटर के बराबर होता है।)। जिन लोगों के पास इससे भी कम जमीन थी, या बिलकुल नहीं थी, उन्हें चौथे वर्ग मे रखा गया था। सार्वजनिक पद केवल पहले तीन वर्गों के सदस्यों को ही मिल सकते थे। सबसे ऊंचे पद पहले वर्ग के लोगों को ही मिलते थे। चौथे वर्ग को केवल जन-सभा मे बोलने और वोट देने का अधिकार प्राप्त था। परन्तु सारे पदाधिकारी जन-सभा में ही चुने जाते थे, उसी के सामने उन्हे अपने कामों के लिये जवाब देना पड़ता था और कानून भी यही सभा बनाती थी; इस सभा मे चौथे वर्ग का बहुमत था। कुलीनता के विशेषाधिकारों को कुछ हद *तक धन-दौलत के विशेषाधिकारों के रूप मे पुनःस्थापित कर दिया* गया था, परन्तु निर्णायक शक्ति जनता के हाथों मे बनी रही। सेना के पुनसंगठन का आधार भी इन्ही चार वर्गों को बनाया गया। पहले दो वर्गों से घुड़सवार सेना में भर्ती की जाती थी, तीसरे वर्ग को बख़्तरबन्द पैंदल सेना का काम करना पड़ता था, चौथे वर्ग के लोगों को या तो साधारण पैंदल सेना का काम करना पड़ता था जो बख़्तरबंद नही होती थी, या उन्हे नौ-सेना मे भर्ती होना पड़ता था और उन्हें शायद वेतन भी मिलता था।

इस प्रकार संविधान में एक नये तत्त्व का, निजी सम्पत्ति का प्रवेश हो गया। नागरिकों के अधिकार और कर्त्तव्य क्रमानुसार ज़मीन की मिल्कियत के आकार के आधार पर निश्चित हुए और जैसे-जैसे मिल्की वर्गों का प्रभाव बढता गया, वैसे-वैसे पुराने रक्त-सम्बद्धता पर आधारित समूह पृष्ठभूमि मे पड़ते गये। गोत्र-व्यवस्था की एक और हार हुई।

लेकिन, *सम्पत्ति के अनुसार राजनीतिक अधिकारों का श्रेणीकरण राज्य* के लिये कोई लाज़िमी नियम नहीं था। राज्यों के संवैधानिक इतिहास में उसका भले ही बहुत बड़ा महत्त्व मालूम पड़ता हो, परन्तु बहुत-से राज्य, और उनमे भी सबसे अधिक विकसित राज्य, इस श्रेणीकरण के बिना ही काम चलाते थे। एथेंस मे भी उसकी केवल एक अल्पकालिक भूमिका रही। एरिस्टीडिज़ के समय से *सारे सार्वजनिक पद सभी तरह के नागरिकों को* मिलने लगे थे।[111]

अगले अस्सी वर्षों में एथेनी समाज ने धीरे-धीरे वह मार्ग पकडा जिस पर चलते हुए उसने आगे कई शताब्दियों तक विकास किया। सोलन से

पहलेवाले काल मे सूदखोर जिस तरह जमीनें हड़प लिया करते थे, उस पर रोक लगायी गयी और उसके साथ-साथ कुछ लोगों के पास बहुत ज्यादा जमीन इकट्ठा होना रोका गया। व्यापार और दस्तकारी तथा उपयोगी कला-कौशल, जो दास-श्रम के आधार पर अधिकाधिक बड़े पैमाने पर संगठित किये जा रहे थे, मुख्य पेशे बन गये। शिक्षा और ज्ञानोद्दीप्ति की प्रगति होने लगी। अपने नागरिक बन्धुओं का पुराने पाशविक ढंग से शोषण करने के बजाय, अब एथेंसवासी मुख्यतया दासों का और अपने ग़ैर-एथेनी संरक्षितों का शोषण करने लगे। चल सम्पत्ति, नकदी, दासों और जहाजों के रूप मे सम्पत्ति बराबर बढ़ती जाती थी। परन्तु पहले काल की परिमिति मे यदि यह केवल जमीन ख़रीदने का साधन थी, तो अब वह स्वयं साध्य बन गयी। एक ओर तो इससे नया, धनी, औद्योगिक और व्यापारी वर्ग अभिजात वर्ग की पुरानी शक्ति को सफलतापूर्वक चुनौती देने लगा; तो दूसरी ओर उससे पुरानी गोत्र-व्यवस्था का अन्तिम आधार भी जाता रहा। इस प्रकार पुराने गोत्र, बिरादरियां और क़बीले, जिनके सदस्य सारे ऐटिका मे बिखरे हुए थे और आपस में एकदम घुल-मिल गये थे, राजनीतिक संस्थाओं के रूप मे बिलकुल बेकार हो गये। एथेंस के बहुत-से नागरिक किसी भी गोत्र के सदस्य नहीं थे, वे विदेशों से आये लोग थे जो नागरिक तो बना लिये गये थे, पर रक्त-सम्बद्धता पर आधारित पुरानी संस्थाओं मे प्रवेश नहीं कर पाये थे। इसके अतिरिक्त, विदेशों से आये ऐसे लोगों की संख्या भी बराबर बढ़ती रही थी जिन्हें केवल संरक्षण प्राप्त था।[112]

इस बीच पार्टियों का संघर्ष जारी था। अभिजात वर्ग अपने विशेषाधिकारों को फिर से पाने की कोशिश कर रहा था। कुछ समय के लिये उसका प्रभुत्व फिर से कायम हो भी गया। लेकिन ५०९ ई० पू० में क्लाइस्थीनीज़ की क्रान्ति के फलस्वरूप उसका अन्तिम रूप मे पतन हुआ, और उसके साथ-साथ गोत्र-व्यवस्था के अन्तिम अवशेष भी मिट गये।[113]

क्लाइस्थीनीज़ ने अपने नये संविधान में गोत्रों और बिरादरियों पर आधारित पुराने चार क़बीलों का कोई ख़याल नहीं रखा। उनकी जगह एक बिलकुल नये संगठन ने ले ली, जिसमें नागरिकों को केवल उनके निवास-स्थान के आधार पर बांटा गया था, जैसा कि पहले ही नौक्रेरियों के द्वारा करने की कोशिश की गयी थी। अब निर्णायक बात यह नहीं थी कि कोई किसी रक्तसम्बद्ध समूह का सदस्य है, बल्कि यह थी कि उसका

निवास-स्थान क्या है। अब लोगों का नहीं, बल्कि इलाक़ों का विभाजन किया गया। राजनीतिक दृष्टि से अब लोग केवल उस इलाके के पुछल्ले बन गये जिसमें वे रहते थे।

पूरा ऐटिका एक सौ स्वशासित पुरों में बांट दिया गया। वे देम कहलाते थे। प्रत्येक देम के नागरिक (देमोत) अपना एक मुखिया (देमार्क), एक कोषाध्यक्ष और छोटे-छोटे मामलों को तय करने का अधिकार रखनेवाले तीस न्यायाधीश चुनते थे। हर देम के नागरिकों का अपना अलग मन्दिर और रक्षक देवता या वीर-नायक होता था, जिसके पुजारियों को भी ये नागरिक चुनते थे। देम में सर्वोच्च शक्ति देमोतों की सभा के हाथ में होती थी। मौर्गन ने सही ही कहा है कि यह अमरीका की स्वशासित नगरपालिका का मूल रूप था।[114] आधुनिक राज्य अपने विकास के शिखर पर पहुंचकर उसी इकाई पर ख़तम हो जाता है, जिसके साथ एथेंस में नवोदित राज्य ने आरम्भ किया था।

इन दस इकाइयों (देमों) को मिलाकर एक कबीला बनता था, परन्तु यह कबीला गोत्र-व्यवस्था पर आधारित पुराने क़बीले (Geschlechtsstamm) से बिलकुल भिन्न था और स्थानिक कबीला (Ortsstamm) कहलाता था। स्थानिक कबीला अपना शासन आप चलानेवाली एक राजनीतिक संस्था ही नहीं था, वह एक सैनिक संस्था भी था। वह एक फ़ीलार्क* या कबीले का मुखिया चुनता था जिसके हाथ में घुड़सवार सेना की कमान रहती थी, एक टैक्सियार्क चुनता था जिसके हाथ मे पैदल सेना की कमान रहती थी और एक स्ट्रैटिजस चुनता था जिसकी कमान में कबीले के इलाके में भर्ती की गयी पूरी सैनिक टुकड़ी होती थी। इसके अलावा, हर कबीला पांच जंगी जहाज़ और उनके लिए नौ-सैनिक तथा उनके नायक देता था। हर कबीले को ऐटिका के एक वीर-नायक का संरक्षण प्रदान किया जाता था, जो क़बीले के अभिभावक देवता के तुल्य होता और जिसके नाम से कबीला जाना जाता था। अंतिम बात यह है कि स्थानिक कबीला एथेंस की परिषद् के लिये ५० सदस्य चुनता था।

कुल मिलाकर जो चीज़ बनी, वह थी एथेंस का राज्य। इसका शासन दस कबीलों द्वारा चुनी गयी पांच सौ सदस्यों की एक परिषद् चलाती थी।

---

* प्राचीन यूनानी शब्द "फ़ीला" (कबीला) से। – सं०

अन्तिम अधिकार जन-सभा के हाथ में था जिसमें एथेंस का प्रत्येक नागरिक भाग ले सकता था और वोट दे सकता था। शासन के विभिन्न विभागों और न्यायालयों का काम आर्कोन तथा दूसरे अधिकारी संभालते थे। एथेंस मे ऐसा कोई अधिकारी न था जिसके हाथो में सर्वोच्च कार्यकारी अधिकार सौंप दिया गया हो।

इस नये संविधान का निर्माण करके और बहुत-से आश्रितों को, जिनमे से कुछ बाहर से आये लोग थे और कुछ मुक्त हुए दास, नागरिक श्रेणी मे प्रवेश देकर गोत्र-व्यवस्था की सस्थाओ को सार्वजनिक जीवन से हटा दिया गया। वे निजी सस्थाएं और धार्मिक सोसाइटियां बनकर रह गयी। परन्तु उनका नैतिक प्रभाव, प्राचीन गोत्र-व्यवस्था काल के परम्परागत विचार और धारणाएं बहुत दिनो तक जीवित रही और बहुत धीरे-धीरे मिठी। राज्य की एक बाद की संस्था से यह बात स्पष्ट हो गयी।

हम यह देख चुके हैं कि राज्य का एक आवश्यक गुण यह है कि वह एक ऐसी सार्वजनिक सत्ता है जो आम जनता से अलग होती है। उस समय एथेंस मे केवल एक मिलीशिया (जन-सेना) और एक नौ-सेना थी जिनके लिये सीधे जनता में से ही लोगों को भर्ती किया जाता था और जनता ही इन सैनिको को अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित करती थी। ये सेनायें बाहरी दुश्मनो से देश की हिफाजत करती थी और दासों पर, जो इस समय तक आबादी की बहुसंख्या बन गये थे, अंकुश रखती थीं। नागरिकों के लिये यह सार्वजनिक सत्ता शुरू में केवल पुलिस के रूप मे प्रकट हुई। पुलिस उतनी ही पुरानी चीज है जितना पुराना राज्य है। यही कारण है कि अठारहवीं सदी के भोले फ़ासीसी लोग civilized राष्ट्रों की नही, बल्कि policed राष्ट्रों की चर्चा किया करते थे (nations policées)*। इस प्रकार, अपना राज्य स्थापित करने के साथ-साथ, एथेंसवासियों ने पुलिस की भी स्थापना कर डाली, जिसमे तीर-कमान से लैस पैदल और घुड़सवार दोनों तरह के सिपाही – दक्षिणी जर्मनी और स्विट्ज़रलैंड की भाषा मे Landjäger – थे। पर ये सारे सिपाही दास थे। एथेंस के स्वतंत्र नागरिक पुलिस के काम को इतना नीचा समझते थे कि खुद यह नीच काम करने के बजाय वे सशस्त्र दास के हाथो गिरफ़्तार होना बेहतर समझते थे। यह पुरानी गोत्र-

---

* शब्दश्लेष : policé – सभ्य, police – पुलिस। – सं०

व्यवस्था की मनोवृत्ति का ही परिचायक था। बिना पुलिस के राज्य कायम नही रह सकता था, परन्तु राज्य अभी पैदा ही हुआ था और इतनी नैतिक प्रतिष्ठा प्राप्त नही कर पाया था कि पुलिस के काम को, जो पुराने गोत्र के सदस्यों को अवश्य ही घृणित लगता था, सम्मानित काम में बदल देता।

राज्य, जिसका ढांचा अब मोटे तौर पर तैयार हो गया था, एथेंस-वासियों की नयी सामाजिक परिस्थिति के कितना उपयुक्त था, यह इस बात से जाहिर है कि इसके बाद एथेंस मे धन-दौलत, व्यापार और उद्योग की वडी तेजी से तरक्की हुई। अब जिस वर्ग-विरोध पर सामाजिक और राजनीतिक संस्थाएं आधारित थी, वह अभिजात वर्ग तथा साधारण जनता का विरोध नही था, बल्कि वह दासों और स्वतंत्र लोगो का, आश्रितो और स्वतंत्र नागरिको का विरोध था। अब एथेंस समृद्धि के शिखर पर था, तब वहा स्वतंत्र एथेनी नागरिको की कुल संख्या, जिसमें स्त्रिया और वच्चे भी शामिल थे, करीब ९०,००० थी; दास स्त्री-पुरुषों की संख्या ३,६५,००० थी और आश्रितों की संख्या – जिनमें विदेशों से आये लोग और ऐसे दास थे जो मुक्त कर दिये गये थे – ४५,००० थी। इस प्रकार, एक बालिग पुरुष नागरिक के पीछे कम से कम १८ दास और दो से अधिक आश्रित लोग थे। दासों की इतनी बड़ी संख्या होने का कारण यह था कि उनमें से बहुत-से लोग समूहों में काम करते थे। वहां बड़े-बड़े कमरो में बहुत-से दासो को एक जगह जमा होकर ओवरसियरो की देखरेख मे काम करना पडता था। व्यापार और उद्योग के विकास के साथ-साथ चन्द आदमियो के हाथों में अधिकाधिक दौलत इकट्ठी होती गयी; आम स्वतंत्र नागरिक गरीबी के गढ़े में गिर गये और उनके सामने दो ही रास्ते रह गये: या तो दस्तकारी का काम शुरू करें और दास श्रमिको के साथ होड़ करें, जो नागरिको की प्रतिष्ठा के खिलाफ और एक नीच बात समझी जाती थी और जिसमें सफलता प्राप्त करने की भी बहुत कम आशा थी, या पूरी तरह मुहताजी के शिकार हो जायें। उस समय जो परिस्थितिया थी, उनमे मुहताज होनेवाली बात ही हुई, और चूंकि उनकी ही बड़ी संख्या थी इसलिये उनके साथ-साथ पूरे एथेनी राज्य का ध्वस हो गया। एथेंस का पतन लोकतंत्र के कारण नही हुआ, जैसा कि राजाओ के तलवे चाटनेवाले यूरोपीय स्कूलमास्टर हमें बताना चाहते है, उसका पतन दास-

प्रथा के कारण हुआ था जिसने स्वतंत्र नागरिक के श्रम को तिरस्कार की बात बना दिया था।

एथेंसवासियों के बीच राज्य का जिस प्रकार उदय हुआ, वह आम तौर पर राज्य के निर्माण का एक ठेठ उदाहरण है। कारण कि एक तो वह अपने शुद्ध रूप में हुआ था और उसमें बाहरी या अन्दरूनी बल-प्रयोग ने बाधा नहीं डाली थी (पिसिस्ट्रेटस द्वारा सत्तापहरण का काल बहुत जल्दी खतम हो गया था, और बाद में उसका कोई चिन्ह न रह गया था[115]), दूसरे, वह सीधे गोत्र-समाज से उत्पन्न राज्य के एक अतिविकसित रूप का, अर्थात् लोकतान्त्रिक गणराज्य के विकास का उदाहरण है और अन्तिम बात यह कि सभी आवश्यक बातों की हमें पर्याप्त जानकारी है।

६
रोम में गोत्र और राज्य

रोम की स्थापना के विषय मे जिस कथा की परम्परा है, उसके अनुसार वहा पहली वस्ती कतिपय लैटिन गोत्रो ने बसायी थी (कथा में उनकी सख्या सौ बतायी गयी है), जो एक क़बीले में संयुक्त थे। उसके बाद शीघ्र ही एक सैबीलियन कबीला वहा आकर रहने लगा। उसमे भी सौ गोत्र थे। अन्त में एक तीसरा कबीला भी, जिसमे भिन्न-भिन्न प्रकार के तत्त्व शामिल थे, आकर उन लोगों के साथ रहने लगा और इसमे भी सौ गोत्र थे। इस पूरी कथा पर पहली नजर डालते ही यह बात बिलकुल साफ हो जाती है कि यहां गोत्र के सिवा शायद ही किसी चीज को प्राकृतिक उपज माना जा सकता है, और खुद गोत्र भी प्रायः एक मातृ-गोत्र की शाखा होता था और यह मातृ-गोत्र अभी भी पुराने निवास-स्थान में मौजूद होता था। कबीलो में उनके कृत्रिम रूप से गठित होने के चिन्ह मौजूद थे, फिर भी अधिकतर उनमें ऐसे तत्त्व शामिल थे जो एक दूसरे के रक्त-सम्बन्धी होते थे और उन्हे पुराने दिनो के उन कबीलों के नमूने पर गठित किया गया था, जिनको बनावटी ढंग से नहीं बनाया गया था, बल्कि जिनका स्वाभाविक विकास हुआ था। यह असम्भव नही है कि इन तीन कबीलों मे से हर एक के केन्द्र मे कोई-न-कोई पुराना प्राकृतिक कबीला रहा हो। कबीले तथा गोत्र के बीच की कड़ी बिरादरी थी, जिसमें दस गोत्र होते थे और वह यहा क्यूरिया (curia) कहलाती थी। अतएव उनकी कुल संख्या तीस थी।

इसे सब मानते हैं कि रोमवासियों का गोत्र और यूनानियों का गोत्र, दोनों एक ही प्रकार की सस्था थे। यदि यूनानियों का गोत्र उसी सामाजिक इकाई का सिलसिला था, जिसका आदिम रूप हमें अमरीका के इंडियनों के यहा देखने को मिलता है, तो जाहिर है कि रोमन गोत्र के बारे मे

भी यही बात सही है। इसलिये उसकी चर्चा हम अधिक संक्षेप में कर सकते है।

कम से कम नगर के अति-प्राचीन काल मे रोमन गोत्र का निम्नलिखित सघटन था

१. एक दूसरे की सम्पत्ति विरासत मे पाने का गोत्र के सदस्यो को पारस्परिक अधिकार था। सम्पत्ति गोत्र के भीतर ही रहती थी। यूनानी गोत्र की तरह रोमन गोत्र में भी चूंकि पितृ-सत्ता कायम हो चुकी थी, इसलिये मातृ-परम्परा के लोग इस अधिकार से अलग रखे जाते थे। बारह पट्टिकाओंवाले कानून[116] के अनुसार, जिससे अधिक पुराने रोम के किसी लिखित कानून को हम नही जानते, जायदाद पर सबसे पहले मृत व्यक्ति की प्राकृत सन्तान का दावा होता था। यदि किसी व्यक्ति की प्राकृत सन्तान नही होती थी तो सम्पत्ति "एग्नेटों" को (यानी पितृ-परम्परा के रक्त-सम्बन्धियों को) मिलती थी। "एग्नेटो" के न होने पर सम्पत्ति पर मृत व्यक्ति के गोत्र के सदस्यो का अधिकार होता था। हर हालत मे सम्पत्ति गोत्र के भीतर ही रहती थी। यहां हम देखते हैं कि धन-दौलत के बढ जाने तथा एकनिष्ठ विवाह की प्रथा के प्रचलित हो जाने के कारण गोत्र-व्यवस्था के व्यवहार मे धीरे-धीरे कुछ नये कानूनो और नियमो का प्रयोग होने लगता है। पहले गोत्र के सभी सदस्यो का मृत व्यक्ति की सम्पत्ति पर समान अधिकार होता था। फिर व्यवहार में यह अधिकार "एग्नेटो" तक ही सीमित कर दिया गया। यह शायद बहुत समय पहले की बात है, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है। बाद मे यह अधिकार केवल मृत व्यक्ति की सन्तान तथा उनके पुरुष वशजों तक ही सीमित रह गया। पर जाहिर है कि बारह पट्टिकाओ में उत्तराधिकार की यह व्यवस्था विपरीत क्रम में दिखायी देती है।

२. हर एक गोत्र का अपना सामूहिक क़ब्रिस्तान होता था। जब क्लौडिया नामक कुलीन गोत्र रेगिली से रोम में बसने के लिये आया तो उसको शहर में जमीन का एक टुकड़ा और एक सामूहिक क़ब्रिस्तान मिला। औगस्तस के काल मे भी जब ट्यूटोबर्गर जंगल मे वारस मारा गया[117] तो उसके सिर को रोम में लाकर *gentilitius tumulus** में दफ़नाया गया,

---

* गोत्र का कब्रगाह।—सं०

जिसका मतलब यह है कि उसके गोत्र (क्विंक्टीलिया गोत्र) का उस काल में भी अपना अलग कब्रगाह था।

३. गोत्र के सदस्य मिल-जुलकर धार्मिक अनुष्ठान और समारोह करते थे। ये *sacra gentilitia** काफी विख्यात हैं।

४. गोत्र के सदस्य गोत्र के भीतर विवाह नही कर सकते थे। रोम में इस प्रतिबंध ने कभी लिखित कानून का तो रूप नही प्राप्त किया, पर एक प्रथा के रूप मे लोग उसे मानते रहे। रोम के असंख्य विवाहित जोड़ों के नामों मे जिन्हे आज हम जानते है, एक भी जोडा ऐसा नही है जिसमें पति और पत्नी दोनो के गोत्र का नाम एक हो। विरासत के नियम मे भी यही बात सिद्ध होती है। विवाह हो जाने पर स्त्री "एग्नेटों" के अधिकार से वंचित हो जाती थी, अपने गोत्र से अलग हो जाती थी, और उसका या उसके बच्चों का उसके पिता अथवा पिता के भाइयों की सम्पत्ति पर कोई अधिकार नही रहता था। कारण कि यदि ऐसी व्यवस्था न होती तो उसके पिता के गोत्र की सम्पत्ति गोत्र के बाहर चली जाती। जाहिर है कि इस नियम मे केवल उसी हालत में कोई तुक हो सकती है जब हम यह मानकर चलें कि स्त्री को स्वयं अपने गोत्र के किसी सदस्य से विवाह करने की इजाजत नही थी।

५. गोत्र का जमीन पर सम्मिलित स्वामित्व होता था। आदिम काल में, जब तक कबीले की जमीनों का विभाजन शुरू नहीं हुआ था, सदा यही नियम था। लैटिन कबीलों मे हम पाते है कि जमीन पर कुछ हद तक कबीले का स्वामित्व था, कुछ हद तक गोत्र का और कुछ हद तक अलग-अलग कुटुम्बों का, जो जाहिर है कि उस समय एक परिवार मात्र नहीं हो सकते थे। कहा जाता है कि सबसे पहले रोमुलस ने अलग-अलग व्यक्तियों को करीब एक-एक हेक्टर (दो जुगेर) की आदमी के हिसाब से जमीन बांटी थी। लेकिन इसके बाद भी हम पाते हैं कि कुछ जमीन गोत्र के पास रही। राजकीय भूमि की बात तो अलग ही है जिसको लेकर रोमन गणराज्य का सारा अन्दरूनी इतिहास बनता-बिगड़ता रहा।

६. गोत्रों के सदस्यों का कर्तव्य होता था कि वे एक दूसरे की सहायता और रक्षा करें। लिखित इतिहास में इस नियम के कुछ इने-गिने अवशेष

---

* गोत्र के धार्मिक अनुष्ठान।—सं०

ही मिलते है। रोमन राज्य ने शुरू से ही इतनी प्रचड शक्ति का परिचय दिया था कि क्षतिपूर्ति की जिम्मेदारी उसके कंधो पर आ गयी। जब एप्पियस क्लौडियस[118] गिरफ़्तार किया गया तब उसके पूरे गोत्र ने, यहा तक कि उसके व्यक्तिगत शत्रुओं ने भी, शोक मनाया था। दूसरे प्युनिक युद्ध[119] के समय विभिन्न गोत्र अपने सदस्यों को, जो बन्दी बना लिये गये थे, रिहा कराने के वास्ते धन जमा करने के लिए एक हुए थे; लेकिन सीनेट ने ऐसा करने की मनाही कर दी थी।

७. गोत्र के सदस्यों को अधिकार था कि वे गोत्र के नाम का प्रयोग करें। यह नियम सम्राटों के काल तक लागू रहा। जो दास मुक्त कर दिया जाता था उसको पहले के अपने मालिकों के गोत्र का नाम धारण करने की अनुमति दे दी जाती थी पर उसे गोत्र के सदस्य के अधिकार नही मिलते थे।

८. गोत्र को अधिकार होता था कि अजनबियो को अपने सदस्य बना ले। यह उन्हें किसी परिवार का सदस्य बनाकर किया जाता था (अमरीकी इडियनो में भी यही प्रथा थी)। परिवार का सदस्य बन जाने पर उन्हे गोत्र की सदस्यता भी मिल जाती थी।

९. मुखियाओं को चुनने और पद से हटाने के अधिकार का कही जिक्र नही मिलता। परन्तु रोम के प्रारम्भिक काल मे चूकि निर्वाचित राजा से लेकर नीचे तक के सभी पदो को चुनाव अथवा नामजदगी के द्वारा भरा जाता था, और चूकि विभिन्न क्यूरियायें अपने पुरोहितो को भी खुद चुनती थी, इसलिये हमारे लिये यह मान लेना उचित होगा कि गोत्रो के मुखियाओ (principes) को भी इसी तरह चुना जाता रहा होगा—भले ही उन्हें एक ही परिवार से चुनने का नियम पूरी तरह क्यों न माना जाता रहा हो।

ऐसे थे रोमन गोत्र के अधिकार। एक पितृ-सत्ता में पूर्ण सक्रमण को छोडकर यह हू-ब-हू वही चित्र है जो इरोक्वा गोत्र के अधिकारो और कर्त्तव्यों के बारे मे हमे मिला था। यहा भी "इरोक्वा हमें साफ़ दिखायी पड़ता है"[120]।

सबसे अधिक माने-जाने इतिहासकारों मे भी रोम की गोत्र-व्यवस्था को लेकर आज तक कैसा मत-भ्रम फैला हुआ है, इसका उदाहरण देखिये। गणतांत्रिक तथा औगस्तस के युग में रोमन व्यक्तिसूचक नामो के विषय मे मोम्मसेन ने जो प्रबंध लिखा है ('रोम सम्बन्धी अनुसंधान', बर्लिन, १८६४, खंड १[121]), उसमें उन्होंने कहा है:

'गोत्र के नाम का न केवल गोत्र के सभी पुरुष सदस्य प्रयोग करते हैं, जिनमे गोत्र द्वारा अंगीकृत और संरक्षित लोग भी शामिल हैं, बल्कि स्त्रिया भी उसका प्रयोग करती है। हा, केवल दासो को गोत्रो के नाम का इस्तेमाल करने का हक़ नही होता... कबीला"

(मोम्मसेन ने यहां gens का अनुवाद stamm—क़बीला—किया है)

"...एक ऐसा जन-समुदाय होता है जिसके सदस्यों को एक ही पूर्वज—वास्तविक, ग्रहीत अथवा कल्पित—का वंशज समझा जाता है और उसे समान रीति-रिवाज, समान क़ब्रिस्तान और विरासत के समान नियम एकता के सूत्र मे बांधे रहते हैं। व्यक्तिगत रूप से स्वतंत्र सभी व्यक्तियों को, और इसलिये स्त्रियों को भी, इसके सदस्यो के रूप मे अपना नाम दर्ज कराना पड़ता था। परन्तु किसी विवाहिता स्त्री का गोत्र का नाम निश्चित करने मे थोड़ी कठिनाई होती है। जाहिर है कि जब तक यह नियम था कि स्त्रिया अपने गोत्र के सदस्यो के सिवा और किसी से विवाह नही कर सकती, तब तक उनका गोत्र का नाम निश्चित करने में कोई कठिनाई नही होती थी, और यह बात भी स्पष्ट है कि एक लम्बे समय तक स्त्रियों के लिये गोत्र के बाहर विवाह करना अपने गोत्र के भीतर विवाह करने के मुकाबले बहुत कठिन होता था। छठी शताब्दी तक भी यह gentis enuptio—गोत्र के बाहर विवाह करने का अधिकार—कुछ ख़ास-ख़ास व्यक्तियो को व्यक्तिगत विशेषाधिकार एवं पुरस्कार के रूप में दिया जाता था... परन्तु आदिम काल में जब कभी स्त्रियों का ऐसा विवाह होता होगा, तब उन्हें अपने पति के कबीले मे शामिल कर दिया जाता होगा। इससे अधिक निश्चय के साथ और कोई बात नही कही जा सकती कि पुराने धार्मिक विवाह के द्वारा स्त्री पूरी तरह से अपने पति के कानूनी एवं धार्मिक समुदाय की सदस्या हो जाती थी और स्वयं अपने समुदाय को छोड़ देती थी। यह कौन नही जानता कि विवाहिता स्त्री अपने गोत्र के सम्बन्धियों की सम्पत्ति पाने और उन्हे अपनी सम्पत्ति देने का अधिकार खो देती है, और वह अपने पति, अपनी सन्तान और पति के गोत्र के सदस्यों के उत्तराधिकार-समूह में शामिल हो जाती है? और यदि स्त्री का पति उसे अपनी सन्तान के रूप मे स्वीकार कर लेता है और उसे अपने परिवार में शामिल कर लेता है, तब वह उसके गोत्र से कैसे अलग रह सकती है?" (पृ० ६–११)।

इस प्रकार, मोम्मसेन का कहना है कि रोमन स्त्रियां शुरू में केवल अपने गोत्र के भीतर ही विवाह करने की स्वतन्त्रता रखती थी; अतः

उनके कथनानुसार रोमन गोत्र अन्तर्विवाही था, बहिर्विवाही नहीं। यह मत, जोकि दूसरी तमाम जातियों के अनुभव के खिलाफ़ जाता है, प्रधानतया लिवी के केवल एक अंश पर आधारित है, जिस पर बहुत विवाद है। लिवी की पुस्तक (खंड ३९, अध्याय १९)[122] के इस अंश में कहा गया है कि रोम नगर की स्थापना के ५६८ वें वर्ष में, यानी १८६ ई० पू० में सीनेट ने यह आदेश जारी किया था :

uti Feceniae Hispallae datio, deminutio, gentis enuptio, tutoris optio item esset quasi ei vir testamento dedisset; utique ei ingenuo nubere liceret, neu quid ei qui eam duxisset, ob id fraudi ignominiaeve esset – "फ़ेसेनिया हिस्पल्ला को अपनी सम्पत्ति को चाहे जिसे दे देने का, उसे कम करने का, गोत्र के बाहर विवाह करने का और एक अभिभावक चुनने का, उसी प्रकार अधिकार होगा, जिस प्रकार उस हालत में होता यदि उसका" (मृत) "पति वसीयत के द्वारा उसे *यह अधिकार दे गया होता; उसे किसी स्वतंत्र नागरिक के साथ* विवाह कर लेने की इजाज़त दी जाती है और जो पुरुष उसके साथ विवाह करेगा, उसके लिये यह दुराचरण या बेइज़्ज़ती की बात नहीं समझी जायेगी।"

निस्सन्देह यहां फ़ेसेनिया को, जोकि मुक्त हुई दासी है, गोत्र के बाहर विवाह करने की इजाज़त दी गयी है। और इसमें भी कोई शक नहीं कि इस अंश के अनुसार पति को यह हक था कि वह वसीयत के द्वारा अपनी मृत्यु के बाद अपनी पत्नी को गोत्र के बाहर विवाह करने की इजाजत दे। परन्तु, प्रश्न है कि **किस** गोत्र के बाहर?

यदि हर स्त्री को अपने गोत्र के भीतर विवाह करना पड़ता था, जैसा कि मोम्मसेन मानकर चलते हैं, तो वह विवाह के बाद भी उसी गोत्र में *रहती थी*। परन्तु, *एक तो अभी यही सिद्ध करना बाकी है कि गोत्र* में अन्तर्विवाह की प्रथा थी। दूसरे, यदि स्त्री को अपने गोत्र के भीतर विवाह करना पड़ता था, तो पुरुष के लिये भी यही आवश्यक था, वरना उसे पत्नी प्राप्त नहीं हो सकती थी। तब इसका मतलब यह होता है कि वसीयत के द्वारा पुरुष अपनी पत्नी को एक ऐसा अधिकार दे सकता था जिसका उपभोग स्वयं उसे भी उपलब्ध नहीं था। कानूनी नज़र से

एक बिलकुल बेसिर-पैर की बात है। मोम्मसेन भी यह महसूस करते हैं और इसलिये यह अटकल लगाते हैं:

> "बहुत सम्भव है कि गोत्र के बाहर विवाह करने के लिये न केवल अधिकृत व्यक्ति की, बल्कि गोत्र के सभी सदस्यों की अनुमति लेना आवश्यक था" (पृ० १०, टिप्पणी)।

एक तो मोम्मसेन ने यहा एक बहुत ही स्थूल कल्पना की है। दूसरे, यह अनुमान उपरोक्त उद्धरण के स्पष्ट शब्दों के खिलाफ जाता है। फ़ेसेनिया को यह अधिकार उसके **पति के स्थान पर** सीनेट दे रही है। फेसेनिया का पति उसे जो अधिकार दे सकता था, सीनेट उसे उससे न तो कम दे रही है और न ज्यादा। परन्तु सीनेट जो कुछ दे रही है, वह एक निरपेक्ष अधिकार है जिस पर किसी तरह का बंधन या शर्त नही है, जिससे कि यदि फ़ेसेनिया इस अधिकार का उपयोग करती है तो उसके नये पति को कोई परेशानी न उठानी पड़े। बल्कि सीनेट वर्तमान और भावी कौसिलो और प्रीटरो को यह आदेश भी देती है कि वे इस बात का ध्यान रखें कि इस अधिकार का उपयोग करने के कारण फेसेनिया को कोई असुविधा न हो। इसलिए मोम्मसेन जो बात मानकर चले हैं, उसे कदापि अंगीकार नही किया जा सकता।

फिर, मान लीजिये कि कोई औरत किसी दूसरे गोत्र के सदस्य से विवाह कर लेती है, पर इसके बाद भी अपने गोत्र की ही सदस्या बनी रहती है। उपरोक्त उद्धरण के अनुसार ऐसी सूरत में उसके पति को यह अधिकार होगा कि वह अपनी पत्नी को उसके गोत्र के बाहर विवाह करने की इजाज़त दे दे। मतलब यह कि पति को एक ऐसे गोत्र के मामलों मे हस्तक्षेप करने का अधिकार होगा जिसका कि वह खुद सदस्य नही है। यह बात इतनी अतर्कसंगत है कि उसके बारे मे और कुछ कहने की आवश्यकता नही है।

ऐसी हालत में हमारे सामने यह मानकर चलने के सिवा और कोई चारा नही रहता कि अपने विवाह के द्वारा स्त्री ने एक अन्य गोत्र के पुरुष से विवाह किया था और ऐसा करके वह तुरन्त अपने पति के गोत्र की सदस्या हो गयी थी। खुद मोम्मसेन भी मानते हैं कि ऐसी सूरत में यही होता था। और यह मानते ही पहेली अपने आप सुलझ जाती है। विवाह

द्वारा अपने गोत्र से विच्छिन्न और अपने पति के गोत्र में अंगीकृत इस स्त्री की नये गोत्र में एक विशेष स्थिति है। वह गोत्र की सदस्या तो है, पर गोत्र के बाक़ी लोगों की रक्त-सम्बन्धी नहीं है। जिस रूप मे वह गोत्र मे अंगीकृत है, उसका ध्यान रखते हुए उस पर यह रोक नही लगायी जा सकती कि वह अपने इस नये गोत्र के भीतर विवाह न करे जिसमे उसने विवाह करके ही प्रवेश किया है। इसके अलावा वह गोत्र के विवाह-समूह मे अंगीकृत की गयी है और अपने पति की मृत्यु पर उसकी, अर्थात् गोत्र के एक सह-सदस्य की सम्पत्ति का एक भाग पाने की अधिकारिणी होती है। इससे अधिक स्वाभाविक और क्या व्यवस्था हो सकती है कि सम्पत्ति को गोत्र के बाहर न जाने देने के वास्ते स्त्री के लिये यह आवश्यक बना दिया जाये कि वह अपने पहले पति के गोत्र के ही किसी सदस्य से विवाह करे, और अन्य किसी गोत्र के सदस्य से विवाह न करे? परन्तु यदि इस नियम के अपवादस्वरूप कोई व्यवस्था करनी है तो इसकी इजाजत देने का हक उस आदमी से, यानी स्त्री के पहले पति से, अधिक और किसको होगा जो अपनी सम्पत्ति उसके लिये छोड़ गया है? जिस समय वह अपनी सम्पत्ति का एक भाग अपनी पत्नी के नाम वसीयत करता है और साथ ही उसे इस बात की इजाजत दे डालता है कि वह चाहे तो विवाह के द्वारा, या विवाह के परिणामस्वरूप, यह सम्पत्ति किसी और गोत्र को हस्तांतरित कर दे, उस समय वही इस सम्पत्ति का मालिक था; यानी वह अक्षरशः केवल अपनी सम्पत्ति का ही निपटारा कर रहा था। जहां तक स्त्री और पति के गोत्र के साथ उसके सम्बन्ध का मामला है, उसे गोत्र मे–स्वेच्छापूर्वक विवाह करके–लानेवाला था उसका पति। अतएव, यह बात भी बिलकुल स्वाभाविक मालूम पडती है कि स्त्री को एक नया विवाह करके इस गोत्र को छोड़ देने की इजाजत देनेवाला उचित व्यक्ति उसका पति ही हो सकता है। साराश यह कि ज्यों ही हम रोमन गोत्र के अन्तर्विवाही होने की अजीब धारणा त्याग देते हैं, और ज्यो ही हम मौर्गन की तरह उसे मूलतः बहिर्विवाही मान लेते हैं, त्यों ही यह सारा मामला बहुत सीधा और साफ मालूम पड़ने लगता है।

अन्त मे एक और भी मत है, जिसके अनुयायियों की सख्या शायद सबसे अधिक है। इस मत के माननेवालों का कहना है कि उद्धरण का अर्थ केवल यह है

"कि मुक्त की हुई दासिया (libertae) बिना विशेष इजाजत के e gente enubere" (गोत्र के बाहर विवाह) "नहीं कर सकती और न कोई ऐसा कदम उठा सकती है, जिसका सम्बन्ध capitis deminutio minima" (पारिवारिक अधिकारों की रंच-मात्र भी हानि) "से हो और जिसके परिणामस्वरूप liberta गोत्र से अलग हो जाये।" (लांगे, 'रोमन पुरावशेष', बर्लिन, १८५६, खंड १, पृ० १९५; वहां हुशके[¹³] का जिक्र करते हुए लिवी के उपरोक्त उद्धरण पर टिप्पणी की गयी है।)

यदि यह धारणा सही है तो लिवी के उद्धरण से रोम की स्वतंत्र स्त्रियों की स्थिति के बारे मे और भी कम प्रमाण मिलता है, और तब यह कहने का और भी कम आधार रह जाता है कि रोम की स्वतन्त्र स्त्रिया केवल अपने गोत्र के भीतर विवाह करने के लिये बाध्य थी।

Enuptio gentis – इन शब्दो का इसी एक अंश मे प्रयोग हुआ है। रोम के सम्पूर्ण साहित्य मे और कही ये शब्द नही मिलते। Enubere शब्द, जिसका अर्थ बाहर विवाह करना होता है, लिवी की रचना मे ही केवल तीन जगहो पर मिलता है, पर कही भी उसका प्रयोग गोत्र के संदर्भ मे नही किया गया है। अत. इस एक उद्धरण के आधार पर ही अजीबोगरीब ख़याल पैदा हुआ कि रोम की स्त्रियों को केवल अपने गोत्र के भीतर विवाह करने की इजाजत थी। परन्तु इस बात की बिलकुल पुष्टि नही की जा सकती। क्योंकि या तो इस उद्धरण मे मुक्त कर दी गयी दास स्त्रियों पर लगाये गये विशेष प्रतिबंधो का जिक्र है, और ऐसी हालत मे इससे जन्मना स्वतंत्र स्त्रियों (ingenuae) के बारे मे कुछ साबित नही होता, और या यह उद्धरण जन्मना स्वतंत्र स्त्रियो से भी सम्बन्धित है और इस सूरत मे इससे यही साबित होता है कि स्त्रिया सामान्यत: गोत्र के बाहर विवाह करती थी और विवाह होने पर वे अपने पतियो के गोत्रो मे सम्मिलित हो जाती थी। इसलिये यह उद्धरण मोम्मसेन के मत के विरुद्ध जाता है और मौर्गन के मत को पुष्ट करता है।

रोम की स्थापना के लगभग तीन सौ वर्ष बाद भी गोत्र के बंधन इतने मजबूत थे कि फेबियन नामक एक कुलीन गोत्र सीनेट से आज्ञा लेकर पडोस के वीयी नामक नगर पर अकेले ही चढाई कर सका था। कहा जाता है कि तीन सौ छ: फ़ेबियन चढ़ाई करने निकले थे और रास्ते में घात लगाये हुए दुश्मन के हाथो मारे गये। केवल एक लडका जिन्दा बचा, जिससे गोत्र की वश-परपरा चली।

जैसा कि हम ऊपर बता चुके हैं, दस गोत्रों को मिलाकर एक बिरादरी बनती थी, जो रोम मे क्यूरिया कहलाती थी और उसे यूनानी बिरादरी से अधिक महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारियां मिली हुई थीं। हर एक क्यूरिया के अलग धार्मिक रीति-रिवाज, पवित्र स्मृतिचिह्न और पुरोहित होते थे। पुरोहितों को सामूहिक रूप मे रोम का पुरोहित मंडल कहा जाता था। दस क्यूरियाओं से एक कबीला बनता था जो शुरू में, अन्य लैटिन क़बीलों की तरह, शायद खुद अपना मुखिया – सेनानायक तथा मुख्य पुरोहित – चुना करता था। तीन क़बीले मिलकर रोमन जनता – populus romanus – कहलाते थे।

इस प्रकार, रोमन जाति में केवल वे लोग ही शामिल हो सकते थे जो किसी गोत्र के, और इसलिये किसी क्यूरिया और क़बीले के सदस्य थे। इस जाति का पहला संविधान निम्नलिखित था। सार्वजनिक मामलों का सचालन सीनेट के हाथ मे था। सीनेट के सदस्य, जैसा कि पहले पहल निबूहर ने सही-सही बताया था, तीन सौ गोत्रों के मुखिया होते थे।[124] गोत्रों के बुजुर्ग होने के नाते वे पिता, patres, कहलाते थे, और सामूहिक रूप से – सीनेट (जिसका अर्थ है वयोवृद्ध लोगो की परिषद्, क्योंकि senex शब्द का मतलब है वयोवृद्ध)। यहा भी चूंकि हर गोत्र के मुखिया को आम तौर पर एक खास परिवार मे से चुनने की प्रथा थी, इसलिये इन परिवारो के रूप मे पहला वशगत अभिजात वर्ग पैदा हो गया। ये परिवार अपने को पेट्रीशियन, अर्थात् कुलीन परिवार कहते थे और दावा करते थे कि सीनेट का सदस्य होने तथा अन्य विभिन्न पदों पर नियुक्त किये जाने का अधिकार केवल उन्ही को है। यह बात कि कुछ समय बाद जनता ने इस दावे को स्वीकार कर लिया और वह एक वास्तविक अधिकार बन गया, इस पौराणिक कथा मे कही जाती है कि प्रथम सीनेटरों तथा उनके वंशजों को रोमुलस ने पेट्रीशियन पद प्रदान किये थे और इस पद के विशेषाधिकार। एथेंस की bulê की भांति, रोमन सीनेट को भी बहुत-से मामलों मे फैसला देने का अधिकार था और अधिक महत्त्वपूर्ण मामलों मे, विशेषतः नये कानूनों को बनाने के बारे मे, प्रारम्भिक बहस सीनेट में होती थी और निर्णय जन-सभा मे किया जाता था, जो comitia curiata (क्यूरिया-सभा) कहलाती थी। सभा मे हर क्यूरिया के सदस्य एकसाथ बैठते थे और क्यूरियाओं मे शायद हर गोत्र के सदस्य भी एकसाथ बैठते थे। सवालों पर फैसला करते समय तीसों क्यूरियाओं में से हर एक का एक वोट हो

था। क्यूरियाओं की यह सभा कानून बनाती थी या रद्द करती थी, rex (तथाकथित राजा) समेत सभी ऊंचे पदाधिकारियों को चुनती थी, युद्ध की घोषणा करती थी (परन्तु सुलह सीनेट करती थी), और जिन मामलों में रोमन नागरिकों को मृत्यु-दंड मिला होता था, उन सभी की अपील सर्वोच्च न्यायालय के रूप मे सुनती थी। अन्त में सीनेट तथा जन-सभा के साथ-साथ rex होता था, जिसे ठीक यूनानी बैसिलियस के समान समझना चाहिए, और जो उस तरह का निरंकुश राजा कदापि नहीं था, जैसा कि मोम्मसेन ने[125] उसे *बना दिया है।** वह सेनानायक का, मुख्य पुरोहित का और कुछ न्यायालयों मे अध्यक्ष का पद भी रखता था। वह कोई दीवानी काम नही करता था। सेनानायक के रूप में अनुशासन कायम रखने के तथा न्यायालयों के अध्यक्ष के नाते उनके दंडादेशों को क्रियान्वित करने के अधिकार के सिवा उसका नागरिकों के जीवन पर, उनकी स्वतंत्रता पर और उनकी *सम्पत्ति पर कोई अधिकार न था।* rex का पद *वंशगत* नही था। इसके विपरीत, शुरू में, रेक्स का चुनाव *हुआ करता था।* शायद पिछला रेक्स उसे नामजद करता था और क्यूरियाओं की सभा उसका चुनाव करती थी तथा एक दूसरी सभा बुलाकर उसका विधिपूर्वक अभिषेक किया जाता था। उसे गद्दी से हटाया जा सकता था, यह टारक्वीनियस सुपर्बस की कहानी से सिद्ध हो जाता है।

---

* लैटिन भाषा का rex शब्द कैल्टिक-आयरिश भाषा के righ (*कबीले का मुखिया*) और गौथिक भाषा के reiks का *पर्याय है।* जर्मन भाषा के शब्द Fürst (अंग्रेजी भाषा मे first और डेनिश भाषा मे förste) की तरह, इस शब्द का भी शुरू मे अर्थ था गोत्र या कबीले का मुखिया। *इसका एक सबूत यह है कि चौथी शताब्दी तक गौथ लोगों के पास* बाद के जमाने के राजा के लिये, पूरी जाति के सैनिक मुखिया के लिये, एक विशेष शब्द हो *गया था* – thiudans। बाइबिल के उलफिला के अनुवाद में *अर्टाशीर और हेरोड को कभी reiks नहीं कहा गया है,* बल्कि thiudans के नाम से पुकारा गया है और सम्राट टाइबीरियस के साम्राज्य को reiki नही, बल्कि thiudinassus कहा गया है। गौथिक "थियुडान्स", या, जैसा कि हम *प्रायः गलत ढंग से उसका अनुवाद करते है, राजा* थियुडैराइक्स, थियोडोरिक, अर्थात् डाईट्रिख – मे ये दोनो शब्द साथ-साथ चलते है। (**एंगेल्स का नोट**)

वीर-काल के यूनानियों की तरह, तथाकथित राजाओं के काल के रोमन लोग भी गोत्रों, बिरादरियों तथा क़बीलों पर आधारित और उनसे उत्पन्न एक सैनिक लोकतंत्र में रहते थे। यद्यपि यह सच है कि कुछ हद तक इन क्यूरियाओं और क़बीलों का गठन बनावटी ढंग से हुआ था, परन्तु साथ ही उन्हें उस समाज के सच्चे और प्राकृतिक नमूने पर बनाया गया था जिसमें ये क्यूरिया और क़बीले पैदा हुए थे और जो समाज अभी भी उनके चारों ओर मौजूद था। हालांकि उस समय तक पैट्रिशियन कुलीनों का, जोकि स्वाभाविक रूप से विकसित हुए थे, काफ़ी ज़ोर हो गया था, और हालांकि रेक्स लोग धीरे-धीरे अपने अधिकारों का दायरा बढ़ाने की कोशिश कर रहे थे, फिर भी इससे संविधान का आदिम तथा बुनियादी स्वरूप नहीं बदलता, और मुख्य बात यही है।

बुद्धिवादी-व्यवहारवादी प्रयासों और वर्णनों ने इस अंधकार को और भी घना कर दिया है, जिनकी कृतियां हमारी स्रोत-सामग्री का काम देती हैं—निश्चित रूप से यह बताना असम्भव है कि पुरानी गोत्र-व्यवस्था को जिस क्रान्ति ने नष्ट किया, वह कब, क्यों और कैसे हुई थी। इस सम्बन्ध मे हम निश्चय के साथ केवल एक बात कह सकते हैं और वह यह कि इस क्रांति की जड़ में प्लेबियनो और populus का संघर्ष था।

नये संविधान ने, जिसका निर्माता रेक्स सर्वियस टुल्लियस कहा जाता है और जो यूनानी नमूने के, विशेषकर सोलन के नमूने पर आधारित था, एक नयी जन-सभा की स्थापना की, जिसमें भाग लेने या न लेने का अधिकार populus और प्लेबियनों दोनों को बिना किसी भेदभाव के इस आधार पर होता था कि वे सैनिक सेवा प्रदान करते थे या नहीं। आबादी के तमाम पुरुषों को जो सैनिक सेवा प्रदान करने के लिये बाध्य थे, दौलत के आधार पर छः वर्गों में बांट दिया गया था। पहले पांच वर्गों के लिये न्यूनतम साम्पत्तिक अर्हता यह थी: पहला वर्ग—एक लाख एस्से; दूसरा वर्ग—७५ हजार एस्से; तीसरा वर्ग—५० हजार एस्से; चौथा वर्ग—२५ हजार एस्से; पांचवां वर्ग—११ हजार एस्से। द्यूरो दे ला माल के अनुसार ये क्रमशः लगभग १४,०००; १०,५००; ७,०००; ३,६०० और १,५७० मार्क के बराबर होते थे।[126] छठा वर्ग सर्वहारा का था जिनके पास इससे भी कम सम्पत्ति थी और जिन्हें न कर देना पड़ता था और न जिनके लिये सेना में काम करना आवश्यक था। नयी जन-सभा मे, जिसे सेंटुरियाओं की सभा (comitia centuriata) कहते थे, नागरिक लोग सैनिकों की तरह सौ-सौ की टुकड़ियों (सेंटुरियाओं) मे भाग लेते थे और हर सेंटुरिया का एक वोट होता था। पहला वर्ग ८० सेंटुरियाएं भेजता था, दूसरा वर्ग २२, तीसरा वर्ग २०, चौथा वर्ग २२, पांचवां वर्ग ३०, और छठा वर्ग भी औचित्य के ख़याल से १ सेंटुरिया भेजता था। इनके अलावा घुड़सवारों की १८ सेंटुरियाएं होती थीं, जिनमें सबसे अधिक धनी लोग लिये जाते थे। कुल मिलाकर १९३ सेंटुरियायें होती थीं। बहुमत प्राप्त करने के लिये ९७ वोट ज़रूरी होते थे। मगर केवल घुड़सवारों और पहले वर्ग को ही मिलाकर ९८ वोट हो जाते थे और इस प्रकार नयी जन-सभा में उनका बहुमत था। जब उनमें मतभेद नहीं होता था, तब वे दूसरे वर्गों से पूछते तक नहीं थे और खुद फ़ैसला कर डालते थे जो वैध माना जाता था।

अब पुरानी क्यूरियाओ की सभा के सभी राजनीतिक अधिकार (कुछ नाम मात्र के अधिकारो को छोड़कर) सेंटुरियाओं की इस नयी सभा को मिल गये। और तब, जैसा एथेंस मे हुआ था, क्यूरियाओ और उनके अग, गोत्रों की हैसियत गिरकर महज लोगो की निजी तथा धार्मिक संस्थाओ जैसी हो गयी और इस रूप मे वे बहुत दिन तक घिसटते हुए चलते रहे, हालाकि क्यूरियाओ की सभा को लोग जल्दी ही भूल गये। गोत्रो पर आधारित पुराने तीन कबीलो को भी राज्य से बहिष्कृत करने के लिये चार प्रादेशिक कबीलो की स्थापना की गयी, जिनमे से हर एक शहर के चौथाई हिस्से मे रहता था और कुछेक राजनीतिक अधिकारो का उपभोग करता था।

इस प्रकार रोम मे भी, तथाकथित राजतंत्र के ख़त्म होने से पहले ही, व्यक्तिगत रक्त-सम्बन्धो पर आधारित पुरानी समाज-व्यवस्था नष्ट कर दी गयी और उसकी जगह पर प्रादेशिक विभाजन तथा धन-सम्पत्ति के भेदो पर आधारित एक नये संविधान की, एक वास्तविक राज्य-संविधान की स्थापना की गयी। यहा सार्वजनिक सत्ता उन नागरिको के हाथ मे थी जिन पर सैनिक सेवा का दायित्व था और उसकी धार न केवल दासो के ख़िलाफ थी, बल्कि उस तथाकथित सर्वहारा के भी ख़िलाफ़ थी जो सैनिक सेवा से बहिष्कृत और शस्त्रधारण करने के अधिकार से वंचित था।

जब अन्तिम रेक्स, टारक्वीनियस सुपर्बस को, जो सत्ता हड़पकर सचमुच राजा बन बैठा था, निकाल बाहर किया गया और रेक्स की जगह पर, समान अधिकार वाले दो सेनानायक (कौंसिल) नियुक्त किये गये (इरोक्वा लोगो मे भी यही चलन था), तब नये संविधान का और आगे विकास ही किया गया था। राज्य के पदो तथा राज्य की भूमि के बंटवारे को लेकर चलनेवाले पेट्रीशियनो और प्लेबियनों के समस्त संघर्ष समेत रोमन गणराज्य का पूरा इतिहास-चक्र इसी संविधान की परिधि के भीतर चलता रहा। इसी परिधि के भीतर कुलीन अभिजात वर्ग अन्तिम रूप से उन बड़े-बड़े भूमि और धन पतियो के वर्ग मे घुल-मिल गया, जिन्होंने धीरे-धीरे किसानों की, जिन्हें सैनिक सेवा ने बरबाद कर दिया था, सारी ज़मीन हड़प ली और इस तरह हासिल हुई विशाल नयी ज़मीनों पर उन्होंने दासो से खेती कराना शुरू किया, इटली को वीरान कर दिया और इस तरह न केवल सम्राटों के शासन के लिये, बल्कि उनके बाद आनेवाले जर्मन बर्बरों के लिये भी रास्ता खोल दिया।

७
केल्ट तथा जर्मन लोगों में गोत्र

आज भी विभिन्न जांगल तथा बर्बर जन-जातियो में गोत्र-व्यवस्था की जो संस्थायें कमोबेश शुद्ध रूप मे पायी जाती है, या एशिया की सभ्य जातियों के प्राचीन इतिहास मे ऐसी संस्थाओं के जो चिह्न मिलते हैं, उनकी हम यहा स्थानाभाव के कारण चर्चा नही कर सकते। ये संस्थायें या उनके चिह्न सभी जगह मिलते है। कुछ उदाहरण देना काफ़ी होगा। जिस समय गोत्र को पहचाना तक नही गया था, उसी समय उस आदमी ने, जिसने गोत्र को गलत ढंग से समझने की सबसे अधिक कोशिश की है, गोत्र की ओर इंगित किया था और मोटे तौर पर उसका सही-सही वर्णन किया था। हमारा मतलब मैक-लेनन से है, जिन्होंने कि काल्मीक, चेरकेसियन और नेनेत्स (Samojeden)* में, और वारली, मगर तथा मणीपुरी नाम की तीन भारतीय जातियो में गोत्र-व्यवस्था के पाये जाने के बारे में लिखा था।[127] हाल मे *मक्सिम कोवालेव्स्की ने इस व्यवस्था का वर्णन किया है, जो उन्हें पशाव,* खेवसूर, स्वान तथा काकेशिया के अन्य कबीलों में मिली है।[128] हम यहां पर केल्ट तथा जर्मन लोगों मे गोत्र-व्यवस्था के अस्तित्व के विषय में कुछ संक्षिप्त टिप्पणियों तक ही अपने को सीमित रखेंगे।

प्राचीनतम केल्ट कानूनो मे, जो आज भी मिलते है, हम गोत्र-व्यवस्था को अभी भी जीता-जागता पाते हैं। आयरलैंड मे जहां अंग्रेज़ो ने ज़बर्दस्ती इस व्यवस्था को नष्ट कर डाला है, वह आज भी, कम से कम सहजभावी रूप से लोक-मानस मे जीवित है। स्काटलैंड में वह पिछली शताब्दी के

---

* सुदूर उत्तर में रहनेवाली नेनेत्स जाति का पुराना नाम। – सं०

मध्य तक पूरे जोर पर थी, और वहां भी उसे अंग्रेजों के हथियार, क़ानून और अदालत ही धराशायी कर सके।

वेल्स के पुराने क़ानून, जो अंग्रेजो द्वारा वेल्स की विजय[129] के कई सदी पहले, ग्यारहवीं सदी के बाद के लिखे हुए नही है, यह बताते हैं कि तब भी कहीं-कहीं पूरे गांव के गांव सामदायिक खेती करते थे, हालांकि ऐसी खेती अपवाद और एक पुरानी ग्राम प्रथा के अवशेष के रूप में ही होती थी। हर परिवार के पास पांच एकड़ जमीन खुद जोतने-बोने के लिये होती थी और एक और खेत अन्य परिवारो के साथ मिलकर जोतने के लिये होता था, जिसकी उपज सब में बंट जाती थी। आयरलैंड और स्काटलैंड के इनसे मिलते-जुलते उदाहरणों के आधार पर यदि वेल्स के इन गाव-समदायो का मूल्याकन किया जाये तो इस बात में तनिक भी सन्देह नही रह जाता कि वे वास्तव मे या तो गोत्र हैं या गोत्रों की उपशाखाएं, हालाकि सम्भव है कि वेल्स के कानूनों की फिर से खोज करने पर, जो मैं इस वक़्त समय की कमी के कारण नही कर सकता (मेरी टिप्पणियां १८६९ की है[130]), इसकी प्रत्यक्ष पुष्टि न हो। परन्तु वेल्स और आयरलैंड की सामग्री से जिस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण मिल जाता है, वह यह है कि ग्यारहवी सदी तक केल्ट लोगों में युग्म-परिवार के स्थान पर एकनिष्ठ विवाह पूरी तौर पर कायम नहीं हुआ था। वेल्स में विवाह-सम्बन्ध तभी अटूट माना जाता था जब विवाह हुए सात वर्ष पूरे हो जायें, या यो कहें कि सात वर्ष तक विवाह को किसी भी समय नोटिस देकर भंग किया जा सकता था। सात वर्ष पूरे होने में यदि केवल तीन रातों की कमी होती तो भी विवाहित जोड़ा अलग हो सकता था। ऐसा होने पर जोड़े की सम्पत्ति दोनों के बीच बंट जाती थी; स्त्री सारी सम्पत्ति के दो हिस्से करती थी, पुरुष एक हिस्सा चुन लेता था। फ़र्नीचर बांटने के कुछ बहुत ही अजीब नियम थे। यदि पुरुष विवाह को भंग करता था तो उसे स्त्री का दहेज और कुछ अन्य वस्तुएं वापस कर देनी पड़ती थीं। यदि स्त्री विच्छेद चाहती थी तो उसे कम मिलता था। बच्चों में से दो पुरुष को मिलते थे, एक—मझोला बच्चा—स्त्री को मिलता था। यदि स्त्री तलाक के बाद फिर विवाह करती थी और उसका पहला पति उसे वापस ले जाने के लिये पहुंच जाता था, तो स्त्री को, भले ही वह अपने नये पति की शय्या पर एक पैर रख चुकी हो, लौट आना पड़ता था। परन्तु यदि

पुरुष सात साल तक साथ रह चुके होते थे, तो उन्हें विवाह की रस्म पूरी हुए बिना भी पति-पत्नी समझा जाता था। विवाह के पहले लड़कियों के कौमार्य बनाये रखने के बारे में कोई ख़ास सख़्ती नहीं बरती जाती थी, और न इसकी माग की जाती थी। इस मामले से सम्बन्ध रखनेवाले नियम बहुत ही हल्के ढंग के हैं और पूंजीवादी नैतिकता के विपरीत हैं। यदि कोई स्त्री व्यभिचार करती थी तो उसके पति को उसे पीटने का हक़ होता था। जिन तीन सूरतों में पत्नी को पीटने पर भी पति दंड का भागी नहीं समझा होता था, उनमें से एक यह थी। परन्तु पत्नी को पीटने के बाद पति और किसी तरह की क्षतिपूर्ति की माग नहीं कर सकता था, क्योंकि

> "किसी अपराध का या तो प्रायश्चित्त हो सकता है, या उसका बदला लिया जा सकता है, पर दोनों चीजें एकसाथ नहीं हो सकती।"[131]

जिन कारणों से स्त्री बंटवारे में अपने अधिकारों को अक्षुण्ण रखती हुई पुरुष को तलाक़ दे सकती थी वे अत्यन्त भिन्न प्रकार के होते थे— पुरुष के मुह से बदबू आना भी तलाक़ देने के लिये पर्याप्त कारण समझा जाता था। कानून में मुआवज़े की उस रकम का महत्त्वपूर्ण स्थान था जो पहली रात के हक़ के लिये कबीले के मुखिया या राजा को देनी पड़ती थी (इस हक़ को gobr merch कहते थे, जिससे मध्ययुगीन शब्द marcheta और फ़्रांसीसी शब्द marquette निकले हैं)। स्त्रियों को जन-सभाओं में वोट देने का अधिकार था। इस सब के साथ-साथ यदि हम इन बातों पर भी विचार करें कि आयरलैंड में भी इसी प्रकार की हालत पायी जाती थी; वहा भी अस्थायी विवाहों का चलन था और तलाक़ के समय स्त्री को सुनिश्चित विशेषाधिकार तथा विशेष सुविधाएं मिलती थीं, यहां तक कि उसे घरेलू काम का भी मुआवज़ा मिलता था; अन्य पत्नियों के साथ एक "बड़ी पत्नी" भी होती थी और किसी मृत व्यक्ति की सम्पत्ति बाटने के समय उसकी वैध तथा अवैध सन्तानों में कोई भेद नहीं किया जाता था, —यदि हम इन तमाम बातों को ध्यान में रखें तो हमारे सामने युग्म-विवाह का एक ऐसा चित्र उपस्थित होता है जिसकी तुलना में उत्तरी अमरीका में प्रचलित विवाह पद्धति कठोर मालूम पड़ती है। परन्तु सीज़र के समय जो जाति यूथ-विवाह की अवस्था में रहती थीं, वह यदि ग्यारहवीं सदी में युग्म-विवाह की अवस्था में हो तो यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

आयरलैंड के गोत्र (उसे वे sept कहते थे और क़बीले को clainne कहते थे) के अस्तित्व का प्रमाण और उसका वर्णन केवल कानून की प्राचीन पुस्तको मे ही नही मिलता है, वल्कि सत्रहवीं सदी के उन अंग्रेज न्यायशास्त्रियों की रचनाओ मे भी मिलता है जो आयरलैंड की कवायली जमीनों को इंगलैंड के राजा की जमीनो में बदल डालने के लिये आयरलैंड भेजे गये थे। उसके पहले जमीन कवीले या गोत्र की सम्मिलित सम्पत्ति होती थी, सिवाय उस जमीन के जिसे मुखियाओं ने अपना निजी इलाका बना लिया था। जब गोत्र का कोई सदस्य मर जाता था और इसलिये जब कोई परिवार भंग हो जाता था, तव गोत्र का मुखिया (अंग्रेज न्यायशास्त्री उसे caput cognationis कहते थे) गोत्र की सारी जमीन को बाकी परिवारों के बीच नये सिरे से बाट देता था। यह विभाजन मोटे तौर पर उन्ही नियमो के अनुसार होता रहा होगा जो जर्मनी में पाये जाते थे। आयरलैंड में आज भी ऐसे कुछ गांव मिल जाते हैं जिनमे लोगो का जमीनों पर अधिकार मिला-जुला क़ब्जा होता है। इसे rundale प्रथा कहते हैं। चालीस या पचास साल पहले ऐसे गांवो की संख्या बहुत बड़ी थी। जो जमीन कभी गोत्र की सामूहिक सम्पत्ति थी, पर जिसे अंग्रेज विजेताओ ने हड़प लिया था, उस पर खेती करनेवाला हर काश्तकार, जो अब व्यक्तिगत रूप से खेती करता है, अपने खेत के लिये लगान देता है। परन्तु इसके बावजूद गाव की समस्त कृषियोग्य भूमि और चरागाहो को इकट्ठा कर लिया जाता है और फिर ज़मीन के उपजाऊपन तथा स्थिति का ख़याल रखते हुए उन्हें पट्टियो में, या जैसा कि वे मोजेल प्रदेश मे कहलाती हैं, Gewanne में बाट लेते हैं, और गांव के हर किसान को हर Gewann मे हिस्सा मिलता है। खादर भूमि और चरागाह का इस्तेमाल सम्मिलित रूप से होता है। सिर्फ पचास साल पहले की बात है कि समय-समय पर, कभी-कभी हर साल, गांव की जमीन का नये सिरे से बंटवारा हो जाता था। ऐसे किसी प्रथा rundale वाले गांव का नक़्शा देखिये तो आपको लगेगा कि मोज़ेल प्रदेश या होख़वाल्ड में खेतिहर परिवारो के किसी जर्मन समुदाय (Gehöfersschaft) का नक़्शा देख रहे हैं। गांवो में पाये जानेवाले factions (दलो) के रूप में भी गोत्र जीवित हैं। कभी-कभी आयरलैंड के किसान ऐसे दल बनाते पाये जाते हैं जो बिलकुल बेतुके और अर्थशून्य भेदों पर आधारित मालूम पड़ते हैं और अंग्रेजों की बिलकुल समझ मे नही आते। इन दलों का इसके सिवा और

कोई उद्देश्य नही मालूम पडता कि वे एक दूसरे की भरपूर मरम्मत करने के लोकप्रिय खेल के लिये जमा हों। वास्तव में इन दलो द्वारा, उन गोत्रो को कृत्रिम रूप से पुनरुज्जीवित, बाद के काल मे प्रतिस्थापित किया गया है जो अब नष्ट हो चुके हैं; वे अपने विशिष्ट ढंग से वंशगत गोत्र-चेतना के नैरन्तर्य को प्रकट करते हैं। प्रसंगवश यह भी कह दें कि कुछ स्थानो मे एक गोत्र के सदस्य आज भी लगभग उसी इलाके में रहते पाये जाते हैं जो उनके गोत्र का पुराना इलाक़ा था। उदाहरण के लिये, इस सदी के चौथे दशक मे मोनाघन हलके के अधिकतर निवासियो मे केवल चार पारिवारिक नाम पाये जाते थे। मतलब यह कि इस हलके के तमाम लोग चार गोत्रों या कबीलों के वंशज थे।*

---

* आयरलैंड मे मैंने कुछ दिन बिताये[132] तो एक बार फिर मुझे इस बात का अहसास हुआ कि इस मुल्क की देहाती आबादी के मन मे आज भी किस हद तक गोत्र युग की धारणाएं जीवित हैं। ज़मीदार को, जिससे लगान पर जमीन लेकर किसान खेती करता है, वह अभी भी एक प्रकार का क़बायली मुखिया समझता है जो सब के हित में खेती की देखभाल करता है, जिसे किसानो से लगान के रूप मे खिराज पाने का अधिकार है, पर साथ ही जिसका यह कर्त्तव्य भी है कि जरूरत पड़ने पर किसानों की मदद करे। इसी तरह, हर खुशहाल आदमी का यह फर्ज समझा जाता है कि जब भी उसके गरीब पड़ोसी मुसीबत में हों, तो वह उनकी मदद करे। यह मदद खैरात नही है। कबीले के गरीब सदस्य को कबीले के धनी सदस्य या कबीले के मुखिया से यह मदद पाने का हक है। इसी कारण अर्थशास्त्री तथा न्यायशास्त्री अक्सर यह शिकायत करते नजर आते हैं कि आयरलैंड के किसानों के दिमाग मे पूजीवादी सम्पत्ति के आधुनिक विचार को बैठाना असम्भव है। आयरलैंड के निवासी यह समझने में बिलकुल असमर्थ हैं कि कोई ऐसी सम्पत्ति भी हो सकती है जिसके केवल अधिकार होते हैं और कर्त्तव्य नही होते। कोई आश्चर्य नही कि गोत्र-समाज के ऐसे भोले विचारो को लिये हुए आयरलैंड के लोग जब अचानक इंगलैंड या अमरीका के बड़े शहरों में ऐसी आबादी के बीच पहुंच जाते हैं जिसके नैतिक तथा कानूनी मानदंड बिलकुल भिन्न ढंग के होते हैं, तब नैतिकता तथा न्याय दोनो के बारे मे उनके विचार गडबड़ घोटाले मे पड़ जाते हैं, वे संतुलन खो बैठते हैं और अक्सर उनकी पूरी की पूरी जमातों का नैतिक पतन हो जाता है। (**१८६१ के चौथे संस्करण में एंगेल्स का नोट**)

स्काटलैंड में गोत्र-व्यवस्था का पतन १७४५ के विद्रोह के दमन से आरंभ हुआ है।[133] इस व्यवस्था मे स्काटलैंड का कबीला कौनसी कड़ी था, अभी इसकी खोज होना बाकी है; परन्तु वह इस व्यवस्था की एक कड़ी था, इसमें कोई सन्देह नही है। स्काटलैंड की पहाड़ियों में यह क़बीला क्या चीज़ थी, यह वाल्टर स्काट के उपन्यासों को पढ़कर हमारी आंखों के सामने सजीव हो उठता है। मौर्गन के शब्दों मे यह

> "संगठन और भावना की दृष्टि से गोत्र-व्यवस्था का एक बहुत अच्छा उदाहरण है और इस बात का एक असाधारण प्रमाण है कि गोत्र-जीवन का अपने सदस्यो पर कितना अधिक ज़ोर होता था... उनके कुलवैर और उनकी रक्त-प्रतिशोध की प्रथा, प्रत्येक गोत्र का स्थान विशेष मे निवास, ज़मीनों की संयुक्त रूप से जोताई-बोआई, कबीले के सदस्यो में मुखिया के प्रति और एक दूसरे के प्रति वफ़ादारी की भावना–इन सब मे हमे गोत्र की सामान्य और स्थायी विशेषताओं का दर्शन होता है... वंश पुरुष से चलता था। यानी, केवल पुरुषो के बच्चे कबीले के सदस्य माने जाते थे और स्त्रियों के बच्चे अपने-अपने पिताओं के कबीले के सदस्य होते थे।"[134]

पिक्ता नामक राज-परिवार इस बात का प्रमाण है कि स्काटलैंड मे पहले मातृ-सत्ता कायम थी। बेडे के अनुसार इस राज-परिवार मे उत्तराधिकार मातृ-परम्परा द्वारा प्राप्त होता था।[135] यहा तक कि स्काट और साथ ही वेल्स लोगो मे भी इस बात का एक प्रमाण मिलता है कि उनमे कभी पुनालुआन परिवार का चलन था। हमारा मतलब इस बात से है कि मध्य युग तक उनमे पहली रात के अधिकार की प्रथा पायी जाती थी, अर्थात् कबीले का मुखिया या राजा, पहले के सामूहिक पतियों के अन्तिम प्रतिनिधि के रूप मे, हर नव वधू के साथ पहली रात बिताने का दावा कर सकता था और केवल निष्क्रय-धन देकर ही नव दम्पत्ति को इससे छुटकारा मिलता था।

* * *

यह बात निर्विवाद रूप से सच है कि जातियों के प्रव्रजन के समय तक जर्मन लोग गोत्रों मे संगठित थे। हमारे युग (ईसा) के कुछ सौ साल पहले ही ये लोग डेन्यूब, राइन, विस्चुला नदियों और उत्तरी सागरों के

बीच के इलाकों मे आकर बसे होंगे। सिम्बरी और ट्यूटन लोग उस समय तक भी पूरे वेग से प्रव्रजन कर रहे थे और सुएवी लोग सीजर के समय तक कही टिककर नही रहते थे। सीजर ने साफ-साफ कहा है कि ये लोग गोत्रों और सम्बन्धियों (gentibus cognationibusque)[136] के अनुसार बसे थे; और जब जुलिया गोत्र (gens Julia) के किसी भी रोमन के मुंह से gentibus शब्द निकलता है तो उसका एक निश्चित अर्थ होता है, जिसको किसी तरह तोड़ा-मरोड़ा नही जा सकता। यह बात सभी जर्मनों के लिये सच है; यहा तक कि जीते हुए रोमन प्रांतो मे भी जर्मन लोग गोत्रों के अनुसार ही बसे थे। 'एलामान्नी कानून' से यह बात सिद्ध होती है कि डेन्यूब नदी के दक्षिण के जीते हुए प्रदेश में लोग गोत्रों (genealogiae) के अनुसार जाकर बसे।[137] Genealogia शब्द का प्रयोग यहा ठीक उसी अर्थ मे हुआ है जिस अर्थ मे बाद मे "मार्क" या Dorfgenossenschaft (ग्राम समुदाय) शब्दो का प्रयोग हुआ। हाल में कोवालेव्स्की ने यह मत प्रगट किया था कि ये genealogiae बड़े-बड़े कुटुम्ब-समुदाय थे, जिनमे जमीन बंटी हुई थी और जिनसे बाद मे चलकर ग्राम-समुदाय बन गये।[138] Fara के बारे में भी यही बात सच हो सकती है। बरगाडी और लैंगोबार्ड लोग – पहला एक गौथ क़बीला है और दूसरा हर्मीनोनी या उत्तरी जर्मन क़बीला – यदि ठीक उसी चीज के लिये नही, तो लगभग उसी चीज के लिये इस fara शब्द का प्रयोग करते थे, जिसके लिये 'एलामान्नी कानून' मे genealogia शब्द का प्रयोग किया गया है। यह चीज वास्तव मे गोत्र थी अथवा कुटुम्ब-समुदाय यह निश्चय करने के लिये अभी और खोज होना आवश्यक है।

भाषा-सम्बन्धी सामग्री से यह बात एकदम साफ नही होती कि सभी जर्मन गोत्र के लिये एक ही नाम का प्रयोग करते थे या नही, और यदि करते थे तो वह नाम क्या था। शब्दरचनाशास्त्र के अनुसार, यूनानी genos और लैटिन gens, गौथ भाषा के kuni तथा मध्योत्तर जर्मन भाषा के künne के समान है, और इन सब शब्दो का एक ही अर्थ में प्रयोग होता है। और यह बात कि यूनानी भाषा का gyne, स्लाव शब्द žena, गौथ शब्द qvino और प्राचीन नोर्स भाषा के kona, kuna – "स्त्री" के ये विभिन्न पर्याय सब एक ही धातु से निकले हैं, मातृसत्ता-काल की ओर इंगित करती है। जैसा ऊपर कहा जा चुका है कि लैंगोबार्ड तथा बरगाडी लोगों में fara नाम पाया जाता है, जो ग्रिम के अनुसार कल्पित

धातु fisan—जन्म देना—से निकला है। मेरे विचार से हमें इस शब्द का मूल faran धातु मानना चाहिये, जिसका अर्थ है विचरना या प्रव्रजन करना।* तब fara का मतलब होगा प्रव्रजन करनेवाले दल का एक सुनिश्चित भाग। यह कहने की आवश्यकता नही कि इसमें सगे-सम्बन्धी लोग होते थे। पहले पूर्व की ओर, फिर पश्चिम की ओर कई सदियो तक घूमते रहने के दौरान यह नाम धीरे-धीरे स्वयं गोत्र-समुदाय के साथ जुड़ गया। इसके अलावा गौथ शब्द sibja, एंग्लो-सैक्सन शब्द sib, प्राचीन उत्तर जर्मन भाषा के sippia, sippa—रक्त-सम्बन्धी जन** शब्द से निकले है। प्राचीन नोर्स केवल बहुवचन—sifjar, अर्थात् सम्बन्धीगण है; एकवचन Sif एक देवी का नाम है। अत मे एक और शब्द है, जो 'हिल्डेब्राड के गीत'[139] मे उस स्थल में मिलता है, जहा हिल्डेब्राड हाडुब्राड से पूछता है:

"जाति के पुरुषो मे तेरा पिता कौन है... अर्थात् तेरा वंश कौनसा है?" (eddo huêlîhhes *cnuosles* du sîs).

यदि गोत्र के लिये सभी जर्मन एक नाम का प्रयोग करते थे तो बहुत सम्भव है कि यह नाम गौथिक भाषा का kuni हो, क्योकि न सिर्फ गौथ से मिलती-जुलती दूसरी भाषाओं मे इसी शब्द का प्रयोग मिलता है, बल्कि kuning—राजा—शब्द भी, जिसका आरम्भ में अर्थ गोत्र या कबीले का मुखिया था, इसी शब्द से निकला है। Sibja—रक्त-सम्बन्धीगण—शब्द ध्यान देने के योग्य नही मालूम पड़ता, कम से कम प्राचीन नोर्स मे sifjar का अर्थ केवल रक्त-सम्बन्धी ही नही होता है, बल्कि विवाह से सम्बन्धित लोग भी इस शब्द के अन्तर्गत आते हैं। अर्थात् उसके अंतर्गत कम से कम **दो गोत्रों** के सदस्य आते है और इस प्रकार sif शब्द का गोत्र के लिये प्रयोग नही हो सकता था।

मैक्सिकोवासियो तथा यूनानियो की तरह जर्मनो मे भी, घुड़सवार दस्ते तथा पैदल सिपाहियों के शंकु सदृश दस्ते गोत्रो के अनुसार समूहो मे बंटकर व्यूह-रचना करते थे। जब टैसिटस परिवारो और सम्बन्धियों की

---

* जर्मन भाषा मे fahren।—सं०

** जर्मन भाषा मे sippe।—सं०

बात करते है[140] तो वह इस अस्पष्ट शब्द का प्रयोग इसलिये करते हैं कि रोम मे उस समय गोत्र एक जीवित संस्था नही रह गया था।

टैसिटस का वह अंश निर्णायक महत्त्व रखता है जिसमें उसने लिखा है: मामा अपने भांजे को अपना पुत्र समझता है; कुछ लोगों की तो यह तक राय है कि मामा और भांजे का रक्त-सम्बन्ध पिता और पुत्र के सम्बन्ध से अधिक पवित्र और घनिष्ठ है; और चुनांचे जब ओल की माग की जाती है तब जिस आदमी को इस तरह बंधन में बांधना उद्देश्य होता है, उसके सगे बेटे से उसके भांजे को अधिक ज्यादा अच्छा बन्धक समझा जाता है। यह प्रथा मातृ-सत्ता का, और इसलिये प्रारम्भिक गोत्र का एक जीवित अवशेष है; और उसका जर्मनो की खास विशेषता के रूप मे वर्णन किया गया है।* यदि ऐसे किसी गोत्र का कोई सदस्य अपने किसी वादे की जमानत के रूप मे अपने सगे बेटे को दे देता था और फिर वचन पूरा नही करता था तथा बेटे को उसका दंड भुगतना पड़ता था, तो यह केवल उसके पिता का मामला समझा जाता था। परन्तु यदि किसी आदमी के भांजे की कुरबानी हो जाती थी तो वह गोत्र के प्रति पवित्र नियमो की अवहेलना मानी जाती थी। निकटतम सकुल्य का कर्त्तव्य था कि वह लड़के

---

* मामा और भांजे के नाते की विशेष घनिष्टता, जो बहुत-सी जातियों मे मातृ-सत्ता के एक अवशेष के रूप मे पायी जाती है, यूनानियो में केवल वीर-काल की पुराण-कथाओं मे पायी जाती थी। डियोडोरस के खंड ४, अध्याय ३४ मे मीलियागेर अपनी मा आल्थिया के भाइयो, थेस्टियस के पुत्रों को मार डालता है। आल्थिया इन हत्याओं को इतना घृणित समझती है कि हत्या करनेवाले को, जो खुद उसका पुत्र है, शाप दे डालती है और प्रार्थना करती है कि उसकी मृत्यु हो जाये। लिखा है कि "देवताओं ने उसकी प्रार्थना सुन ली और मीलियागेर के जीवन का अन्त कर दिया"। इसी लेखक के अनुसार (खंड ४, अध्याय ४४) जब हेरक्लीज़ के नेतृत्व में अर्गोनाटस थ्रेसिया मे उतरे तो उन्होंने पाया कि फिनियस अपनी दूसरी पत्नी के कहने में आकर अपनी पहली परित्यक्त पत्नी, बोरियेड क्लियोपैट्रा से उत्पन्न दो पुत्रों के साथ लज्जाजनक रूप से दुर्व्यवहार कर रहा है। परन्तु अर्गोनाटसों मे भी कुछ बोरियेड वंश के लोग, यानी क्लियोपैट्रा के भाई थे और जो इस प्रकार दुर्व्यवहारग्रस्त लड़कों के मामा थे। मामाओं ने तुरन्त अपने भांजों की मदद की, उन्हें मुक्त कर दिया और उनको कैद में रखनेवाले पहरेदारों को मार डाला।[11] (एंगेल्स का नोट)

या युवक की रक्षा करता, परन्तु वही उसकी मृत्यु के लिए उत्तरदायी हुआ। उसे चाहिए था कि या तो जमानत मे लड़के को न देता, या अपना वचन पूरा करता। यदि जर्मनों में गोत्र-संघटन का कोई और चिह्न न भी मिलता, तो केवल यह अंश ही उसका पर्याप्त प्रमाण था।

इससे भी अधिक निर्णायक एक पुराने नोर्स गीत का वह अंश है जिसमे देवताओं के युग की गोधूलि-वेला और महाप्रलय «Völuspâ»[142] का वर्णन है। यह अंश अधिक निर्णायक है क्योंकि यह उपरोक्त अंश से ८०० साल बाद की चीज़ है। इस अंश में, जिसे 'दिव्य-दर्शिणी की भविष्यवाणी' कहा गया है, और जिसमे, जैसा कि वैंग और बुग्गे[143] ने सिद्ध कर दिया है, ईसाई धर्म के भी कुछ तत्त्व मिले हुए हैं, बताया गया है कि प्रलय के पहले सर्वव्यापी अनाचार और भ्रष्टाचार का एक युग आता है, जिसका वर्णन इन शब्दों मे किया गया है:

Broedhr munu berjask   ok at börum verdask
munu *systrungar*   sifjum spilla.

"भाई भाई से युद्ध करेगा, भाई भाई का सिर काटेगा और बहनों की सन्तान रक्त-सम्बन्ध के नाते को तोड़ डालेगी।"

Systrungar शब्द मां की बहन के बेटे के लिये प्रयुक्त हुआ है। कवि की दृष्टि मे मौसेरे भाइयों के रक्त-सम्बन्ध को तिलांजलि देना भ्रातृवध के अपराध की चरम सीमा है। यानी चरम सीमा systrungar शब्द पर पहुचने पर आती है, जो माता के पक्ष के रक्त-सम्बन्ध पर ज़ोर देता है। यदि इस शब्द की जगह पर syskina-börn—यानी भाई व बहन की सन्तान, या syskina-synir—यानी भाई व बहन के बेटे शब्द का प्रयोग किया जाता, तो पहली पंक्ति की तुलना मे दूसरी पंक्ति मे बात का ज़ोर बढ़ने के बजाय उल्टा घट जाता। इस प्रकार, वाइकिंगों के काल में भी, जबकि Völuspâ की रचना हुई थी, स्कैंडिनेविया में मातृ-सत्ता की स्मृति एकदम नष्ट नहीं हुई थी।

परन्तु टैसिटस के समय में, कम से कम जर्मनों में जिनसे वह अधिक परिचित था, मातृ-सत्ता की जगह पितृ-सत्ता क़ायम हो गयी थी; बच्चे अपने पिता के उत्तराधिकारी होते थे और उसके बच्चों के अभाव मे भाई

तथा चाचा और मामा उत्तराधिकारी होते थे। मामा को भी उत्तराधिकार देना उपरोक्त प्रथा से सम्बन्ध रखता है और सिद्ध करता है कि उस समय जर्मनो मे पितृ-सत्ता कितनी नयी चीज़ थी। मध्य युग के उत्तर काल मे भी हमें मातृ-सत्ता के चिह्न मिलते हैं। इस काल मे, विशेषकर भूदासों मे, किसी का पिता कौन है, इसका पूर्ण निश्चय न होता था; और इसलिये जब कोई सामन्त किसी भागे हुए भूदास को किसी शहर से वापस मंगवाना चाहता था तो उदाहरणार्थ आग्सबर्ग, बाजल और कैसरसलौटर्न मे उसके लिये ज़रूरी होता था कि वह भूदास की केवल माता के पक्ष के छः निकटतम रक्त-सम्बन्धियो के शपथ-पत्रो द्वारा यह प्रमाणित करे कि वह उसका भूदास था। (मारेर, 'नागरिक विधान', खंड १, पृष्ठ ३८१[144])

मातृ-सत्ता का एक और अवशेष था, जो उस समय तक लुप्त होने लगा था और जो रोमवासियों के दृष्टिकोण से समझ मे न आनेवाली बात थी। वह यह कि जर्मन लोग नारी जाति का बड़ा आदर करते थे। जर्मनों से यदि किसी क़रार को पूरा कराना होता था तो उसका सबसे अच्छा तरीक़ा यह समझा जाता था कि उनके कुलीन परिवारों की लड़कियों को ओल बना लिया जाये। युद्ध के समय जर्मनो की हिम्मत सबसे ज्यादा इस हौलनाक ख़याल से बढ़ती थी कि यदि उनकी हार हो गयी तो दुश्मन उनकी बहू-बेटियो को पकड़ ले जायेंगे और अपनी दासियां बना लेगे। जर्मन लोग नारी को पवित्र मानते थे और समझते थे कि वह अनागतदर्शिका होती है। चुनाचे वे सबसे महत्त्वपूर्ण मामलों मे स्त्रियों की सलाह पर कान देते थे। ब्रक्टेरिया क़बीले की लिप्पे नदी के किनारे रहनेवाली पुजारिन, वेलेडा, बटाविया के उस पूरे विद्रोह की प्रेरक शक्ति थी, जिसके द्वारा जर्मनों और बेल्जियनों ने सिविलिस के नेतृत्व मे गाल प्रदेश में रोमन शासन की नीव हिला दी थी।[145] मालूम पड़ता है कि घर के अन्दर नारियों का एकच्छत्र राज था। टेसिटस कहता है कि औरतो को, बूढो और बच्चों के साथ सारा काम करना पड़ता था, क्योंकि मर्द शिकार करने जाते थे, शराब पीते थे और आवारागर्दी करते थे। परन्तु वह यह नही बताता कि खेत कौन जोतता था और चूंकि उसने साफ़-साफ़ कहा है कि दासों को केवल कर देना पड़ता था और उनसे बेगार नहीं लिया जाता था, इसलिये मालूम पड़ता है कि खेती का जो थोड़ा-बहुत काम होता था, उसे मर्द लोगों की बहुसंख्या ही करती थी।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, विवाह का रूप युग्म-परिवार का था जो धीरे-धीरे एकनिष्ठ विवाह में बदलता जा रहा था। अभी एकनिष्ठता का सख्ती के साथ पालन नही किया जाता था क्योंकि विशिष्ट वर्ग के लोगों को कई पत्नियां रखने की इजाजत थी। केल्ट लोगो के विपरीत जर्मन लोग मोटे तौर पर इस बात पर सख्ती के साथ ज़ोर देते थे कि लड़कियों का कौमार्य नष्ट न हो। टेसिटस इस बात का बड़े उत्साह के साथ ज़िक्र करता है कि जर्मनों मे विवाह का बधन अटूट समझा जाता था। वह बताता है कि तलाक़ की इजाज़त केवल उसी सूरत में मिलती थी जब स्त्री ने पर-पुरुष के साथ व्यभिचार किया हो। परन्तु टेसिटस की रिपोर्ट में अनेक कमियां है और इसके अलावा यह बात भी है कि सदाचार का उदाहरण सामने रखकर वह दुराचारी रोमवासियों को नैतिकता का पाठ पढ़ाने की जरूरत से ज्यादा कोशिश करता है। इतनी बात तो हम निश्चय के साथ कह सकते है कि जंगलों मे रहते हुए जर्मन लोग भले ही सदाचार और नैतिकता के आदर्श रहे हों, पर बाहरी दुनिया का स्पर्श मात्र ही उन्हें यूरोप की दूसरी औसत जातियो के धरातल पर खीच लाने के लिये काफ़ी था। रोमन जीवन के तेज भंवर में पड़कर जर्मनो की कठोर नैतिकता के अन्तिम चिह्न, उनकी भाषा से भी अधिक शीघ्रता से मिट गये। इसके लिये तूर्स के ग्रेगरी द्वारा लिखित इतिहास को पढ़ना काफी है। कहने की आवश्यकता नही कि जर्मनी के आदिम जंगलों में वह ऊचे दरजे की ऐयाशी सम्भव नही थी, जो रोम में सम्भव थी। इसलिये इस मामले में भी जर्मन लोग रोमवासियों से काफ़ी बेहतर थे, लेकिन यह मानने के लिये जर्मनों को जितेन्द्रिय बना देना आवश्यक नही है, क्योंकि कोई भी पूरी की पूरी जाति ऐसी कभी नहीं हुई है।

गोत्र-व्यवस्था से हर आदमी का यह कर्त्तव्य पैदा हुआ कि वह अपने पिता तथा सम्बन्धियों के दुश्मनों को अपना दुश्मन माने और उनके दोस्तों को अपना दोस्त। उसी से "वेरगिल्ड" (wergild) की प्रथा पैदा हुई जिसमें *किसी हत्या या चोट के बदले में जुर्माना अदा कर देने से काम चल जाता* था और रक्त-प्रतिशोध की आवश्यकता नही पड़ती थी। एक पीढ़ी पहले "वेरगिल्ड" को एक ऐसी प्रथा समझा जाता था जो ख़ास तौर पर जर्मनों में पायी जाती थी; परन्तु अब यह साबित हो चुका है कि रक्त-प्रतिशोध का यह अधिक हल्का रूप सैकड़ों जातियों मे पाया जाता था और यह

गोत्र-व्यवस्था से उत्पन्न हुआ था। उदाहरण के लिये, अतिथि-सत्कार की प्रथा के समान यह प्रथा भी अमरीकी इण्डियनों में पायी जाती है। जर्मनों में अतिथि-सत्कार की प्रथा का जो वर्णन टैसिटस ने दिया है ('जर्मनिया', अध्याय २१), वह छोटी-मोटी बातों में भी लगभग वही है जो मौर्गन ने अपने इण्डियनों के बारे में दिया है।

एक समय इस बात पर बड़ी गरम और अविराम बहस छिड़ी हुई थी कि टैसिटस के समय तक जर्मनों ने खेती की जमीन का अन्तिम रूप से विभाजन कर डाला था या नहीं, और इस प्रश्न से सम्बन्धित टैसिटस के इतिहास के अंशों का क्या अर्थ लगाया जाये। पर अब यह बहस ख़त्म हो चुकी है। अब यह साबित हो गया है कि लगभग सभी जातियों में शुरू में पूरा गोत्र और बाद में सामुदायिक कुटुम्ब मिल-जुलकर जमीन जोतता-बोता था और सीजर ने अपने समय में भी सुएवी लोगों में यह प्रथा देखी थी।[116] बाद में अलग-अलग परिवारों के बीच जमीन बांट देने और समय-समय पर फिर से बंटवारा करने की प्रथा जारी हुई। जर्मनी के कुछ भागों में तो खेती की जमीन को एक निश्चित अवधि के बाद फिर से बांट देने की यह प्रथा आज तक पायी जाती है। यह सब साबित हो जाने के बाद अब उस बहस में और माथा खपाने की जरूरत नहीं रह गयी है। डेढ़ सौ साल के अरसे में यदि जर्मन लोग सामूहिक खेती से—जिसके बारे में सीजर ने साफ़ शब्दों में कहा है कि सुएवी लोगों में जमीन का बंटवारा या व्यक्तिगत खेती नहीं होती थी—आगे बढ़कर टैसिटस के काल में हर साल जमीन को फिर से बांटने और व्यक्तिगत ढंग से खेती करने की प्रथा पर पहुंच गये थे, तो मानना पड़ेगा कि *उन्होंने काफी प्रगति की।* इतने कम समय में और बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के इस अवस्था से आगे बढ़कर जमीन पर *पूरी तौर पर निजी स्वामित्व की अवस्था* में पहुंच जाना नितांत असम्भव था। अतएव मैं टैसिटस के शब्दों का केवल वही अर्थ लगाता हूं जो उसने लिखा है, और उसने यह लिखा है: *वे हर साल खेती की जमीन को बदल देते हैं* (या फिर से बांट लेते हैं) और ऐसा करने के दौरान काफी सामूहिक जमीन बच जाती है।[117] खेती और भूमि के अधिकरण की यह अवस्था जर्मनों की उस काल की गोत्र-व्यवस्था के बिलकुल अनुरूप थी।

उपरोक्त पैराग्राफ़ को मैंने बिना किसी परिवर्तन के उसी रूप में छोड़

दिया है जिस रूप में वह इस पुस्तक के पुराने संस्करणों में छपा है। परन्तु इस बीच सवाल का एक और पहलू सामने आ गया है। कोवालेव्स्की ने यह सिद्ध कर दिया है (देखिए इस पुस्तक का पृष्ठ ४४*) कि मातृसत्तात्मक सामुदायिक परिवार और आधुनिक पृथक् परिवार को जोड़नेवाली बीच की कड़ी के रूप में पितृसत्तात्मक सामुदायिक कुटुम्ब का अस्तित्व सभी जगहों में नही, तो बहुत अधिक जगहो मे रहा है। जब से यह सिद्ध हुआ है तब से बहस की बात यह नही रह गयी है कि जमीन सामूहिक सम्पत्ति थी अथवा निजी—जिस बात को लेकर मारेर और वेट्ज के बीच बहस चल रही थी—बल्कि अब बहस की बात यह है कि सामूहिक सम्पत्ति का उस समय क्या रूप था। इसमें तनिक भी संदेह नही हो सकता कि सीज़र के समय मे सुएवी लोगों में न केवल भूमि पर सामूहिक स्वामित्व हुआ करता था, बल्कि सब लोग मिलकर साझे की खेती करते थे। इन लोगो की आर्थिक इकाई क्या थी—गोत्र, सामुदायिक कुटुम्ब, या कोई बीच का रक्तसम्बद्ध सामुदायिक समूह, अथवा क्या भूमि की विभिन्न स्थानीय अवस्थाओं के फलस्वरूप ये तीनों ही रूप पाये जाते थे—इस सवाल पर अभी बहुत दिन तक बहस चलती रहेगी। कोवालेव्स्की का कहना है कि टैसिटस ने जिन परिस्थितियों का वर्णन किया है, वे परिस्थितियां मार्क या ग्राम-समुदाय के लक्षण नही हैं, बल्कि उस सामुदायिक कुटुम्ब के लक्षण है जो बहुत बाद में चलकर आबादी के बढ़ जाने के कारण ग्राम-समुदाय मे बदल गया।

इसलिये यह दावा किया जाता है कि रोमन काल में जिस इलाके में जर्मन रहते थे उसमें, और बाद मे जो इलाक़ा उन्होंने रोमन लोगों से छीना, उसमे भी जर्मन बस्तियां गांवों के रूप में नही, बल्कि बड़े-बड़े सामुदायिक कुटुम्बों के ही रूप में रही होंगी, जिनमें कई पीढ़ियां एकसाथ रहती थीं और जो अपने आकार के अनुसार जमीन के बड़े-बड़े खित्तो को जोतते थे और इर्दगिर्द की परती ज़मीन को अपने पड़ोसियों के साथ मिलकर सामूहिक भूमि—मार्क—के रूप मे इस्तेमाल करते थे। यदि यह बात सही मान ली जाये तो खेती की ज़मीन को हर साल बदलने के बारे में टैसिटस के इतिहास के अंश को कृषि विज्ञान के अर्थ में लेना पड़ेगा, यानी तब

---

* प्रस्तुत खण्ड, पृष्ठ ५४।—सं०

बस्तियों में जमकर रहते हुए पूरी एक सदी हो चुकी थी। इससे जीवन निर्वाह के साधनों के उत्पादन में जो उन्नति हुई, वह निर्विवाद है। ये लोग लकड़ी के लट्ठों के बने मकानों में रहते थे; उनके कपडे अभी तक आदिम जंगलियों के ढंग के थे। वे मोटे ऊनी लबादे और जानवरों की खालें पहनते थे। स्त्रियां और अभिजात लोग अंतर्वस्त्र के लिये लिनेन का प्रयोग करते थे। इन लोगों का भोजन था दूध, मांस, जंगली फल और जैसा कि प्लिनी ने बताया है, जई का दलिया[149] (जो आज भी आयरलैंड तथा स्काटलैंड में केल्ट लोगों का जातीय भोजन बना हुआ है)। उनका धन उनके मवेशी थे, पर उनकी नस्ल अच्छी नही थी–जानवर छोटे, बेढंगे और बिना सीगों के होते थे। उनके घोडे छोटे-छोटे टट्टुओ जैसे होते थे जो तेज नहीं दौड़ सकते थे। मुद्रा बहुत कम थी और उसका यदा-कदा ही इस्तेमाल होता था और वह भी बहुत थोड़ी मात्रा मे। केवल रोमन मुद्रा ही चलती थी। वे लोग सोने या चांदी की चीजें नही बनाते थे, न वे इन धातुओं को कोई महत्त्व ही देते थे। लोहे की बहुत कमी थी, और कम से कम राइन तथा डेन्यूब नदियों के किनारे रहनेवाले क़बीले, मालूम होता है, अपनी जरूरत का सारा लोहा बाहर से मंगाते थे और खुद खनन नही करते थे। रूनिक लिपि (जो यूनानी और लैटिन लिपि की नकल थी) एक गूढ संकेत-लिपि के रूप मे महज धार्मिक जादू-टोने के लिये इस्तेमाल होती थी। मनुष्य-बलि की प्रथा अभी तक जारी थी। सारांश यह कि उस समय जर्मनों ने बर्बर युग की मध्यम अवस्था से हाल ही में निकलकर उन्नत अवस्था मे प्रवेश किया था। जिन क़बीलों का रोमवासियों से सीधा सम्पर्क कायम हो गया था और इसलिये जो आसानी से रोम की औद्योगिक पैदावार का आयात कर सकते थे, वे इस कारण खुद धातु तथा कपडे के उद्योगों का विकास नहीं कर पाये; परन्तु इसमें तनिक भी संदेह नही हो सकता कि बाल्टिक सागर के तट पर रहनेवाले, उत्तर-पूर्व के कबीलों ने इन उद्योगों का विकास कर लिया था। श्लेज़विग के दलदल मे जिरहबख़्तर के जो टुकड़े मिले हैं–लोहे की लम्बी तलवार, बख्तर, चांदी का शिरस्त्राण, आदि जो चीजें दूसरी सदी के अंत के रोमन सिक्कों के साथ मिली हैं–और जातियों के प्रव्रजन से जर्मनों की बनायी हुई धातु की जो चीजें चारों ओर फैल गयी है, वे, और उनमें वे भी जो रोम की नकल हैं, एक अनोखे ढग की और बहुत बढ़िया कारीगरी

यह समझना होगा कि हर सामुदायिक कुटुम्ब हर साल नयी ज़मीन पर खेती करता था और पिछले साल जोती गयी ज़मीन को हल चलाकर ख़ाली छोड़ देता था, या उसे बिलकुल काम मे न लाता था। चूंकि आबादी बहुत कम थी, इसलिये परती ज़मीन की कोई कमी न होती थी और ज़मीन को लेकर होनेवाले झगड़ों की भी कोई आवश्यकता न थी। कई सदियां बीत जाने के बाद, जब कुटुम्ब के सदस्यों की संख्या इतनी अधिक हो गयी कि उत्पादन की तत्कालीन परिस्थितियों में मिलकर खेती करना असम्भव हो गया, तब कहीं जाकर ये सामुदायिक कुटुम्ब भंग हुए। पहले जो साझे के खेत और चरागाह थे, उन्हें प्रचलित तरीक़े से अलग-अलग कुटुम्बों के बीच बांट दिया गया जो उस समय तक बन गये थे। शुरू में यह बंटवारा एक निश्चित अवधि के बाद बार-बार होता रहता था, फिर यह एक बार सदा के लिये हो गया, लेकिन जंगल, चरागाह और जलागार सामूहिक सम्पत्ति बने रहे।

जहां तक रूस का सम्बन्ध है, विकास का यह क्रम ऐतिहासिक रूप से पूरी तरह प्रमाणित हो चुका मालूम पड़ता है। जहां तक जर्मनी का और अन्य सभी जार्मनिक देशों का सम्बन्ध है, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि टैसिटस के समय तक ग्राम-समुदाय का सिलसिला दिखाने के पुराने ख़याल के मुकाबले में यह मत बहुत-सी बातों में मूल सामग्री का अधिक अच्छा स्पष्टीकरण करता है और कठिनाइयों को ज़्यादा आसानी से हल करता है। सबसे पुरानी दस्तावेज़ों को – उदाहरण के लिये «Codex Laureshamensis»[115] को – मार्क ग्राम-समुदाय की तुलना में सामुदायिक कुटुम्ब के आधार पर ज़्यादा आसानी से समझा जा सकता है। दूसरी ओर इस मत से नयी कठिनाइयां भी पैदा हो जाती हैं और नयी समस्याएं उठ खड़ी होती हैं, जिन्हें हल करना ज़रूरी है। यह मामला और खोज होने पर ही तय हो सकेगा। परन्तु मैं इस बात से इनकार नहीं कर सकता कि बहुत सम्भव है कि जर्मनी, स्कैंडिनेविया और इंगलैंड में भी सामुदायिक कुटुम्ब बीच की मंज़िल भी रहा हो।

जहां सीज़र के समय में जर्मनों ने कुछ हद तक अभी हाल बस्ती बनाकर रहना शुरू कर दिया था, और कुछ हद तक वे रहने के लिये उपयुक्त स्थानों की तलाश कर रहे थे, वहां टैसिटस के समय तक उन्हें

बस्तियों में जमकर रहते हुए पूरी एक सदी हो चुकी थी। इससे जीवन निर्वाह के साधनों के उत्पादन में जो उन्नति हुई, वह निर्विवाद है। ये लोग लकड़ी के लट्ठो के बने मकानों मे रहते थे; उनके कपड़े अभी तक आदिम जंगलियों के ढंग के थे। वे मोटे ऊनी लबादे और जानवरों की खालें पहनते थे। स्त्रियां और अभिजात लोग अंतर्वस्त्र के लिये लिनेन का प्रयोग करते थे। इन लोगों का भोजन था दूध, मांस, जंगली फल और जैसा कि प्लिनी ने बताया है, जई का दलिया[149] (जो आज भी आयरलैंड तथा स्काटलैंड में केल्ट लोगों का जातीय भोजन बना हुआ है)। उनका धन उनके मवेशी थे, पर उनकी नस्ल अच्छी नही थी—जानवर छोटे, बेढंगे और बिना सींगों के होते थे। उनके घोड़े छोटे-छोटे टट्टुओ जैसे होते थे जो तेज़ नही दौड़ सकते थे। मुद्रा बहुत कम थी और उसका यदा-कदा ही इस्तेमाल होता था और वह भी बहुत थोडी मात्रा मे। केवल रोमन मुद्रा ही चलती थी। वे लोग सोने या चांदी की चीज़ें नही बनाते थे, न वे इन धातुओं को कोई महत्त्व ही देते थे। लोहे की बहुत कमी थी, और कम से कम राइन तथा डेन्यूब नदियों के किनारे रहनेवाले कबीले, मालूम होता है, अपनी जरूरत का सारा लोहा बाहर से मंगाते थे और खुद खनन नही करते थे। रूनिक लिपि (जो यूनानी और लैटिन लिपि की नकल थी) एक गूढ़ संकेत-लिपि के रूप मे महज़ धार्मिक जादू-टोने के लिये इस्तेमाल होती थी। मनुष्य-बलि की प्रथा अभी तक जारी थी। सारांश यह कि उस समय जर्मनों ने बर्बर युग की मध्यम अवस्था से हाल ही में निकलकर उन्नत अवस्था में प्रवेश किया था। जिन क़बीलो का रोमवासियों से सीधा सम्पर्क क़ायम हो गया था और इसलिये जो आसानी से रोम की औद्योगिक पैदावार का आयात कर सकते थे, वे इस कारण खुद धातु तथा कपड़े के उद्योगों का विकास नहीं कर पाये; परन्तु इसमे तनिक भी संदेह नही हो सकता कि बाल्टिक सागर के तट पर रहनेवाले, उत्तर-पूर्व के कबीलों ने इन उद्योगों का विकास कर लिया था। श्लेजविग के दलदल में ज़िरहबख़्तर के जो टुकड़े मिले हैं—लोहे की लम्बी तलवार, बख़्तर, *चांदी का शिरस्त्राण, आदि जो चीज़ें दूसरी सदी के अंत के रोमन* सिक्को के साथ मिली हैं—और जातियों के प्रव्रजन से जर्मनों की बनायी हुई धातु की जो चीज़ें चारो ओर फैल गयी हैं, वे, और उनमें वे भी जो रोम की नकल हैं, एक अनोखे ढंग की और बहुत बढ़िया कारीगरी

का नमूना है। जब उन लोगों ने सभ्य रोमन साम्राज्य में प्रवेश किया तो एक इंगलैंड को छोड़ अन्य सभी जगहों में उनके अपने उद्योग खतम हो गये। इन उद्योगों का जन्म और विकास बिलकुल एक ढंग से और एक गति से हुआ था। इसका एक अच्छा प्रमाण है कासे के बने हुए ब्रूच। वरगाडी में, रूमानिया में और अज़ोव सागर के तट पर मिले ब्रूचों के नमूनो को ब्रिटेन और स्वीडन में बने ब्रूचो से मिलाने से मालूम पड़ेगा जैसे सब एक ही कारखाने में बने है, और इस बात में ज़रा भी सदेह नही कि ये सब जर्मन कारीगरी के नमूनें है।

इन लोगों का संविधान भी बर्बर युग की उन्नत अवस्था के अनुरूप था। टेसिटस के अनुसार आम तौर से मुखियाओ (principes) की एक परिषद् होती थी जो कम महत्त्व के मामलो को तय कर देती थी और अधिक महत्त्व के प्रश्नो को जन-सभा के सामने फैसले के लिये पेश कर देती थी। बर्बर युग की निम्न अवस्था में, कम से कम उन लोगों मे जिनकी हमें जानकारी है, अमरीका के आदिवासियो मे, जन-सभा केवल गोत्र मे होती थी। उस समय तक क़बीले में, या कबीलों के महासंघ मे जन-सभा की प्रथा नही थी। इरोक्वा लोगों की तरह जर्मनो में भी परिषद् के मुखियाओं (principes) व युद्धकालीन मुखियाओ (duces) मे बहुत साफ अन्तर रखा जाता था। पहली कोटि के मुखिया क़बीले के सदस्यो से गाय-बैल, अनाज, आदि की भेंट लेने लगे थे और यह आशिक रूप से उनकी जीविका का आधार बन गया था। अमरीका की तरह ये मुखिया भी आम तौर पर एक ही परिवार से चुने जाते थे। पितृ-सत्ता कायम हो जाने के परिणामस्वरूप यूनान और रोम की भांति यहा भी जिन पदों का पहले चुनाव हुआ करता था, वे धीरे-धीरे पुश्तैनी बन गये। इस प्रकार हर एक गोत्र मे एक अभिजात परिवार का उदय हो गया। इस प्राचीन तथाकथित कबायली अभिजात वर्ग का अधिकतर भाग जातियों के प्रव्रजन के दौरान या उसके कुछ समय बाद ख़तम हो गया। सैनिक नेताओं का चुनाव केवल उनके गुणों के आधार पर होता था, उसमें उनके परिवार का कोई ख़याल नही किया जाता था। उनके पास बहुत कम अधिकार होते थे और दूसरो से अपनी आज्ञा का पालन कराने के लिये उन्हें पहले उनके सामने खुद उदाहरण पेश करना पड़ता था। जैसा टेसिटस ने साफ-साफ कहा है सेना के अंदर अनुशासन कायम रखने का असली अधिकार पुरोहितो के हाथ में होता था। वास्तविक

सत्ता जन-सभा के हाथ में थी। राजा अथवा क़बीले का मुखिया सभापतित्व करता था और जनता निर्णय करती थी। मर्मरध्वनि का अर्थ होता था "नहीं", ज़ोर से नारे लगाने और हथियार खड़काने का मतलब होता था "हां"। जन-सभा न्यायालय का भी काम करती थी। उसके सामने शिकायतें पेश की जाती थीं और उनका फ़ैसला किया जाता था; और मृत्यु-दंड तक दिया जाता था। मृत्यु-दंड केवल कायरता, विश्वासघात और अप्राकृतिक दुराचार के मामलों में दिया जाता था। गोत्र और अन्य उपशाखाएं भी सामूहिक रूप से और अपने मुखिया के सभापतित्व में मुकदमों की सुनवाई करती थीं। जर्मनों के शुरू के सभी न्यायालयों की भांति यहां भी सभापति को केवल जिरह करने और अदालत की कार्रवाई का संचालन करने का अधिकार होता था। जर्मनों में हर जगह और हमेशा यही प्रथा थी कि दंड का निर्णय पूरा समुदाय करता था।

सीज़र के समय से कबीलों के महासंघ बनने लगे। उनमें से कुछ में अभी से राजा भी होने लगे थे। यूनानियों और रोमवासियों की तरह इन लोगों में भी सर्वोच्च सेनानायक शीघ्र ही तानाशाह बनने की आकांक्षा करने लगे। कभी-कभी वे अपनी आकांक्षा पूरी करने में सचमुच सफल भी हो जाते थे। इस तरह जो लोग सत्ता का अपहरण करने में सफल हो जाते थे वे कदापि निरंकुश शासक नहीं होते थे। परन्तु फिर भी वे गोत्र-व्यवस्था के बंधनों को तोड़ने लगे। जिन दासों को मुक्त किया जाता था, उनकी आम तौर पर नीची हैसियत होती थी, क्योंकि वे किसी गोत्र के सदस्य नहीं हो सकते थे, परन्तु नये राजाओं के ये कृपापात्र अक्सर ऊंचे पद, धन और सम्मान प्राप्त करने में सफल हो जाते थे। रोमन साम्राज्य को जीतने के बाद सेनानायकों के साथ यही हुआ और वे बड़े-बड़े देशों के राजा बन गये। फ़्रैंक लोगों में राजा के दासों और मुक्त दासों ने शुरू में राज-दरबार में और बाद में पूरे राज्य में बड़ी भूमिका अदा की। नये अभिजात वर्ग का एक बड़ा भाग इन्हीं लोगों का वंशज था।

राजतंत्र के उदय में एक संस्था से विशेष रूप से सहायता मिली और वह थी निजी सैन्य दल। हम ऊपर देख चुके हैं कि किस प्रकार अमरीकी इंडियनों में गोत्रों के साथ-साथ स्वतंत्र रूप से युद्ध चलाने के लिये निजी संस्थायें बनायी जाती थीं। जर्मनों में इन निजी संस्थाओं ने स्थायी संगठनों का रूप धारण कर लिया। जो सेनानायक

ख्याति प्राप्त कर लेता था, उसके चारों ओर लूट के माल के इच्छुक नौजवान योद्धाओं का एक दल जमा हो जाता था। यह दल सेनानायक के प्रति व्यक्तिगत रूप से वफादार होता था और सेनानायक अपने दल के प्रति। वह उन्हें खिलाता-पिलाता था, समय-समय पर उन्हें तोहफे देता था, और दरजावार तरतीब से उनका संगठन करता था: एक अंगरक्षक दल तथा छोटे-मोटे अभियानों में तत्काल भाग लेने के लिये सन्नद्ध एक टुकड़ी और बड़ी लड़ाइयों के लिये प्रशिक्षित अफसरों का एक जत्था होता था। ये निजी सैन्य दल यद्यपि काफ़ी कमजोर होते होंगे और थे भी, जैसा कि बाद में, उदाहरण के लिये, इटली में ओडोआसर के तहत साबित हुआ, परन्तु उन्होंने प्राचीन जन-स्वातन्त्र्यों के ह्रास के लिये घुन का काम किया, जैसा कि जातियों के प्रव्रजन के दौरान तथा उसके बाद भी देखा गया। कारण कि एक तो उन्होंने शाही ताकत के पनपने के लिये अनुकूल भूमि प्रस्तुत की; दूसरे, जैसा कि टैसिटस ने कहा है, इन सेनाओं को बनाये रखने के लिये जरूरी था कि उन्हें सदा लड़ाइयों तथा लूट-मार की मुहिमों में लगाये रखा जाये। लूट-पाट उनका मुख्य उद्देश्य बन गया। यदि उनके सरदार को अपने पास-पड़ोस में कोई सम्भावना नही दिखायी देती थी, तो वह अपनी सेना को लेकर दूसरे देशों में चला जाता था, जहां युद्ध चलता होता तथा लूट का माल हासिल करने की सम्भावना दिखायी देती थी। जो जर्मन सहायक सेनायें रोमन झंडे के नीचे स्वयं जर्मनों से भी एक बड़ी संख्या में लडी थीं, वे आंशिक रूप में ऐसे ही दलों से बनी थीं। यही वह पहला बीज था जिससे बाद में चलकर Landsknecht* व्यवस्था ने जन्म लिया जो जर्मनों के लिये कलंक और अभिशाप बन गयी। रोमन साम्राज्य को जीतने के बाद दासों तथा रोमन दरबारी खिदमतगारों के साथ राजाओं के ये निजी सैन्य दल भी बाद के काल में अभिजात वर्ग के दूसरे संघटक भाग बन गये।

इस प्रकार, जातियों के रूप में गठित जर्मन कबीलों का संघटन उसी प्रकार का था जैसा वीर-काल के यूनानियों और तथाकथित राजाओं के काल के रोमन लोगों में विकसित हुआ था: जन-सभाएं, गोत्रों के मुखि-

---

* भाड़े के सिपाही। —सं०

याम्रों की परिषदें श्रौर सेनानायक, जिन्होंने अभी से असली राजा बनने के सपने देखना शुरू कर दिया था। गोत्र-व्यवस्था इससे अधिक विकसित ढंग का संघटन नहीं पैदा कर सकती थी। वह बर्बर युग की उन्नत अवस्था का आदर्श संघटन था। जैसे ही समाज उन सीमाओं से बाहर निकल गया, जिनके लिये यह संघटन पर्याप्त था, वैसे ही गोत्र-व्यवस्था का अंत हो गया। गोत्र-व्यवस्था टूट गयी और उसका स्थान राज्य ने ले लिया।

८

जर्मनों मे राज्य का गठन

टैसिटस का कहना है कि जर्मन लोगों की संख्या बहुत बड़ी थी। अलग-अलग जर्मन जातियों की क्या तादाद थी, इसका एक मोटा खाका सीज़र ने दिया है। उसका कहना है कि राइन नदी के बायें तट पर प्रकट होनेवाले उसीपैटो और टेंक्टेरो की संख्या, औरतो और बच्चों को शामिल करके, १,८०,००० थी। इस प्रकार, मोटे तौर पर, हर एक जाति मे क़रीब-करीब एक लाख लोग थे।* ज़ाहिर है कि सबसे अधिक उन्नति के काल में भी इरोक्वा लोगों की संख्या इससे बहुत कम थी। जिस समय ग्रेट लेक्स से लेकर ओहिम्रो और पाटोमैक नदियों तक का पूरा देश उनसे आतंकित था, उस समय इरोक्वा लोगों की सख्या २०,००० भी नहीं थी। यदि हम राइन प्रदेश की उन जातियो को, जिनके बारे मे रिपोर्टों की बदौलत हमे ज्यादा जानकारी है, नक़्शे पर अलग-अलग अंकित करे तो हम पायेंगे कि उनमे से हर जाति औसतन प्रथा के एक प्रशासकीय ज़िले के बराबर के इलाके में, यानी १०,००० वर्ग किलोमीटर या १८२ भौगोलिक वर्ग मील मे फैली हुई थी। लेकिन रोमवासियो का Germania Magna**

---

* गाल प्रदेश के केल्ट लोगों के बारे मे डियोडोरस ने जो कुछ कहा है, उससे इस संख्या की पुष्टि होती है। उसने लिखा है: "गाल में छोटी-बड़ी बहुतेरी जन-जातियां रहती हैं। सबसे बड़ी जन-जाति में २,००,००० लोग हैं और सबसे छोटी में ५०,०००।" (Diodorus Siculus, V, 25.) इससे सवा लाख का औसत निकलता है। पर गाल की कई जन-जातियां चूंकि अधिक विकास कर चुकी थीं, इसलिये निश्चय ही जर्मनों से उनकी संख्या अधिक रही होगी। (एंगेल्स का नोट।)

** महान जर्मनी। —सं०

जो विस्चुला नदी तक जाता था, करीब ५,००,००० वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ था। यदि एक जाति के लिये औसतन एक लाख की आबादी का हिसाब रखा जाये तो Germania Magna की कुल आबादी ५० लाख हो जाती है—जो बर्बर युग की जातियों के एक समूह के लिये जरा बड़ी संख्या है, गोकि १० आदमी प्रति वर्ग किलोमीटर, या ५५० आदमी प्रति भौगोलिक वर्ग मील की आबादी आजकल की हालत के मुकाबले में बहुत कम है। परन्तु इस संख्या में उस काल में मौजूद तमाम जर्मन शामिल नहीं हैं। हम जानते हैं कि गोथ नस्ल की जर्मन जातियां, अर्थात् बास्तर्नी, पुकिनियन वगैरह लोग कार्पेथियन पर्वत के किनारे-किनारे डेन्यूब नदी के मुहाने तक रहते थे। संख्या में ये जातियां इतनी बड़ी थीं कि प्लिनी ने इन्हें जर्मनों का पांचवां मुख्य कबीला कहा था[180]। १८० ई० पू० में ही ये लोग मेसीडोनिया के राजा पर्सियस के भाड़े के सिपाही बने हुए थे और ऑगस्टस के राज के शुरू के वर्षों में वे एड्रियानोपल के पास तक बढ़ आये थे। यदि यह मानकर चला जाये कि इन लोगों की संख्या केवल दस लाख थी तो ईसवी सन् के आरम्भ में जर्मनों की कुल संख्या शायद साठ लाख से कम नहीं थी।

दक्षिण-पूर्व की ओर बढ़ गया और वह इस हमलावर मोर्चे का बायां भाग बन गया। उत्तरी जर्मन लोग (हर्मीनोन) ऊपरी डेन्यूब के तट पर मोर्चे के केन्द्र में बढ़ आये और इस्तीवोनियन लोग, जो इस समय तक फ़्रैंक कहलाने लगे थे, राइन नदी के किनारे-किनारे मोर्चे के दायें भाग में बढ़ आये। ब्रिटेन को जीतने का काम इंगीवोनियन लोगों के ज़िम्मे पड़ा। पांचवी सदी के अंत में शक्तिहीन, रक्तहीन और नि.सहाय रोमन साम्राज्य के द्वार जर्मन आक्रमणकारियों के लिये बिलकुल खुले हुए थे।

पिछले अध्यायों में हमने प्राचीन यूनानी और रोमन सभ्यता के शैशव काल को देखा। अब हम उसके मृत्यु काल को देख रहे हैं। कई सदियों से भूमध्य सागर के सभी देशों पर रोम की विश्व शक्ति का रन्दा चल रहा था। उन जगहो को छोड़कर जहां यूनानी भाषा ने उसका मुकाबला किया, तमाम जातीय भाषाएं एक विकृत ढंग की लैटिन के सामने पराजित हो गयी थी। जाति-भेद नाम की कोई चीज़ नही रह गयी थी। गाल, इबेरियन, लाइगूरियन, नौरिक जातियां नही रह गयी थी। अब सब रोमन हो गये थे। रोमन शासन-व्यवस्था और रोमन कानून ने पुराने रक्तसम्बद्ध समूहो को हर जगह नष्ट कर दिया था और इस प्रकार स्थानीय तथा जातीय आत्म-अभिव्यक्ति के अन्तिम अवशेषो को ध्वस्त कर दिया था। नया अधकचरा रोमवाद इस क्षति को पूरा नही कर सकता था। वह किसी जातीयता को नही, बल्कि केवल जातीयता के अभाव को प्रगट करता था। नये राष्ट्रो के निर्माण के तत्त्व हर जगह मौजूद थे। विभिन्न प्रान्तो की लैटिन बोलियां एक दूसरे से अधिकाधिक भिन्न होती जा रही थी। जिन प्राकृतिक सीमाओं ने एक समय इटली, गाल, स्पेन, अफ़्रीका को स्वतंत्र प्रदेश बना दिया था, वे अब भी मौजूद थी और उनका प्रभाव अभी भी पड़ रहा था। फिर भी कोई ऐसी शक्ति नही दिखायी पड़ती थी जो इन तत्त्वो को मिलाकर नये राष्ट्र गठित करने मे समर्थ होती। सृजन शक्ति को तो जाने दीजिये, विकास की क्षमता या प्रतिरोध की शक्ति का भी कोई चिह्न कही नही दिखायी देता था। उस विस्तृत भूखंड मे रहनेवाले विशाल जन-समुदाय को केवल एक चीज़ ने—रोमन राज्य ने—बाध रखा था और वही समय बीतते-बीतते इस जन-समुदाय का सबसे बड़ा शत्रु और उत्पीड़क बन गया था। प्रान्तों ने रोम को बरबाद कर दिया था, रोम खुद और सभी नगरो के समान एक प्रान्तीय नगर बन गया था। उसे

अब भी विशेष रुतबा हासिल था, पर अब वह शासन नही करता था, अब वह विश्व साम्राज्य का केन्द्र नही रह गया था, यहां तक कि अब वह सम्राटो और स्थानापन्न उप-सम्राटो का निवास-स्थान भी नही था। वे लोग अब कुस्तुनतुनिया, ट्रियेर और मिलान में रहने लगे थे। रोमन राज्य एक विराट्, जटिल मशीन बन गया था, जिसका निर्माण केवल प्रजा का शोषण करने के उद्देश्य को लेकर किया गया था। तरह-तरह के करो, राज्य के लिये सेवाओ और उगाहियों से आम लोग ग़रीबी के दलदल मे अधिकाधिक धंसते जाते थे। प्रोक्यूरेटर, कर वसूल करनेवाले कर्मचारी और सिपाही जनता के साथ जिस तरह की ज़ोर-जबरदस्ती करते थे, उससे यह दबाव असह्य हो गया था। जिस रोमन राज्य ने सारे संसार को अपने अधीन बना डाला था, उसने यह हालत पैदा कर दी: अपने अस्तित्व का औचित्य सिद्ध करने के लिये उसने साम्राज्य के अंदर व्यवस्था और बर्बर विदेशियो से हिफ़ाजत को अपना आधार बनाया। परन्तु उसकी व्यवस्था बुरी से बुरी अव्यवस्था से भी अधिक जानलेवा थी और जिन बर्बर लोगों से वह अपने नागरिको को बचाने का ढोंग किया करता था, उन्ही का उसकी प्रजा ने तारनहार के रूप में स्वागत किया।

सामाजिक अवस्थाएं भी कम निराशाजनक नही थी। गणराज्य के अन्तिम वर्षो में विजित प्रान्तों का क्रूर शोषण रोम के शासन का आधार बन गया था। सम्राटों ने इस शोषण का अंत नही किया, उल्टे उसे व्यवस्थित रूप दे दिया। जैसे-जैसे साम्राज्य पतन के गढ़े में गिरता गया, वैसे-वैसे कर और बेगार बढ़ती गयी और उतनी ही अधिक बेशर्मी से अफ़सर लोग जनता को लूटने और उस पर धौंस जमाने लगे। पूरी जातियों पर राज करने मे व्यस्त रोमवासियों का धंधा व्यापार और उद्योग कभी नही रहा था। केवल सूदख़ोरी मे वे सबसे बढ़-चढ़कर थे – अपने पहले के लोगो से और बाद के लोगों से भी। जो थोड़ा-बहुत व्यापार होता था और किसी तरह चल रहा था उसे अफ़सरों की जबरिया कर-वसूली ने तबाह कर डाला। और जितना बचा था, वह भी साम्राज्य पूर्वी, यानी यूनानी भाग में होता था परन्तु वह इस पुस्तक के क्षेत्र के बाहर है। सर्वव्यापी ग़रीबी और तबाही, व्यापार, दस्तकारी और कला की अवनति, आबादी का ह्रास, नगरों की पतनोन्मुखता, खेती का गिरकर पहले से भी नीची अवस्था में पहुंच जाना – रोम के विश्व प्रभुत्व का अंत में यही परिणाम हुआ था।

खेती प्राचीन काल में सदा उत्पादन की निर्णायक शाखा रही है जो अब और भी निर्णायक हो गयी थी। गणराज्य के अंत के समय से ही जो बड़ी-बड़ी जागीरें (latifundia) इटली की लगभग पूरी भूमि पर फैली हुई थी, उनका दो तरह से इस्तेमाल किया जाता था: या तो चरागाहों के रूप में, जिन पर मनुष्यों का स्थान भेड़ों और गाय-बैलों ने ले लिया था और जिनकी देखभाल के लिये चंद दास काफी होते थे; या ऐसी जागीरों के रूप में जिन पर बड़ी संख्या में दासों की सहायता से बड़े पैमाने पर बागबानी की जाती थी। इन बगीचों की उपज कुछ हद तक तो उनके *मालिकों के ऐश-आराम के काम में आती थी और कुछ हद तक शहरी बाज़ारों* में बेच दी जाती थी। बड़े-बड़े चरागाहों को क़ायम रखा गया था और उनका कुछ विस्तार भी किया गया था। परन्तु बड़ी-बड़ी जागीरें और उनके बगीचे उनके मालिकों के गरीब हो जाने तथा शहरों के ह्रास के परिणामस्वरूप बरबाद हो गये। दास श्रम पर खड़ी बड़ी-बड़ी जागीरों की व्यवस्था अब लाभप्रद नहीं रह गयी थी, परन्तु उस समय बड़े पैमाने की खेती केवल इसी ढंग से हो सकती थी। इसलिये फिर से केवल छोटे पैमाने की खेती ही लाभप्रद रह गयी। एक के बाद एक जागीरें बंटने लगी और या तो छोटे-छोटे टुकड़ों में पुश्तैनी काश्तकारों को, जो एक निश्चित लगान देते थे, दे दी गयीं, या partiarii* को दे दी गयीं, जिन्हें काश्तकार न कहकर फ़ार्म मैनेजर कहना ज्यादा सही होगा। इन लोगों को अपनी मेहनत के बदले में साल भर की उपज का केवल छठा या नवां हिस्सा ही मिलता था। मगर इनसे भी ज्यादा बड़ी संख्या में ये छोटे-छोटे खेत coloni को दे दिये गये जो मालिक को हर साल एक निश्चित रकम देते थे। वे ज़मीन से बंधे हुए थे और खेतों के साथ बेचे जा सकते थे। लोग दास नहीं थे, पर साथ ही स्वतंत्र नागरिक भी नहीं थे। उन्हें स्वतंत्र नागरिकों के साथ विवाह की इजाज़त नहीं थी और यदि वे आपस में विवाह करते थे तो वह भी क़ानूनी नहीं माना जाता था, बल्कि जैसा कि दासों में होता था, उस विवाह की हैसियत रखैलपन (contubernium) की होती थी। ये लोग मध्य युग के भूदासों के पूर्ववर्ती थे।

प्राचीन काल की दास-प्रथा पुरानी पड़ गयी। न तो उससे देहात में

---

* हिस्सेदार।– सं०

बड़े पैमाने की खेती में, और न शहरों के कारखानो मे उपयुक्त आय होती थी। उसकी पैदावार के लिये बाजार का लोप हो गया था। साम्राज्य के समृद्धि काल के विशाल उत्पादन की जगह पर अब केवल छोटे पैमाने की खेती और छोटी-मोटी दस्तकारियां रह गयी थी, और उनमे दासो की बड़ी संख्या के लिए कोई स्थान न था। अब समाज मे केवल धनी लोगो के घरेलू कामों को करनेवाले तथा उनकी ऐश-आराम की जरूरतों को पूरा करनेवाले दासों के लिये ही स्थान रह गया था। परन्तु मरणोन्मुख दास-प्रथा अभी भी इतनी शक्तिशाली जरूर थी कि हर प्रकार का उत्पादक काम दास-श्रम मालूम पड़े जिसे करना स्वतंत्र रोमन अपनी शान के खिलाफ समझे—और अब हर कोई स्वतंत्र रोमन नागरिक था। इसलिये एक ओर तो फ़ालतू दासो की सख्या में वृद्धि हो गयी थी और वे भार बन जाने के कारण मुक्त कर दिये जाते थे, और दूसरी ओर coloni तथा भिखारी स्वतन्त्रो की संख्या मे वृद्धि हो गयी थी (अमरीका के भूतपूर्व दास-प्रथावाले राज्यो के ग़रीब गोरो की तरह)। प्राचीन काल की दास-प्रथा यदि इस प्रकार धीरे-धीरे मर गयी तो इसका ईसाई धर्म को कोई दोष नहीं दिया जा सकता। ईसाई धर्म ने रोमन साम्राज्य मे कई सौ वर्ष तक दास-प्रथा से लाभ उठाया था। बाद मे जब स्वयं ईसाइयो ने भी दासों का व्यापार करना शुरू किया, जैसा कि उत्तर में जर्मन लोग करते थे, या भूमध्य सागर मे वेनिस के लोग करते थे, या जैसा कि और भी बाद में नीग्रो लोगो का व्यापार होता था,* तो ईसाई धर्म ने उसे रोकने की कभी कोशिश नही की। दास-प्रथा लाभप्रद नहीं रह गयी थी, इसलिये वह मर गयी। लेकिन मरते-मरते भी वह जहरीला डंक छोड गयी, यह ठप्पा लगा गयी कि यदि स्वतन्त्र नागरिक उत्पादक काम करेंगे, तो वह नीच माना जायेगा। यह थी वह बंद गली जिसमें रोमन संसार फंस गया था: दास-प्रथा का अस्तित्व आर्थिक दृष्टि से असम्भव हो गया था, परन्तु स्वतन्त्र लोगों के श्रम पर नैतिक रोक लगी हुई थी। पहली अब सामाजिक उत्पादन का बुनियादी रूप नही बनी रह

---

* क्रेमोना के बिशप ल्युतप्रांद ने बताया है कि दसवी सदी में वेरदेँ मे, अर्थात् पवित्र जर्मन साम्राज्य में, प्रधान उद्योग हिजड़े बनाना था, जो मूर लोगो के हरमों के वास्ते बड़े मुनाफे पर स्पेन भेजे जाते थे।[151] **(एंगेल्स का नोट)**

सकती थी, दूसरी बुनियादी रूप अभी बन नही सकती थी। इस स्थिति मे पूर्ण क्रान्ति ही कुछ कर सकती थी।

प्रांतों की हालत इससे बेहतर नही थी। हमारे पास जो रिपोर्टें हैं, उनमे अधिकांश गाल प्रदेश के बारे में है। यहां coloni के साथ-साथ स्वतंत्र छोटे किसान अभी भी मौजूद थे। अफसरों, जजों और सूदखोरो के अत्याचारों से बचने के लिये ये किसान अक्सर शक्तिमान व्यक्तियों के संरक्षण मे, उनकी सरपरस्ती मे रहते थे; अलग-अलग व्यक्ति ही नही, बल्कि पूरे के पूरे समुदाय ऐसा करते थे। यहा तक कि चौथी सदी के सम्राट अक्सर फ़रमान जारी कर इस प्रथा पर प्रतिबंध लगाते थे। पर ऐसे सरक्षण से उन लोगो को क्या मदद मिलती थी जो इसे प्राप्त करने की कोशिश करते थे? संरक्षक इस शर्त पर उन्हे सरक्षण प्रदान करता था कि वे अपनी जमीनें उसके नाम कर दें, बदले में वह उन्हें जीवन भर इन जमीनो को इस्तेमाल करने का हक़ दे देता था। पवित्र चर्च ने इस चाल को याद रखा और नवीं तथा दसवी सदी में इसका खूब इस्तेमाल किया, जिससे भगवान का गौरव भी बढ़ा और गिरजाघर की ज़मीन-जायदाद मे भी बड़ा इज़ाफा हुआ। हा, उस समय, सन् ४७५ के करीब, हम देखते हैं कि मार्सेई का बिशप सालवियेनस इस डकैती की ज़ोरदार निन्दा कर रहा है। वह हमें बताता है कि रोम के अधिकारियो और बड़े ज़मीदारो का अत्याचार इतना असह्य हो उठा था कि बहुत से "रोमन" उन इलाको मे भाग गये थे जिन पर बर्बर लोगों का कब्ज़ा हो चुका था, और ऐसे जिलों मे जो रोमन नागरिक बस गये थे, उन्हे सबसे ज्यादा इस बात का भय था कि उनका इलाक़ा कहीं फिर से रोमन शासन के अधीन न हो जाये।[152] उस ज़माने मे अक्सर गरीब मां-बाप अपने बच्चों को दासो की तरह बेच डालते थे— यह बात इस प्रथा को रोकने के लिये बने एक कानन से सिद्ध होती है।

रोमनो को खुद उनके राज्य से मुक्त करने के एवज में जर्मन बर्बरो ने पूरी ज़मीन का दो-तिहाई भाग खुद हड़प लिया और उसे आपस मे बांट लिया। बंटवारा गोत्र-व्यवस्था के अनुसार किया गया। विजेता चूंकि संख्या में कम थे, इसलिये बड़े-बड़े भूखंड बिना बंटे रह गये। इनमें से कुछ तो पूरी जाति की सम्पत्ति रहे और कुछ अलग-अलग कबीलों या गोत्रों की। हर गोत्र में अलग-अलग कुटुम्बों के बीच खेतों व चरागाहों का बंटवारा बराबर-बराबर हिस्से बनाकर परची डालकर किया गया। उस

काल में यह बंटवारा बार-बार हुआ करता था या नही, इस बात को हम नही जानते। पर इतना निश्चित है कि रोमन प्रातो मे जल्द ही यह प्रथा बंद हो गयी और हर कुटुम्ब का हिस्सा उसकी निजी सम्पत्ति, "एलोडियम", बन गयी। जगल और चरागाहो को नही बांटा गया, वे सब के इस्तेमाल के लिए थे। उनके इस्तेमाल और बटी हुई जमीन के जोतने का ढंग प्राचीन रीति के अनुसार तथा पूरे समदाय की इच्छा से तय होता था। गोत्र को अपने गाव मे बसे जितने ज्यादा दिन बीतते गये और समय बीतने के साथ-साथ जर्मन और रोमन लोग आपस में जितने ज्यादा घुलते-मिलते गये, उतना ही रक्त-सम्बन्ध गौण और प्रादेशिक सम्बन्ध प्रधान होता गया। अततः गोत्र मार्क-समुदाय मे तिरोहित हो गया, पर उसमें सदस्यों के मूल रक्त-सम्बन्ध के पर्याप्त चिह्न दिखायी देते थे। इस प्रकार, कम से कम उन देशों मे, जहा मार्क-समुदायों को कायम रखा गया था—फ्रांस के उत्तर मे और इंगलैंड, जर्मनी तथा स्कैंडिनेविया में—गोत्र-व्यवस्था धीरे-धीरे प्रादेशिक व्यवस्था मे बदल गयी और इस प्रकार वह इस योग्य बन गयी कि राज्य-व्यवस्था के साथ फिट बैठ सके। फिर भी उसका वह स्वाभाविक जनवादी स्वरूप कायम रहा जो पूरी गोत्र-व्यवस्था की मुख्य विशेषता है, और कालान्तर मे जब वह लाचार होकर पतनोन्मुख हुआ तब भी उसमें गोत्र-संघटन का कुछ अंश जरूर बाकी रहा, जो दलित जनता के हाथ मे एक अस्त्र बन गया और जिसका वह आधुनिक काल मे भी प्रयोग करती है।

गोत्र में रक्त-सम्बन्ध के महत्त्व के तेजी से खतम होने का कारण यह था कि कबीले मे और पूरी जाति मे भी विजय के फलस्वरूप गोत्र-निकायों का ह्रास हो गया। हम जानते हैं कि पराधीन जनो पर शासन करना गोत्र-व्यवस्था से मेल नहीं खाता। यहां यह बात बहुत बड़े पैमाने पर दिखायी पडती है। जर्मन लोग अब रोमन प्रातो के मालिक थे। उनके लिये अपनी विजय को संगठित रूप देना आवश्यक था। परन्तु रोमवासियो के विशाल जन-समुदाय को न तो गोत्र-संघटन के निकायो मे सम्मिलित किया जा सकता था और न इन निकायों की सहायता से उन पर शासन किया जा सकता था। रोमवासियों की स्थानीय प्रशासन-संस्थाएं शुरू मे जर्मन विजय के बाद भी काम करती रही थी, पर यह आवश्यक था कि उनके ऊपर कोई ऐसा संगठन हो जो रोमन राज्य का स्थान ले सके और यह दूसरा

राज्य ही हो सकता था। इसलिये गोत्र-संघटन के निकायों को राज्य के निकायों में बदलना पड़ा और परिस्थितियों के दबाव के कारण यह काम बहुत जल्दी में करना पड़ा। परन्तु विजेता जाति का पहला प्रतिनिधि सेनानायक था। जीते हुए प्रदेश की घरेलू और बाहरी सुरक्षा का तकाज़ा था कि उसके अधिकारों को बढ़ाया जाये। सैनिक नेतृत्व को बादशाही में बदल देने का समय आ गया था। यह कर भी दिया गया।

फ्रैंक लोगों के राज्य को लीजिये। यहां न केवल रोमन राज्य के विशाल इलाके विजयी सालियन जाति को एकच्छत्र अधिकार में मिल गये थे, बल्कि ऐसे भी सभी बड़े भूखंड, विशेषकर सभी बड़े जंगल, उनके हाथ में आ गये थे, जो बड़े या छोटे gau (ज़िला) अथवा मार्क-समुदायों के बीच नहीं बांटे गये थे। फ्रैंक लोगों के राजा ने, जो साधारण सेनानायक से वास्तविक राजा में परिवर्तित हो गया था, पहला काम यह किया कि जनता की इस सम्पत्ति को शाही सम्पत्ति बना डाला, इस जमीन को जनता से चुरा लिया और अपने निजी सैन्य दल को इनाम या भेंट के तौर पर दे दिया। उसके निजी सैन्य दल की, जिसमें पहले केवल निजी सैन्य अनुचर तथा सेना के बाकी तमाम उपनायक हुआ करते थे, बाद में संख्या बहुत बढ़ गयी। उनमें न केवल रोमन लोग, यानी गाल प्रदेश के वे निवासी शामिल हो गये जो रोमन बन गये थे, और जो लिखने की कला जानने, शिक्षित होने और देश के कानूनों के साथ-साथ बोल-चाल की रोमानी भाषा तथा साहित्यिक लैटिन की भी जानकारी रखने के कारण राजा के लिये बहुत जल्द ही नितांत आवश्यक बन गये थे; बल्कि उनमें दास, भूदास तथा मुक्त दास भी शामिल हो गये। ये सब राजा के दरबारी थे, जिनमें से वह अपने कृपापात्रों को चुनता था। इन तमाम लोगों को सार्वजनिक भूमि के खंड शुरू में इनाम के रूप में, और बाद को अग्रहार ("बेनीफ़िस") के रूप में दे दिये गये जो आरम्भ में अधिकतर प्रायः राजा के जीवन-काल के लिये मिलते थे। इस प्रकार जनता की कीमत पर एक नये अभिजात वर्ग का आधार तैयार हुआ।[153]

परन्तु बात यहीं पर ख़तम नहीं हुई। उस लम्बे-चौड़े दूर-दूर तक फैले साम्राज्य पर पुराने गोत्र-विधान द्वारा शासन नहीं किया जा सकता था। मंत्रियों की परिषद्, यदि वह बहुत दिन पहले ही लुप्तप्रयोग नहीं हो गयी हो, तो भी, अब नहीं बैठ सकती थी और शीघ्र ही राजा के स्थायी

परिजनों ने उसका स्थान ले लिया। पुरानी जन-सभा को दिखावे के लिये कायम रखा गया, पर वह अधिकाधिक महज सेना के उपनायको तथा नये पनप रहे अभिजात वर्ग के लोगो की सभा मे बदलती गयी। जिस तरह रोम के किसान गणराज्य के अन्तिम काल मे बरबाद हो गये थे, ठीक उसी तरह लगातार गृह-युद्धों और विजयाभियानो के कारण -- कार्ल महान् के काल मे ख़ास तौर पर विजयाभियानो के कारण -- अपनी भूमि के मालिक स्वतंत्र किसान, यानी फ़्रैंक जाति की अधिकाश जनता चुस और छीज गयी थी और घोर दरिद्रता की स्थिति मे पहुंच गयी थी। शुरू मे, पूरी सेना केवल इन किसानो की हुआ करती थी; फ़्रैंक प्रदेशो की विजय के बाद भी सेना का केंद्र भाग इन किसानो का ही हुआ करता था, परन्तु नवीं शताब्दी के आरम्भ तक ये किसान इतने ज्यादा गरीब हो गये थे कि पाच में से मुश्किल से एक आदमी जंग का सामान मुहैया कर पाता था। पहले स्वतंत्र किसानों की सेना थी जो सीधे राजा के आह्वान पर इकट्ठा हो जाया करती थी। अब उसकी जगह नवोदित धनिकों के खिदमतगारो की सेना ने ले ली। इन ख़िदमतगारो में वे भूदास भी थे जो उन किसानों के वंशज थे जो पहले राजा के सिवा और किसी को अपना स्वामी नही मानते थे और उसके भी कुछ पहले किसी को, राजा तक को भी, अपना स्वामी नही मानते थे। कार्ल महान् के उत्तराधिकारियो के शासन-काल में इतने गृह-युद्ध हुए, राजा की शक्ति इतनी क्षीण हो गयी और उसके साथ-साथ नये धनिकों ने, जिनमें अब कार्ल महान् द्वारा बनाये गये जिलो के वे काउट (gaugrafen)[154] भी शामिल हो गये थे जो अपने पद को पुश्तैनी बनाने की कोशिश कर रहे थे, इतनी ज्यादा ताकत हड़प ली कि फ़्रैंक किसानों की बरबादी और भी बहुत ज्यादा बढ़ गयी। नोर्मन लोगों के आक्रमण ने बाकी कसर भी पूरी कर दी। कार्ल महान् की मृत्यु के पचास वर्ष बाद फ़्रैंक साम्राज्य नोर्मन आक्रमणकारियो के चरणो पर उसी निस्सहाय अवस्था मे पड़ा था, जैसे कि उसके चार सौ वर्ष पहले रोमन साम्राज्य फ़्रैंक लोगों के कदमों पर पड़ा था।

फ़्रैंक साम्राज्य इस समय न केवल बाहरी दुश्मनों के सामने निस्सहाय था, बल्कि समाज की अंदरूनी व्यवस्था, या शायद उसे अव्यवस्था कहना ज्यादा सही होगा, भी उसी निस्सहाय स्थिति मे थी। स्वतंत्र फ़्रैंक किसान अब उसी स्थिति में थे, जो उनके पूर्ववर्ती रोम के coloni की स्थिति हो

वितरण, उस काल में खेती तथा उद्योग के उत्पादन के स्तर के पूर्णतः अनुरूप था, और इसलिये वह अपरिहार्य था; दूसरे यह कि उस काल के बाद आनेवाले चार सौ वर्षों में उत्पादन का वह स्तर न तो खास ऊपर उठा और न नीचे गिरा, और इसलिये उससे लाजिमी तौर से उसी पुराने ढग का सम्पत्ति-वितरण तथा आबादी का वर्ग-विभाजन पैदा हुआ। रोमन साम्राज्य की अन्तिम शताब्दियों में शहर का देहात पर प्रभुत्व नही रह गया था और वह जर्मन शासन की प्रारम्भिक शताब्दियो मे भी फिर से कायम नही हो पाया। इसका अर्थ यह है कि इस पूरे अरसे मे खेती तथा उद्योग, दोनो का स्तर बहुत नीचे था। सामान्यतः ऐसी हालत होने पर और उसके फलस्वरूप शासक बड़े-बड़े जमीदारो और पराधीन छोटे-छोटे किसानो का होना लाजिमी है। ऐसे समाज मे न तो दास-श्रम के सहारे चलनेवाली बड़ी-बड़ी जागीरों की रोमन अर्थ-व्यवस्था, और न भूदास-श्रम की सहायता से चलनेवाली बड़े पैमाने की नयी खेती की कलम लगायी जा सकती थी। इस बात का सबसे अच्छा प्रमाण यह है कि कार्ल महान् ने अपने मशहूर शाही खास महाल में खेती के जो विस्तृत प्रयोग किये थे, उनका बाद मे चिह्न तक न बचा। केवल मठों ने इन प्रयोगो को जारी रखा और केवल उन्ही के लिये वे लाभप्रद सिद्ध हुए। परन्तु ये मठ असाधारण ढंग के सामाजिक निकाय थे जिनकी नीव ब्रह्मचर्य पर रखी गयी थी। वे ऐसा काम करते थे जो अपवाद होता था और इसलिये वे स्वयं अपवाद ही रह सकते थे।

फिर भी, इन चार सौ वर्षों मे प्रगति हुई। भले ही इस काल के अंत में हमे फिर वे ही मुख्य वर्ग दिखायी पड़ते हो जो आरम्भ में दिखायी पड़े थे, पर जिन लोगो को लेकर ये वर्ग बने थे उनमें जरूर परिवर्तन हो गया था। प्राचीन काल की दास-प्रथा मिट गयी थी। वे तबाह और बरबाद स्वतंत्र नागरिक भी नही रह गयेथे जो मेहनत करना अपनी शान के ख़िलाफ़ समझते थे। रोमन colonus और नये भूदासों के बीच स्वतंत्र फ़्रैंक किसान का आविर्भाव हुआ था। मरणोन्मुख रोमवाद की "निरर्थक स्मृतियां और निरुद्देश्य संघर्ष" अब मर चुके थे और दफ़ना भी दिये गये थे। नवी सदी के सामाजिक वर्गों का जन्म एक पतनोन्मुख सभ्यता के दलदल में नहीं, बल्कि एक नयी सभ्यता के प्रसव-काल में हुआ था। नयी नस्ल, जिसमे मालिक और नौकर दोनो ही थे, अपने रोमन पूर्ववर्तियों के मुकाबले में मनुष्यों

की नस्ल थी। प्रबल जमीदारों तथा पराधीन किसानों के सम्बन्ध, जो रोमनों के प्राचीन जगत् के पतन के निराशापूर्ण रूप थे, नयी नस्ल के लिये एक नये विकास का प्रारम्भिक विन्दु बन गये। इसके अलावा, ये चार सौ वर्ष वैसे भले ही अनुत्पादक प्रतीत हों, पर वे एक बड़ी उपज छोड़ गये, और वह है आधुनिक जातिया। यानी वे पश्चिमी यूरोप की मानवजाति को नये रूप में ढालकर और उसका नया विभाजन करके आगामी इतिहास के लिए उसे तैयार कर गये। दर असल जर्मनों ने यूरोप में नया जीवन फूक दिया था। और यही कारण है कि जर्मन काल मे राज्यो के भंग होने के परिणामस्वरूप नौर्स-सैरेसेन आधिपत्य नही क़ायम हुआ, बल्कि "बेनीफिम" और सरपरस्ती (commendation)[157] की प्रथा ने बढ़कर सामन्तवाद का रूप धारण किया और जनसंख्या मे इतनी तेज़ी से वृद्धि हुई कि इसके मुश्किल से दो सदी बाद धर्मयुद्धों—क्रूसेडों—मे जो जो बेतहाशा ख़ून बहा, उसे भी समाज बिना हानि उठाये बर्दाश्त कर सका।

मरणासन्न यूरोप में जर्मनो ने किस गुप्त मत्रबल से नया जीवन फूका था? क्या वह जर्मन नस्ल के अंदर छिपी हुई कोई जादूई ताक़त थी, जैसा कि हमारे अंधराष्ट्रवादी इतिहासकार कहना पसंद करेंगे? हरगिज़ नही। इसमें शक नही कि जर्मन लोग एक बहुत प्रतिभाशाली आर्य कबीले के थे, जो उस वक़्त ख़ास तौर पर पूरी तेज़ी से विकास कर रहा था। परन्तु जिस चीज़ ने यूरोप में नयी जान डाली, वह उनका विशिष्ट जातीय गुण नहीं, बल्कि उनकी बर्बरता, उनकी गोत्र-व्यवस्था थी।

उनकी व्यक्तिगत योग्यता और वीरता, उनका स्वातंत्र्य-प्रेम, सभी सार्वजनिक कामों को अपना समझने की उनकी जनवादी प्रवृत्ति—संक्षेप में, वे तमाम गुण जिन्हे रोम के लोग खो चुके थे और जिनके बिना रोमन संसार की कीचड़ में से नये राज्यों का निर्माण और नयी जातियों का पैदा होना असम्भव था—वे यदि बर्बर युग की उन्नत अवस्था की विशेषताएं और गोत्र-व्यवस्था के फल नही, तो और क्या थे?

यदि जर्मनो ने एकनिष्ठ विवाह के प्राचीन रूप को बदल डाला, परिवार मे पुरुष के शासन को ढीला किया और स्त्री को इतना ऊंचा स्थान दिया जितना प्राचीन संसार मे कभी नही था, तो जर्मनों मे यह सब

करने की शक्ति इसके सिवा और कहां से आयी कि वे विकास के बर्बर युग में थे, उनमें गोत्र-समाज के रीति-रिवाज में और मातृ-सत्ता के काल की विरासत उनमें अब भी जीवित थी?

कम से कम तीन सबसे महत्त्वपूर्ण देशों में – जर्मनी, उत्तरी फ्रांस और इंगलैंड में – यदि वे मार्क-समुदायों के रूप में गोत्र-व्यवस्था का एक अंश अक्षुण्ण रखने और उसे सामन्ती राज्य के अंदर समाविष्ट करने में सफल हुए और इस प्रकार उत्पीड़ित वर्ग को, किसानों को, मध्ययुगीन भूदास-प्रथा की कठिनतम परिस्थितियों में भी स्थानीय ऐक्य और प्रतिरोध का एक साधन प्रदान कर सके, जो साधन न तो प्राचीन काल के दासों को तैयार मिला था और न आधुनिक सर्वहारा को मिला है – तो इसका श्रेय उनकी बर्बर अवस्था को, गोत्रों में बसने की उनकी शुद्ध बर्बर प्रथा को नहीं, तो और किस बात को है?

और अन्त में, वे दास-प्रथा के उस नरम रूप को विकसित करके उसे सार्वत्रिक बनाने में सफल हुए, जो पहले उनके देश में प्रचलित था और बाद को जिसने अधिकाधिक रोमन साम्राज्य में भी दासता का स्थान ले लिया, और जिसने, जैसा कि फ़ूरिये ने पहली बार जोर देकर कहा था[158], उत्पीड़ितों को एक वर्ग के रूप में अपने को धीरे-धीरे मुक्त कर लेने का एक साधन दिया था(fournit aux cultivateurs des moyens d'affranchissement *collectif et progressif* *) और इस कारण वह दास-प्रथा से कहीं श्रेष्ठ था, क्योंकि जहां दास-प्रथा में दास की केवल वैयक्तिक मुक्ति हो सकती थी और बीच की कोई अवस्था सम्भव न थी (प्राचीन काल में कभी सफल विद्रोह के द्वारा दास-प्रथा का अंत नहीं हुआ), वहां मध्य युग के भूदासों ने धीरे-धीरे और एक वर्ग के रूप में अपने को मुक्त कर लिया था। यदि जर्मन यह सब कर सके, तो इसका कारण इसके सिवा और क्या था कि वे बर्बर अवस्था में थे, जिसकी वजह से वे प्राचीन काल की श्रम-दासता, या प्राच्य घरेलू दासता, किसी भी प्रकार की पूर्ण दास-प्रथा पर नहीं पहुंच पाये?

---

* काश्तकारों को सामूहिक रूप से धीरे-धीरे मुक्ति पाने के साधन प्रदान करता है। – सं०

९
बर्बरता और सभ्यता

यूनानी, रोमन और जर्मन--हम इन तीन बड़े उदाहरणों के रूप में इस बात का अध्ययन कर चुके हैं कि गोत्र-व्यवस्था का विनाश किस प्रकार हुआ। अब हम अंत में, उन आम आर्थिक परिस्थितियों का अध्ययन करेंगे जिन्होंने बर्बर युग की उन्नत अवस्था में समाज की गोत्र-व्यवस्था की नीव खोद डाली थी और जिनके कारण सभ्यता के युग का आरम्भ होते-होते गोत्र-व्यवस्था बिलकुल ख़त्म हो गयी। इस अध्ययन के लिये मार्क्स की 'पूंजी' उतनी ही आवश्यक है जितनी मौर्गन की पुस्तक।

जांगल युग की मध्यम अवस्था में पैदा होकर तथा उसकी उन्नत अवस्था मे और विकास करने के बाद गोत्र-व्यवस्था, जहां तक हम अपनी मूल सामग्री से किसी निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं, बर्बर युग की निम्न अवस्था में पूर्ण उत्कर्ष पर पहुंच गयी थी। अतएव हम अपना अध्ययन इस अवस्था से ही शुरू करेंगे।

इस अवस्था में, जिसका उदाहरण अमरीकी इंडियन प्रस्तुत करते हैं, हम गोत्र-व्यवस्था को पूर्ण विकसित रूप में पाते है। हर क़बीला कई गोत्रों मे, बहुधा दो गोत्रों में, बंटा होता था। आबादी बढ जाने पर ये आदिम गोत्र फिर कई संतति-गोत्रों में बंट जाते थे, और उनके सम्बन्ध में मातृ-गोत्र बिरादरी के रूप में प्रगट होता था। खुद क़बीला भी कई क़बीलों मे बंट जाता था, जिनमें से हर एक मे प्रायः वे ही पुराने गोत्र होते थे। कम से कम कुछ स्थानों में एक दूसरे से सम्बन्धित क़बीले मिलकर एक महासंघ बना लेते थे। यह सरल संगठन उन सामाजिक परिस्थितियों के

लिये पूर्ण रूप से पर्याप्त था जिनसे वह उत्पन्न हुआ था। वह एक प्रकार के विशिष्ट प्राकृतिक समूह से अधिक कुछ न था और वह इस रूप में सगठित समाज मे जो आंतरिक संघर्ष उठ सकते थे, उनका निपटारा करने मे समर्थ था। बाह्य क्षेत्र में संघर्ष युद्ध के द्वारा तय किये जाते थे, जिसका अंत किसी कबीले के मिट जाने में हो सकता था, लेकिन उसकी अधीनता मे कभी नही। गोत्र-व्यवस्था मे शासकों और शासितो के लिये कोई स्थान न था—इसी बात मे गोत्र-व्यवस्था की महानता और उसकी परिमितता दोनो है। आंतरिक क्षेत्र में, अभी अधिकारों और कर्त्तव्यो मे विभेद न हुआ था; किसी अमरीकी इंडियन के सामने यह सवाल कभी नही उठता था कि सार्वजनिक मामलो में भाग लेना, रक्त-प्रतिशोध लेना या क्षतिपूर्ति करना उसका अधिकार है अथवा कर्त्तव्य। यह सवाल उसको उतना ही बेमानी लगता जितना यह कि खाना, सोना या शिकार करना उसका कर्त्तव्य है अथवा अधिकार। न ही कोई क़बीला या गोत्र भिन्न-भिन्न वर्गों में बंट सकता था। इसलिये अब हमे देखना चाहिये कि इस व्यवस्था का आर्थिक आधार क्या था?

आबादी बहुत ही छितरी हुई थी। वह केवल कबीले के निवास-स्थान मे ही घनी होती थी, जिसके चारो ओर कबीले के लिये शिकार के वास्ते एक लम्बा-चौड़ा जगली इलाका होता था, और उसके भी आगे वह तटस्थ संरक्षक वन-भूमि होती थी जो उस कबीले को दूसरे क़बीलो से अलग करती थी और उसकी रक्षा करती थी। कबीले के अंदर पाया जानेवाला श्रम-विभाजन बस प्रकृति की उपज था, यानी केवल नारी और पुरुष के बीच श्रम-विभाजन पाया जाता था। पुरुष युद्ध मे भाग लेते थे, शिकार करते थे, मछली मारते थे, आहार की सामग्री जुटाते थे और इन तमाम कामों के लिये आवश्यक औजार तैयार करते थे। स्त्रिया घर की देखभाल करती थी और खाना-कपडा तैयार करती थी। वे खाना पकाती थी, बुनती थी और सीती थी। प्रत्येक अपने-अपने कार्यक्षेत्र का स्वामी था: पुरुषो का जंगल में प्राधान्य था, तो स्त्रियो का घर मे, प्रत्येक उन औजारो का मालिक था जिन्हे उसने बनाया था और जिन्हे वह इस्तेमाल करता था; हथियार और शिकार करने तथा मछली मारने के औजार पुरुषों की सम्पत्ति थे और घर के सरोसामान तथा बर्तन-भाडे स्त्रियो की सम्पत्ति थे। कुटुम्ब सामुदायिक प्रकार का था और एक कुटुम्बघर में कई, और अक्सर बहुत

से परिवार एकसाथ रहते थे*। जो कुछ साथ मिलकर तैयार किया और इस्तेमाल किया जाता था – जैसे घर, बगीचा, लम्बी नाव – वह सब की सामूहिक सम्पत्ति होता था। अतएव, वह "कमायी हुई सम्पत्ति" यहां और सिर्फ़ यहीं मिलती है, जिसे न्यायशास्त्री और अर्थशास्त्री झूठमूठ के लिये सभ्य समाज की विशेषता बताते हैं और जो आधुनिक पूंजीवादी सम्पत्ति का अन्तिम झूठा कानूनी आधार बनी हुई है।

परन्तु मनुष्य हर जगह इसी अवस्था में नहीं रहा। एशिया में उसे ऐसे पशु मिल गये जिन्हें पालतू बनाया जा सकता था; उन्हें बाड़े में रखकर उनकी नस्ल बढ़ायी जा सकती थी। जंगली भैंस का शिकार करना पड़ता था, पालतू गाय हर साल एक बछड़ा और उसके ऊपर दूध देती थी। कई सबसे उन्नत कबीलों ने – जैसे आर्यों, सामी लोगों और शायद तूरानियों ने भी – पशुओं को पालतू बनाया, और बाद में पशुपालन व पशुप्रजनन को अपना मुख्य पेशा बना लिया। पशुपालक क़बीले बर्बर लोगों के साधारण जन-समुदाय से अलग हो गये। यह **पहला बड़ा सामाजिक श्रम-विभाजन** था। ये पशुपालक क़बीले, दूसरे बर्बर कबीलों में न सिर्फ ज्यादा खाने-पीने का सामान तैयार करते थे, बल्कि अधिक विविधतापूर्ण सामान तैयार करते थे। उनके पास न केवल दूध, दूध से बनायी वस्तुएं और गोश्त दूसरे कबीलों की तुलना में अधिक मात्रा में होता था, बल्कि उनके पास खालें, ऊन, बकरियों के बाल, और ऊन कातकर और बुनकर बनाये गये कपड़े भी थे, जिनका इस्तेमाल, कच्चे माल की मात्रा में दिनोंदिन होनेवाली बढ़ती के साथ-साथ, लगातार बढ रहा था। इससे पहली बार नियमित रूप से विनिमय सम्भव हुआ। इसके पहलेवाली अवस्थाओं में केवल कभी-कभी ही विनिमय सम्भव था; कुछ लोगों की हथियारों व औजारों के बनाने में विशेष निपुणता क्षणिक श्रम-विभाजन को संभव बना सकती थी। उदाहरण के लिये, बहुत-सी जगहों में नवीन प्रस्तर युग के पत्थर के औजार बनानेवाले कारखानों के अवशेष मिले हैं, जिनके बारे में किसी प्रकार के संदेह की

---

* विशेषकर अमरीका के उत्तरी-पश्चिमी तट पर; देखिए बैंक्रोफ़्ट। नवीन शर्लोट द्वीपों के निवासी हैडा लोगों में तो कुछ घरों में सात-सात सौ व्यक्ति एकसाथ रहते हैं। नूटका लोगों में पूरा का पूरा कबीला एक घर में रहता था। (एंगेल्स का नोट)

गुंजाइश नही है। इन कारखानों मे जो कारीगर अपनी क्षमता का विकास किया करते थे, बहुत सम्भव है कि वे पूरे समुदाय के लिये काम करते थे, जैसा कि भारत की गोत्र-व्यवस्था वाले समुदायों के स्थायी दस्तकार आजकल भी करते है। हर हालत मे, उस अवस्था मे कबीले के अंदर विनिमय के अलावा किसी और प्रकार के विनिमय के आरम्भ होने की सम्भावना नही थी और वह विनिमय भी बस अपवादस्वरूप ही था। परन्तु जब पशुपालक कबीलों ने स्पष्ट आकार ग्रहण किया, तो भिन्न-भिन्न कबीलो के सदस्यों के बीच विनिमय के आरम्भ होने और विकास करने तथा एक नियमित सामाजिक प्रथा के रूप मे समाज मे जड़ जमा लेने के लिये सभी अनुकूल परिस्थितिया पैदा हो गयी। शुरु मे एक कबीला दूसरे क़बीले के साथ अपने-अपने गोत्र-मुखियाओं के ज़रिये विनिमय करता था, परन्तु जैसे-जैसे पशुओं के रेवड लोगों की पृथक् सम्पत्ति बनते गये, वैसे-वैसे व्यक्तियों के बीच होनेवाले विनिमय का अधिकाधिक प्राधान्य होता गया, यहां तक कि अंत मे वही विनिमय का एकमात्र रूप हो गया। पशुपालक कबीले जो मुख्य चीज दूसरे कबीलो को विनिमय मे देते थे, वह थी पशुधन। अतएव पशुधन वह माल बन गया जिसके द्वारा दूसरे सभी मालो का मूल्य मापा जाता था और जिसे हर जगह लोग खुशी से दूसरे मालो के बदले मे लेने को तैयार रहते थे, साराश यह कि पशुधन ने मुद्रा का कार्य ग्रहण कर लिया और इस अवस्था मे वह मुद्रा का काम देने भी लगा था। माल के विनिमय के आरम्भ मे ही एक विशेष माल – मुद्रा – की जरूरत अनिवार्य रूप मे तेज़ी से महसूस होने लगी।

बर्बर युग की निम्न अवस्था के एशियाई लोगों को शायद बागबानी का ज्ञान नही था, पर अधिक से अधिक बर्बर युग की मध्यम अवस्था तक तो वह जरूर ही इन लोगो मे खेती के पूर्ववर्ती के रूप मे शुरु हो गयी होगी। तूरान की पहाडियों की जलवायु ऐसी न थी कि बिना लंबे और कड़ाके के जाड़े के दिनों के लिये चारे का इन्तज़ाम किये वहा पशुपालन का जीवन बिताया जा सके। इसलिये यहा चारे और अनाज की खेती के बिना काम न चल सकता था। काले सागर के उत्तर मे जो स्तेपी प्रदेश है, वहां भी यही हालत थी। और जब एक बार जानवरो के लिये अनाज बोया जाने लगा, तो शीघ्र ही वह मनुष्यों का भी भोजन बन गया। खेती की जमीन अब भी कबीले की सम्पत्ति बनी रही और वह पहले गोत्रों

के बीच बांट दी जाती थी, गोत्र उसे सामुदायिक कुटुम्बो मे और अन्त मे अलग-अलग व्यक्तियो के बीच इस्तेमाल के लिये बाट देता था। उन्हे शायद ज़मीन पर कब्ज़े का कुछ अधिकार मिला हुआ था, पर उससे अधिक कुछ नही।

इस अवस्था की औद्योगिक उपलब्धियो मे दो विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। एक है करघा, दूसरा है खनिज धातुओं को गलाने व साफ करने तथा धातुओं से काम की चीजें बनाने की कला। उनमे तावे, टिन, और उन्हे मिलाकर बनाये जानेवाले कासे का सबसे अधिक महत्त्व था। कासे से बड़े काम के औजार और हथियार बनते थे, पर वे पत्थर के औज़ारो की ज़रूरत को ख़त्म नही कर सकते थे। यह काम तो सिर्फ लोहा ही कर सकता था, परन्तु उसका उत्पादन अभी तक अज्ञात था। सोना और चादी जेवर बनाने और सजावट के काम मे आने लगे थे, और वे उस समय भी तावे और कासे से कही अधिक मूल्यवान् समझे जाने लगे होगे।

जब पशुपालन, खेती, घरेलू दस्तकारी—सभी शाखाओं मे उत्पादन का विकास हुआ तो मानव श्रम-शक्ति जितना उसके पोषण में ख़र्च होता था, उससे अधिक पैदा करने लगी। साथ ही गोत्र के, या सामुदायिक कुटुम्ब के, अथवा अलग-अलग परिवारों के प्रत्येक सदस्य के ज़िम्मे रोज़ाना पहले से कहीं ज्यादा काम आ पड़ा। इसलिये जरूरत महसूस हुई कि कहीं से और श्रम-शक्ति लायी जाये। वह युद्ध से मिली। युद्ध में जो लोग बन्दी हो जाते थे, अब उनको दास बनाया जाने लगा। उस समय की सामान्य ऐतिहासिक परिस्थितियों मे जो पहला बड़ा सामाजिक श्रम-विभाजन हुआ, वह श्रम की उत्पादन-क्षमता को बढाकर, अर्थात् धन में वृद्धि करके और उत्पादन के क्षेत्र को विस्तार देकर समाज मे अपने पीछे लाज़िमी तौर पर दास-प्रथा को ले आया। पहले बड़े सामाजिक श्रम-विभाजन के परिणामस्वरूप खुद समाज के पहले बडे विभाजन का उदय हुआ, समाज दो वर्गों में बंट गया: एक ओर दासों के मालिक हो गये और दूसरी ओर दास, एक ओर शोषक हो गये और दूसरी ओर शोषित।

जानवरों के रेवड़ और ग़ल्ले कब और कैसे कबीले अथवा गोत्र की सामूहिक सम्पत्ति से अलग-अलग परिवारों के मुखियाओं की सम्पत्ति बन गये, यह हम आज तक नही जान सके है। परन्तु मुख्यतः यह परिवर्तन इसी अवस्था मे हुआ होगा। जानवरो के रेवड़ो तथा अन्य सम्पदाओं के

कारण परिवार के अन्दर क्राति हो गयी। जीविका कमाना सदा पुरुष का काम रहा था, वह जीविका कमाने के साधनों का उत्पादन करता था और उनका स्वामी होता था। अब जानवरो के रेवड़ जीविका कमाने का नया साधन बन गये थे; शुरू मे जंगली जानवरो को पकड़कर पालतू बनाना और फिर उनका पालन-पोषण करना—यह पुरुष का ही काम था। इसलिये वह जानवरो का मालिक होता था और उनके बदले में मिलनेवाले तरह-तरह के माल और दासो का भी मालिक होता था। इसलिए उत्पादन से जो अतिरिक्त पैदावार होती थी, वह पुरुष की सम्पत्ति होती थी; नारी उसके उपभोग मे हिस्सा बंटाती थी, परन्तु उसके स्वामित्व में नारी का कोई भाग नही होता था। "जांगल" योद्धा और शिकारी घर मे नारी को प्रमुख स्थान देकर खुद गौण स्थान से ही संतुष्ट था। "सीधे-सादे" गड़रिये ने अपनी दौलत के जोर से मुख्य स्थान पर खुद अधिकार कर लिया और नारी को गौण स्थान में ढकेल दिया। नारी कोई शिकायत न कर सकती थी। पति और पत्नी के बीच सम्पत्ति का विभाजन परिवार के अंदर श्रम-विभाजन द्वारा नियमित होता था। श्रम-विभाजन पहले जैसा ही था, फिर भी अब उसने घर के अंदर के सम्बन्ध को एकदम उलट-पलट दिया था, क्योकि परिवार के बाहर श्रम-विभाजन बदल गया था। जिस कारण से पहले घर मे नारी सर्वेसर्वा थी—यानी उसका घरेलू काम-काज तक ही सीमित रहना—उसी ने अब घर मे पुरुष का आधिपत्य सुनिश्चित बना दिया। जीविका कमाने के पुरुष के काम की तुलना मे नारी के घरेलू काम का महत्त्व जाता रहा। अब पुरुष का काम सब कुछ बन गया और नारी का काम एक महत्त्वहीन योगदान मात्र रह गया। यहा हम अभी से ही यह बात साफ-साफ़ देख सकते है कि जब तक स्त्रियों को सामाजिक उत्पादन के काम से अलग और केवल घर के कामों तक ही, जो निजी काम होते हैं, सीमित रखा जायेगा, तब तक स्त्रियों का स्वतन्त्रता प्राप्त करना और पुरुषों के साथ बराबरी का हक पाना असम्भव है और असम्भव ही बना रहेगा। स्त्रियों की स्वतंत्रता केवल उसी समय सम्भव होती है जब वे बड़े पैमाने पर, सामाजिक पैमाने पर, उत्पादन मे भाग लेने में समर्थ हो पाती हैं, और जब घरेलू काम उनके न्यूनतम ध्यान का तकाजा करते हैं। और यह केवल बड़े पैमाने के आधुनिक उद्योग के परिणामस्वरूप ही सम्भव हुआ है, जो न केवल स्त्रियों के लिये यह मुमकिन

वना देता है कि वे वड़ी संख्या में उत्पादन मे भाग ले सकें, वल्कि जिसके लिए स्त्रियो को उत्पादन में खीचना भी जरूरी होता है, और इसके अलावा जिसमें घर के निजी काम-काज को भी एक सार्वजनिक उद्योग वना देने की प्रवृत्ति होती है।

जव घर के अंदर पुरुष की सचमुच प्रभुता कायम हो गयी, तो उसकी तानाशाही कायम होने के रास्ते मे जो आखिरी वाधा थी, वह भी खतम हो गयी। मातृ-सत्ता के नाश, पितृ-सत्ता की स्थापना और युग्म-परिवार के धीरे-धीरे एकनिष्ठ विवाह की प्रथा में सक्रमण से इस तानाशाही की परिपुष्टि हुई और वह स्थायी वनी। इससे पुरानी गोत्र-व्यवस्था मे दरार पड़ गयी। एकनिष्ठ परिवार एक ताकत बन गया और गोत्र के अस्तित्व के लिये एक ख़तरा वन गया।

अगला कदम हमे बर्बर युग की उन्नत अवस्था मे ले आता है। यह वह अवस्था है जिसमे सभी सभ्य जातिया अपने वीर-काल से गुजरी हैं। यह लोहे की तलवार का युग है, पर साथ ही लोहे की फालवाले हल तथा लोहे की कुल्हाडी का भी युग है, जब लोहा मनुष्य का सेवक वन गया था। यदि हम आलू को छोड़ दें, तो लोहा उन सभी कच्चे मालो मे अन्तिम और सबसे महत्त्वपूर्ण है जिन्होंने इतिहास मे क्रान्तिकारी भूमिका अदा की है। लोहे के कारण पहले से वडे पैमाने पर खेत बनाकर फसल उगाना और लम्बे-चौडे जंगली इलाको को खेती के लिये साफ करना सम्भव हो गया। उससे दस्तकारो को इतने सख्त और तेज औजार मिल गये जिनके सामने न कोई पत्थर ठहर सकता था और न कोई अन्य ज्ञात धातु ही ठहर सकती थी। परन्तु यह सब धीरे-धीरे ही हुआ, शुरू मे जो लोहा तैयार हुआ था वह तो अक्सर कासे से भी नरम होता था। इस प्रकार पत्थर के बने औजार धीरे-धीरे ही गायव हुए। हम न केवल 'हिल्डेब्राड के गीत' मे पत्थर की कुल्हाडियों को युद्ध मे इस्तेमाल होते सुनते हैं, वल्कि हेस्टिंग्स की लडाई में भी, जो १०६६ में हुई थी, उनका प्रयोग होते देखते हैं।[159] परन्तु अब प्रगति की धारा अबाध हो गयी, रुकावटें पहले से कम हो गयी और गति पहले से तेज हो गयी। कबीले का या कबीलो के महासंघ का केन्द्रीय स्थान शहर बन गया, जिसकी बुर्जदार और मोखेदार चहारदीवारी के घेरे मे पत्थर या ईंटो के बने मकान होते थे। यह शहर जहां वास्तुकला मे प्रगति का सूचक था, वही वह पहले से वढे हुए खतरे और उससे वचाव

के इन्तजाम की जरूरत का द्योतक भी। धन-दौलत तेजी से बढ़ रही थी, पर यह अलग-अलग व्यक्तियों की धन-दौलत थी। बुनाई, धातुकर्म और दूसरी दस्तकारियों का, हर एक का अपना अलग विशिष्ट रूप होता जा रहा था, और उनके मालों मे अधिकाधिक सफाई, खूबसूरती और विविधता आती जा रही थी। खेती से अब न केवल अनाज, दालें और फल मिलते थे, बल्कि तेल और शराब भी मिलती थी—अब लोगों ने तेल निकालने और शराब बनाने की कला सीख ली थी। अब कोई एक व्यक्ति इतने भिन्न प्रकार के काम नहीं कर सकता था; इसलिये अब दूसरा बड़ा श्रम-विभाजन हुआ: दस्तकारिया खेती से अलग हो गयी। उत्पादन मे जो लगातार वृद्धि हो रही थी और उसके साथ-साथ श्रम की उत्पादन-क्षमता मे जो बढ़ती हो गयी थी, उसने मानव श्रम-शक्ति का मूल्य बढा दिया। दास-प्रथा, जो पिछली मंजिल मे अकुरित हो रही थी और केवल कहीं-कहीं पायी जाती थी, अब समाज-व्यवस्था का एक आवश्यक अंग बन गयी। दास अब महज़ सहायक नहीं रह गये, बल्कि उन्हें बीसियों की संख्या मे खेतों और कारखानों मे काम करने के लिये हाका जाने लगा। उत्पादन के खेती तथा दस्तकारी, इन दो बड़ी शाखाओं में बंट जाने के कारण अब विनिमय के लिये उत्पादन, माल का उत्पादन होने लगा। उसके साथ-साथ न सिर्फ अपने इलाके के अदर, न सिर्फ विभिन्न क़बीलों के इलाकों की सीमाओं पर, बल्कि समुद्र पार भी व्यापार होने लगा। इस सब का अभी बहुत कम विकास हुआ था; सार्वजनिक मुद्रा का काम करनेवाले माल के रूप मे बहुमूल्य धातुओं का पहले से अधिक प्रयोग होने लगा था, परन्तु अभी वे सिक्कों के रूप मे नहीं ढाली जाती थीं और केवल तौलकर उनका विनिमय होता था।

अब स्वतंत्र लोगों तथा दासों के भेद के साथ-साथ अमीर और गरीब का भेद भी जुड़ गया था। नये श्रम-विभाजन के साथ समाज नये सिरे से वर्गों मे बंट गया था। जहा कहीं पुराने आदिम सामुदायिक कुटुम्ब अभी तक कायम थे, वहां वे विभिन्न परिवारों के अलग-अलग मुखियाओं के पास कम-ज्यादा धन होने के कारण टूट गये और इससे पूरे समुदाय द्वारा मिलकर खेती करने की प्रथा खतम हो गयी। खेती की ज़मीन अलग-अलग परिवारों मे इस्तेमाल के लिये बांट दी गयी—पहले वह एक निश्चित अवधि के लिये बांटी जाती थी, फिर सदा के लिये बांट दी गयी। पूरी तरह निजी सम्पत्ति

में संक्रमण धीरे-धीरे और युग्म-परिवार के एकनिष्ठ विवाह मे संक्रमण के साथ-साथ हुआ। व्यक्तिगत परिवार समाज की आर्थिक इकाई बनने लगा।

आबादी के पहले से ज्यादा घनी होने की वजह से यह जरूरी हो गया कि वह आन्तरिक तथा वाह्य रूप से अधिक एकताबद्ध हो। हर जगह एक दूसरे से रिश्ते से जुड़े क़बीलो को मिलाकर महासंघ बनाना और उसके कुछ समय बाद उनका विलयन आवश्यक हो गया और तब अलग-अलग कबीलों के इलाके मिलकर एक जाति का इलाका बन गये। सेनानायक— rex, basileus, thiudans—स्थायी अधिकारी बन गया जिसके बिना काम नही चल सकता था। जहां कही अभी तक जन-सभा नही थी, वहां वह कायम कर दी गयी। गोत्र-समाज ने जिस सैनिक लोकतंत्र के रूप मे विकास किया था, उसके मुख्य अंग थे सेनानायक, परिषद् और जन-सभा। सैनिक लोकतंत्र इसलिये कि युद्ध करना और युद्ध के लिये संगठन करना जाति के जीवन का एक नियमित अंग बन गया था। एक जाति अपनी पड़ोसी जाति की दौलत देखकर लालच करने लगती थी। दौलत हासिल करना इन जातियों के लिये जीवन का एक मुख्य उद्देश्य बन गया था। ये बर्बर लोग थे: उन्हें उत्पादक काम से लूट-मार करना अधिक आसान, यहा तक कि अधिक सम्मानप्रद लगता था। एक जमाना था जब केवल आक्रमण का बदला लेने के लिये या अपने नाकाफ़ी इलाके को बढाने के लिये युद्ध किया जाता था, पर अब केवल लूट-मार के लिये युद्ध होने लगा और युद्ध करना एक नियमित पेशा बन गया। नये किलाबंद शहरो के चारों ओर ऊंची-ऊंची दीवारे अकारण नही बनायी गयी थी—उनकी गहरी खाइयां गोत्र-व्यवस्था की कब्र बन गयी थीं और उनकी मीनारें अभी से सभ्यता के युग को छूने लगी थी। अन्दरूनी मामलों में भी इसी तरह का परिवर्तन हो गया। लूट-मार के लिये होनेवाले युद्धों ने सर्वोच्च सेनानायक की और उप-सेनानायकों की शक्ति बढ़ा दी। पहले, आम तौर पर एक ही परिवार से लोगों के उत्तराधिकारी चुने जाने की प्रथा थी, अब, विशेषकर पितृ-सत्ता कायम हो जाने के बाद, वह धीरे-धीरे वंशगत उत्तराधिकार के नियम में बदल गयी। शुरू मे इसे लोग छूट देते थे, बाद मे इसका दावा किया जाने लगा और अन्त मे यह जबर्दस्ती कायम कर लिया गया। इस प्रकार वंशगत बादशाही और वंशगत अभिजात्य की नीव पड़ गयी। इस तरह धीरे-धीरे गोत्र-व्यवस्था की संस्थाओं की जड़े जनता के बीच मे, गोत्रों, बिरादरियो और कबीलों

१४*

में से उखाड दी गयी और पूरी गोत्र-व्यवस्था अपने से एक बिलकुल उल्टी चीज मे बदल गयी। अपने मामलों की स्वतंत्र रूप से खुद व्यवस्था करनेवाले कबीलों के संगठन से अब वह एक ऐसा संगठन बन गया जो पड़ोसियों को लूटने और सताने के लिये था। और तदनुरूप ही उसके निकाय जनता की इच्छा को कार्यान्वित करने का साधन नही रह गये, बल्कि खुद अपनी जनता पर शासन करने और अत्याचार करनेवाले स्वतन्त्र निकाय बन गये। यह कभी न होता यदि धन का लालच गोत्र के सदस्यों को अमीरों और ग़रीबों में न बाट देता, यदि "गोत्र के भीतर सम्पत्ति के भेद हितो की एकता को गोत्र के सदस्यों के आपसी विरोध में न बदल देते" (मार्क्स)[160], और यदि दास-प्रथा की वृद्धि के कारण जीविका कमाने के लिये मेहनत करना गुलामों का और लूट-मार से भी ज्यादा शर्मनाक काम न समझा जाने लगता।

* * *

अब हम सभ्यता के द्वार पर पहुंच जाते है। श्रम-विभाजन मे और भी नयी प्रगति के साथ इस युग का श्रीगणेश होता है। बर्बर युग की निम्न अवस्था मे मनुष्य केवल सीधे-सीधे अपनी जरूरतो के लिये पैदा करता था, विनिमय केवल कही-कही पर होता था जहा कि अचानक अतिरिक्त पैदावार हो जाती थी। बर्बर युग की मध्यम अवस्था मे हम पाते है कि पशुपालक कबीलो के पास पशुधन के रूप में एक ऐसी सम्पत्ति हो जाती है, जो काफी बड़ा रेवड़ या गल्ला होने पर नियमित रूप से उनकी जरूरतो से ज्यादा पैदावार उन्हे देती है। साथ ही हम यह भी पाते है कि पशुपालक क़बीलो तथा उन पिछडे हुए कबीलों के बीच, जिनके पास पशुओं के रेवड नही होते, श्रम का विभाजन हो जाता है। इस तरह उत्पादन की दो भिन्न अवस्थाये साथ-साथ चलती हैं, जिससे नियमित रूप से विनिमय होने के लिये परिस्थितियां तैयार हो जाती हैं। बर्बर युग की उन्नत अवस्था आने पर श्रम का एक और विभाजन हो गया—खेती तथा दस्तकारी के बीच विभाजन, जिससे अधिकाधिक बढते हुए परिमाण मे, विशेष रूप से विनिमय करने के लिये, मालो का उत्पादन होने लगा। इस तरह अलग-अलग उत्पादकों के बीच विनिमय उस अवस्था मे पहुंच गया जहा वह समाज के लिये नितान्त आवश्यक बन गया। सभ्यता के युग ने पहले से स्थापित श्रम-विभाजन को और सुदृढ किया तथा आगे बढ़ाया, खास तौर पर शहर

तथा देहात के अन्तर को और भी गहरा करके (या तो प्राचीन काल की तरह शहर का देहात पर आर्थिक आधिपत्य रहता था, या मध्य युग की तरह शहर पर देहात का आर्थिक प्रभुत्व क़ायम हो जाता था); और एक तीसरा श्रम-विभाजन भी जोड़ दिया जो सभ्यता के युग की अपनी विशेषता है और निर्णायक महत्त्व रखती है: उसने एक ऐसा वर्ग उत्पन्न किया जो उत्पादन में कोई भाग नहीं लेता था और केवल पैदावार के विनिमय का काम करता था। यह **व्यापारियों** का वर्ग था। इसके पहले वर्गों के सभी प्रारम्भिक और अविकसित रूपों का केवल उत्पादन से सम्बन्ध था। उत्पादन में लगे हुए लोगों को उत्पादन का प्रबंध करनेवालों और कार्य करनेवालों में, या बड़े पैमाने पर उत्पादन करनेवालों और छोटे पैमाने पर उत्पादन करनेवालों में, बांट दिया गया था। लेकिन यहां पहली बार एक ऐसा वर्ग सामने आता है जो उत्पादन में बिना कोई भाग लिये ही उसके पूरे प्रबंध पर अधिकार जमा लेता है और उत्पादकों को आर्थिक दृष्टि से अपने अधीन कर लेता है। हर दो प्रकार के उत्पादकों के बीच वह एक ऐसा बिचवइया बन जाता है जिसके बिना उनका काम नहीं चलता और फिर वह उन दोनों का शोषण करता है। इस बहाने से कि उत्पादकों को विनिमय की परेशानी और जोखिम न उठानी पड़े, उनकी पैदावार के लिए दूर-दूर के बाजार खोज लिये जायें और इस प्रकार समाज का सबसे उपयोगी वर्ग बनने के बहाने से वास्तव में परोपजीवियों का एक वर्ग उत्पन्न होता है – ये असली माने में सामाजिक पराश्रयी हैं जो वस्तुतः नगण्य सेवाओं के पुरस्कार के रूप में देश और विदेश के उत्पादन की सारी मलाई चट कर जाते हैं, देखते-देखते बेशुमार दौलत जमा कर लेते हैं, उसके अनुरूप समाज में असर जमा लेते हैं और इसी कारण उन्हें सभ्यता के युग में नित नया सम्मान प्राप्त होता है और उनका उत्पादन पर अधिकाधिक नियंत्रण होता जाता है, यहां तक कि अन्त में वे खुद अपनी एक उपज लेकर उपस्थित होते हैं, और वह है एक निश्चित अवधि के बाद बार-बार आनेवाला अर्थ-संकट।

विकास की जिस अवस्था की हम चर्चा कर रहे हैं, उसमें नवोत्पन्न व्यापारी वर्ग को अभी इस बात का कोई आभास न मिला था कि उसके भाग्य में कितनी बड़ी-बड़ी बातें लिखी हैं। लेकिन वह उदित हुआ और अपने को समाज के लिए अपरिहार्य बना लिया – इतना ही काफी था। इसके साथ-साथ धातु-मुद्रा, धातु के बने सिक्के काम में आने लगे और

ऐसा नया साधन तैयार हो गया जिसके द्वारा पैदा न करनेवाला, पैदा करनेवालों तथा उनकी पैदावार पर शासन कर सकता था। मालों के उस माल का पता लग गया जो अपने अन्दर अन्य सभी मालों को छिपाये रहता है, वह जादू की पुड़िया मिल गयी जिसे इच्छा होते ही हर उस चीज में बदला जा सकता है जो इच्छित हो, या जिसकी इच्छा की जाये। वह जिसके पास होती थी, उत्पादन के संसार में उसी का बोलबाला होता था। और सबसे ज्यादा वह किसके पास होती थी? व्यापारी के पास। मुद्रा-पूजा उसके हाथों में सुरक्षित थी। उसने खूब अच्छी तरह साफ कर दिया था कि मुद्रा के सामने सभी मालों को, और इसलिये माल के सभी माल उत्पादकों को, नाक रगड़नी पड़ेगी। उसने व्यवहार में सिद्ध कर दिखाया कि इस साक्षात् मूर्तिमान धन के सामने धन के अन्य सभी रूप केवल दिखावा मात्र है। मुद्रा की शक्ति फिर कभी उस आदिम भोंडे एवं हिंसक रूप में प्रकट नहीं हुई जिस रूप में वह अपने शैशव में प्रगट हुई थी। मुद्रा के बदले में मालों की बिक्री होने लगने के बाद मुद्रा उधार देना और उस पर व्याज लेना व सूदखोरी शुरू हुई। और प्राचीन एथेंस तथा रोम कानूनों ने कर्जदार को जिस तरह निर्ममता से और लाचार हालत में सूदखोर महाजनों के चरणों में डाल दिया था, बाद के किसी काल के कानूनों ने वैसा नहीं किया। और एथेंस तथा रोम, इन दोनों जगहों के कानून अपने आप उत्पन्न हो गये थे, वे सामान्य कानून थे और उनके पीछे आर्थिक कारणों के अलावा और किसी तरह का ज़ोर न था।

तरह-तरह के मालों तथा दासों के रूप में और मुद्रा के रूप में तो धन था ही, उसके अलावा ज़मीन के रूप में भी धन का आविर्भाव हुआ। अलग-अलग व्यक्तियों को ज़मीन के जो टुकड़े शुरू में अपने गोत्रों या कबीलों से मिले थे, अब उन पर उनका अधिकार इतना पक्का हो गया था कि ये टुकड़े उनकी वंशगत सम्पत्ति बन गये। इसके पहले वे जिस चीज की सबसे ज्यादा कोशिश कर रहे थे, वह यह थी कि ज़मीन के उनके टुकड़ों पर गोत्र-समुदाय का जो दावा था, किसी तरह उससे छुटकारा मिल जाये, क्योंकि वह उनके लिये एक बंधन बन गया था। वे इस बंधन से मुक्त हो गये। पर उसके कुछ समय बाद उन्हें अपनी नयी भू-सम्पत्ति से भी मुक्ति मिल गयी। ज़मीन पर व्यक्तियों का पूर्ण व स्वतंत्र स्वामित्व होने का अर्थ केवल यही नहीं था कि भूमि पर उनका अबाधित और असीमित कब्ज़ा

था, बल्कि उसका अर्थ यह भी था कि वे अपनी जमीन का हस्तान्तरण कर सकते थे। जब तक भूमि गोत्र की सम्पत्ति थी, इस बात की सम्भावना न हो सकती थी। पर जब जमीन के नये मालिक ने गोत्र और कबीले के सर्वोच्च अधिकार के बंधनों को तोडकर फेंक दिया, तो उसके साथ-साथ उसने उस नाते को भी तोड़ डाला जो अभी तक उसे जमीन से अटूट रूप में बांधे हुए था। इसका क्या मतलब था, यह उसके सामने मुद्रा ने साफ़ कर दिया, जिसका आविष्कार जमीन पर निजी स्वामित्व कायम होने के साथ-साथ हुआ था। अब जमीन का बिकाऊ माल बन जाना सम्भव हो गया; अब उसे बेचा जा सकता था और रेहन किया जा सकता था। जमीन पर निजी स्वामित्व का कायम होना था कि रेहन रखने की प्रथा का भी आविष्कार हो गया (देखिए एथेंस का उदाहरण)। जिस प्रकार एकनिष्ठ विवाह के साथ हैटेरिज़्म और वेश्यावृत्ति जुडी रही, उसी प्रकार अब जमीन पर निजी स्वामित्व के साथ रेहन-प्रथा जुड गयी। तुम जमीन का पूर्ण, स्वतंत्र और हस्तान्तरणीय स्वामित्व चाहते थे। एवमस्तु! जो चाहा, वही मिला! – tu l'as voulu, George Dandin!*

व्यापार का विस्तार, मुद्रा का चलन, सूदखोरी, जमीन पर निजी स्वामित्व और रेहन की प्रथा – इन सब चीज़ों के साथ यदि एक तरफ़ एक छोटे से वर्ग के हाथ मे बडी तेज़ी से धन एकत्रित तथा केन्द्रित होने लगा, तो दूसरी तरफ़ आम लोगो की ग़रीबी बढ़ने लगी तथा तबाह और दिवालिया लोगों की संख्या तेज़ी से बढ़ने लगी। धनिकों के इस नये अभिजात वर्ग ने, जिस हद तक वह क़बीलों के पुराने कुलीनों से भिन्न था, पुराने कुलीनो को स्थायी रूप से पष्ठभूमि मे ढकेल दिया (एथेंस में, रोम में और जर्मनों मे यही हुआ)। और धन के आधार पर स्वतंत्र मनुष्यों के भिन्न-भिन्न वर्गों मे इस तरह बंट जाने के साथ ही साथ, यूनान में ख़ास तौर पर दासों की संख्या में बड़ी भारी वृद्धि हो गयी**, जिनकी बेगार पर पूरे समाज का ऊपरी ढांचा खड़ा किया गया था।

---

* "तुम यही चाहते थे, जार्ज दांदी!" (मोलियेर, 'जार्ज दांदी')। – सं०

** एथेंस में दासों की सख्या क्या थी, यह जानने के लिये पृष्ठ ११७ देखिये। (प्रस्तुत खण्ड मे पृष्ठ १५२। – सं०) कोरिन्थ नगर में, जब वह उत्कर्ष के शिखर पर था, दासों की संख्या ४,६०,००० और ईजिना में ४,७०,००० थी। दोनों नगरों मे दासो की संख्या स्वतंत्र नागरिकों की दसगुनी थी। (एंगेल्स का नोट)

आइए, अब हम यह देखें कि इस सामाजिक क्रांति के फलस्वरूप गोत्र-व्यवस्था का क्या हुआ। वह उन नये तत्त्वों के सामने बिलकुल निस्सहाय थी जो बिना उसकी मदद के ही विकसित हो गये थे। उसका अस्तित्व इस बात पर निर्भर था कि गोत्र के, या यों कहिये कि क़बीले के सदस्य सब एक इलाके में साथ-साथ रहें और दूसरे लोग उस इलाक़े में न रहें। पर यह परिस्थिति तो बहुत दिनो से नही रह गयी थी। हर जगह गोत्र और कबीले घुल-मिलकर खिचडी हो गये थे; हर जगह स्वतन्त्र नागरिको के बीच दास, आश्रित लोग और विदेशी लोग भी रह रहे थे। यायावर की जगह स्थावर जीवन-अवस्था बर्बर युग के मध्यम चरण के अंत मे ही प्राप्त की गयी थी, अब लोगो की गतिशीलता तथा निवास-स्थान परिवर्तन से उसमें बार-बार व्याघात पड़ने लगा। यह चलनशीलता व्यापार के दबाव, पेशों के बदलते रहने तथा भूमि के हस्तान्तरण के कारण लाजिमी हो गयी थी। अब गोत्र-संगठन के सदस्यों के लिये सम्भव न था कि वे अपने सामूहिक मामलों को निपटाने के लिये एक जगह जमा हो सकें। अब केवल गौण महत्त्व के काम, उदाहरण के लिये धार्मिक अनुष्ठान आदि, ही मिलकर किये जाते थे और वह भी आधे मन से। गोत्र-समाज की संस्थाएं जिन जरूरतो और हितो की देखभाल के लिये स्थापित की गयी थी और जिनकी देखभाल करने के वे योग्य थी, उनके अलावा जीविकोपार्जन की अवस्थाओं मे क्रांति तथा उसके फलस्वरूप समाज के ढांचे में परिवर्तन से अब कुछ नयी जरूरते और नये हित भी पैदा हो गये थे, जो पुरानी गोत्र-व्यवस्था के लिये न केवल एक पराये तत्त्व थे, बल्कि उसके रास्ते में हर तरह की रुकावट डालते थे। श्रम-विभाजन से दस्तकारों के जो नये समूह पैदा हो गये थे, उनके हितों, और देहात के मुकाबले मे शहरो के विशिष्ट हितो के लिये नये निकायों की आवश्यकता थी। परन्तु इनमे से प्रत्येक समूह में विभिन्न गोत्रो, बिरादरियो और क़बीलो के लोग शामिल थे। यही नहीं, उनमें विदेशी लोग भी शामिल थे। इसलिये नये निकायों का निर्माण लाजिमी तौर पर गोत्र-सघटन के बाहर, उसके समानातर और इसलिये उसके विरोध मे हुआ। गोत्र-समाज के प्रत्येक संगठन के भीतर हितो की टक्कर होने लगी, जो अमीरो और गरीबो के, सूदखोरो और क़र्जदारो के, एक ही गोत्र और कबीले के अंदर साथ-साथ रहने से अपनी चरम सीमा पर पहुंच गयी। फिर नये बाशिन्दों का विशाल जन-समुदाय था जो गोत्र-व्यवस्था

के संगठनों से सर्वथा अपरिचित था, और जो, जैसा कि रोम में हुआ, देश मे एक प्रभुताशाली शक्ति बन सकता था। इन लोगों की संख्या बहुत बड़ी होने के कारण यह असम्भव था कि रक्तसम्बद्ध गोत्र और कबीले उनको धीरे-धीरे अपने अन्दर जज्ब कर लें। इस विशाल जन-समुदाय की नजरों मे गोत्र-व्यवस्था के संगठन ऐसे विशिष्ट संगठन थे जिन्हे विशेषाधिकार प्राप्त थे और जो बाहर के लोगों को अपने यहा घुसने नही देते थे। जो आरम्भ में प्राकृतिक विकास से उत्पन्न लोकतंत्र था, वही अब एक घृणित अभिजाततंत्र बन गया था। अन्तिम बात यह है कि गोत्र-व्यवस्था एक ऐसे समाज के गर्भ से पैदा हुई थी जिसमें किसी तरह के अन्दरूनी विरोध नही थे और वह केवल ऐसे समाज के ही योग्य थी। जनमत के सिवा उसके पास दबाव डालने का कोई साधन न था। परन्तु अब एक नया समाज पैदा हो गया था, जिसे स्वयं उसके अस्तित्व की तमाम आर्थिक परिस्थितियों ने अनिवार्यतः स्वतंत्र नागरिकों और दासो में, शोषक धनिकों और शोषित गरीबो मे बांट दिया था और जो न केवल इन विरोधो में सामंजस्य लाने मे असमर्थ था, बल्कि जो अनिवार्यतः उन्हें अधिकाधिक पराकाष्ठा पर पहुंचा रहा था। ऐसा समाज या तो इस हालत मे जीवित रह सकता था कि ये वर्ग बराबर एक दूसरे के ख़िलाफ़ खुला संघर्ष चलाते रहें और या इस हालत में कि एक तीसरी शक्ति का शासन हो, जो देखने में, आपस में लड़नेवाले वर्गों के ऊपर मालूम पड़े, उनके खुले संघर्ष को न चलने दे और जो ज्यादा से ज्यादा उन्हें केवल आर्थिक क्षेत्र मे और तथाकथित कानूनी ढंग से वर्ग-संघर्ष चलाने की इजाजत दे। गोत्र-व्यवस्था की उपयोगिता समाप्त हो चुकी थी। श्रम-विभाजन तथा उसके परिणामस्वरूप समाज के वर्गों मे बंट जाने से वह ध्वस्त हो गयी। उसका स्थान राज्य ने ले लिया।

* * *

ऊपर हमने उन तीनो रूपो की अलग-अलग चर्चा की है, जिनमें गोत्र-व्यवस्था के ध्वंसावशेषो पर राज्य का निर्माण हुआ। एथेंस सबसे शुद्ध, सबसे क्लासिकीय रूप का प्रतिनिधित्व करता है। वहा राज्य सीधे-सीधे और प्रधानतया उन वर्ग-विरोधों से उत्पन्न हुआ जो गोत्र-समाज के भीतर पैदा हो गये थे। रोम में गोत्र-समाज बहुसंख्यक प्लेबियनों – निम्न जनो – के बीच, जो इस समाज के बाहर थे, जिन्हें कोई अधिकार प्राप्त न था और जिन के लिए केवल कर्त्तव्य निर्दिष्ट थे, एक विशिष्ट अभिजातीय समाज

बन गया था ; प्लेबियनों की विजय से पुरानी गोत्र-व्यवस्था नष्ट हो गयी और उसके खंडहरों पर राज्य का निर्माण किया गया जिसमें जल्द ही गोत्र-समाज के कुलीन लोग और प्लेबियन दोनों समा गये। अन्तिम उदाहरण जर्मनों का है, जिन्होंने रोमन साम्राज्य को धराशायी किया था। उनके बीच बड़े-बड़े विदेशी इलाकों को जीतने के प्रत्यक्ष परिणाम के रूप में राज्य का जन्म हुआ था, क्योंकि गोत्र-व्यवस्था उन पर शासन करने का कोई साधन प्रस्तुत न कर सकती थी। पर चूंकि इन इलाकों को जीतने में वहां की पुरानी आबादी के साथ किसी गम्भीर संघर्ष की, या पहले से अधिक उन्नत श्रम-विभाजन की आवश्यकता नहीं पड़ी थी और चूंकि विजेता और विजित लोग दोनों आर्थिक विकास के लगभग एक से स्तर पर थे और इस प्रकार समाज का आर्थिक आधार विदेशियों की जीत के बाद भी पहले जैसा ही बना रहा था, इसलिये गोत्र-व्यवस्था एक बदले हुए, प्रादेशिक रूप में, मार्क-संघटन की शक्ल में, इसके बाद भी सदियों तक जीवित रह सकी। बल्कि बाद के वर्षों के अभिजात और कुलीन परिवारों के रूप में, यहां तक कि किसान परिवारों के रूप में भी – जैसे डिथमार्शेन में* – वह कुछ समय के लिये मंद रूप में सही, अपना कायाकल्प करने में भी सफल हो सका।

इसलिए, राज्य कोई ऐसी शक्ति नहीं है जो बाहर से लाकर समाज पर लादी गयी हो ; और न वह "किसी नैतिक विचार का मूर्त्त रूप" या "विवेक का मूर्त्त और वास्तविक रूप" है, जैसा कि हेगेल कहते हैं[162], बल्कि कहना चाहिए कि वह समाज की उपज है, जो विकास की एक निश्चित अवस्था में पैदा होती है, वह इस बात की स्वीकारोक्ति है कि यह समाज हल न होनेवाले अन्तर्विरोधों में फंस गया है, वह ऐसे विरोधों से विदीर्ण हो गया है, जिनका समाधान नहीं किया जा सकता और जिन्हें दूर करना उसकी सामर्थ्य के बाहर है। परन्तु ये विरोध, परस्पर विरोधी आर्थिक हितों वाले ये वर्ग, व्यर्थ के संघर्ष में अपने को और पूरे समाज को नष्ट न कर डालें, इसलिये एक ऐसी शक्ति, जो मालूम पड़े कि समाज से ऊपर खड़ी है, आवश्यक बन गयी, ताकि इस संघर्ष को हल्का किया

---

* नियूहर पहले इतिहासकार थे जिन्हें डिथमार्शेन[161] के परिवारों के बारे में अपनी जानकारी की बदौलत, गोत्र के स्वरूप का कम से कम कुछ आभास था। हालांकि यांत्रिक रूप में उनकी नकल करने के कारण उन्होंने कुछ गलतियां भी कर डालीं। (एंगेल्स का नोट)

जा सके, उसे "व्यवस्था" की सीमाओं के भीतर रखा जा सके। यही शक्ति, जो समाज से पैदा होती है, पर जो समाजोपरि स्थान ग्रहण कर लेती है, और उससे अधिकाधिक अलग होती जाती है, राज्य है।

पुराने गोत्र-संघटन से भिन्न, राज्य पहले तो अपनी प्रजा को प्रदेश के अनुसार बांट देता है। जैसा कि हम देख चुके हैं, रक्त-सम्बन्ध के आधार पर बनी और संयुक्त गोत्र-संस्थाएं अधिकतर अपर्याप्त हो गयी थी क्योंकि वे यह मानकर चलती थी कि उनके सदस्य एक विशेष प्रदेश से बधे हैं, गोकि यह नाता बहुत दिन हुए टूट गया था। प्रदेश अब भी था, पर लोग गतिशील हो गये थे। इसलिये पहला क़दम जो उठाया गया वह था प्रदेशानुसार विभाजन और नागरिकों को, गोत्र और क़बीले का लिहाज किये बिना—जहां कहीं वे बसे हों, वहीं—अपने सार्वजनिक कर्त्तव्यों व अधिकारों का प्रयोग करने की इजाज़त दे दी गयी। नागरिकों का यह प्रदेशानुसार संघटन एक ऐसी विशेषता है जो सभी राज्यों में समान रूप में पायी जाती है। इसी लिये वह हमें स्वाभाविक मालूम पड़ता है; परन्तु हम देख चुके हैं कि एथेंस और रोम में कितने लम्बे और कठिन संघर्ष के बाद वह गोत्रों पर आधारित पुराने संघटन का स्थान ले सका था।

दूसरा विभेदक लक्षण यह है कि एक सार्वजनिक सत्ता की स्थापना की जाती है, जिसका एक सशस्त्र शक्ति के रूप में अपने को स्वयं संगठित करनेवाली जनता से सीधे-सीधे मेल नहीं रह जाता। यह विशिष्ट सार्वजनिक सत्ता इसलिए आवश्यक हो जाती है कि समाज के वर्गों में बट जाने के बाद आबादी का स्वतःकार्यकारी सशस्त्र संघटन असम्भव हो जाता है। दास भी आबादी के एक भाग थे; एथेंस के ९०,००० नागरिक ३,६५,००० दासों के मुकाबले में एक विशेषाधिकारप्राप्त वर्ग मात्र थे। एथेंस के लोकतंत्र की जन-सेना वास्तव में दासों के विरुद्ध अभिजात वर्ग की सार्वजनिक सत्ता थी, जो दासों को नियंत्रण में रखती थी। लेकिन उसके साथ-साथ, जैसा कि हम ऊपर बता चुके हैं, नागरिकों को नियंत्रण में रखने के लिये पुलिस भी आवश्यक हो गयी थी। यह सार्वजनिक सत्ता हर राज्य में होती है। उसमें केवल हथियारबन्द लोग ही नहीं, बल्कि जेलखाने तथा विभिन्न प्रकार की दमनकारी संस्थाएं, आदि भौतिक साधन भी शामिल होते हैं, जिनका गोत्र-समाज में निशान तक न था। जिन समाजों में वर्ग-विरोध अभी बहुत अविकसित अवस्था में हैं और जो बहुत दूर बसी कोनों में बसे हैं,

यह सार्वजनिक सत्ता बहुत महत्त्वहीन और नही के बराबर हो सकती है। संयुक्त राज्य अमरीका के कुछ हिस्सो में किसी समय ऐसी ही हालत पायी जाती थी। परन्तु जैसे-जैसे राज्य के अंदर वर्ग-विरोध उग्र होते जाते हैं और जैसे-जैसे पड़ोस के राज्य विशाल होते जाते हैं और उनकी आबादी बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे यह सार्वजनिक सत्ता भी मजबूत होती जाती है। इसके लिये हमारे वर्तमान काल के यूरोप पर एक नजर डाल लेना काफी है, जहा वर्ग-संघर्ष तथा देश-विजय की होड़ ने इस सार्वजनिक सत्ता को ऐसा विराट रूप दे डाला है कि वह पूरे समाज को और स्वयं राज्य को निगल जाना चाहती है।

इस सार्वजनिक सत्ता को कायम रखने के लिये नागरिकों से पैसा—कर वसूल करना आवश्यक हो जाता है। गोत्र-समाज करो से सर्वथा अपरिचित था, परन्तु हमारा उनसे आज काफ़ी परिचय हो चुका है। जैसे-जैसे सभ्यता आगे बढती जाती है, वैसे-वैसे ये कर नाकाफी होते जाते है, तब राज्य भविष्य को दाव पर लगाता है, उधार लेता है। इस तरह सार्वजनिक क़र्जों का श्रीगणेश हुआ। बूढा यूरोप इनके बारे मे भी एक पूरी कहानी सुना सकता है।

सार्वजनिक सत्ता तथा कर लगाने और वसूल करने के अधिकार को अपने हाथ में लेकर राज्याधिकारी अब समाज के अवयव के रूप में, समाज के ऊपर हो जाते हैं। गोत्र-समाज के अधिकारियो को स्वेच्छा से और स्वतंत्र रूप से जो सम्मान दिया जाता था, वह इन अधिकारियो को मिल भी जाता, तो वे उससे संतुष्ट नही होते। एक ऐसी सत्ता के वाहक होने के नाते, जो समाज के लिए परायी है, यह जरूरी हो जाता है कि असाधारण क़ानून बनाकर जो उनको एक विशेष प्रकार की पवित्रता और अलघ्यता प्रदान करते हो, लोगो को उनका सम्मान करने के लिए मजबूर किया जाये। सभ्य राज्य के अदना से अदना पुलिस कर्मचारी को जितनी "प्रतिष्ठा" मिली होती है, उतनी गोत्र-समाज की तमाम संस्थाओं को मिलाकर नहीं मिली थी। परन्तु गोत्र-समाज के छोटे से छोटे मुखिया को बिना किसी दबाव के और निर्विवाद रूप से जो सम्मान मिलता था, उस पर सभ्यता के युग के सबसे अधिक शक्तिशाली राजा और बडे से बड़े राजनीतिज्ञ या सेनापति ईर्ष्या कर सकते हैं। एक समाज के बीच रहता है, दूसरा अपने को समाज से बाहर और समाज से ऊपर दिखाने की कोशिश करने के लिये बाध्य है।

राज्य चूंकि वर्ग-विरोध पर अंकुश रखने के लिये पैदा हुआ था और साथ ही चूंकि वह इन वर्गों के संघर्ष के बीच पैदा हुआ था, इसलिये वह निरपवाद रूप से सबसे अधिक शक्तिशाली, आर्थिक क्षेत्र में प्रभुत्वशील वर्ग का राज्य होता है। यह वर्ग राज्य के ज़रिये, राजनीतिक क्षेत्र मे भी प्रभुत्वशील हो जाता है और इस प्रकार उसे उत्पीड़ित वर्ग को दवाकर रखने तथा उसका शोषण करने के लिये नया साधन मिल जाता है। इस प्रकार प्राचीन काल का राज्य सर्वोपरि दास-स्वामियो का राज्य था जिसका उद्देश्य दासो को दवाकर रखना था, इसी प्रकार, सामन्ती राज्य अभिजात वर्ग का निकाय था, जिसका उद्देश्य भूदास किसानों तथा बंधुओ को दबाकर रखना था और आधुनिक प्रातिनिधिक राज्य पूंजी द्वारा उजरती श्रम के शोषण का साधन है। परन्तु अपवादस्वरूप कुछ ऐसे काल भी आते हैं जब संघर्षरत वर्गों का शक्ति-संतुलन इतना बराबर हो जाता है कि राज्य-सत्ता एक दिखावटी पंच के रूप में, उस समय के लिए, कुछ मात्रा में दोनों वर्गो से स्वतंत्र हो जाती है। सत्रहवी और अठारहवी सदियो का निरंकुश राजतंत्र ऐसा ही था, जो अभिजात वर्ग तथा बर्गर वर्ग के बीच संतुलन कायम रखता था। पहले की, और उससे भी अधिक दूसरे फ़ांसीसी साम्राज्य की बोनापार्तशाही भी ऐसी ही थी, जो सर्वहारा और पूजीपति वर्ग के बीच बन्दर-बाट का खेल खेलती रहती थी। इस प्रकार का सबसे नया उदाहरण, जिसमें शासक और शासित समान रूप से हास्यास्पद नजर आते हैं, बिस्मार्क के राष्ट्र का नया जर्मन साम्राज्य है। यहा पूजीपतियों और मज़दूरो के बीच संतुलन रखा जाता है और दोनो को समान रूप से धोखा देकर प्रशा के दिवालिया ज़मीदारों का उल्लू सीधा किया जाता है।

इसके अलावा, इतिहास में अभी तक जितने राज्य हुए है, उनमे से अधिकतर मे नागरिकों को उनकी दौलत के अनुसार कम या ज्यादा अधिकार दिये गये हैं, जिससे यह बात सीधी तौर पर जाहिर हो जाती है कि राज्य मिल्की वर्ग का एक संगठन है जिसका मकसद गैर-मिल्की वर्ग से उसकी हिफ़ाज़त करना है। एथेंस और रोम में ऐसा ही था, जहा नागरिकों का वर्गीकरण मिल्कीयत के अनुसार किया जाता था। मध्ययुगीन सामन्ती राज्य में भी यही हालत थी जहां जिसके पास जितनी जमीन होती थी, उसके हाथ मे उतनी ही राजनीतिक ताकत होती थी। आधुनिक प्रतिनिधियुक्त राज्यों मे जो मताधिकार-अर्हता पायी जाती है, उसमें भी यह बात साफ

दिखायी देती है। तिस पर भी सम्पत्ति के भेदों की राजनीतिक मान्यता अनिवार्य किसी भी प्रकार नही है: इसके विपरीत, वह राज्य के विकास के निम्न स्तर की द्योतक है। राज्य का सबसे ऊंचा रूप, यानी जनवादी जनतंत्र, जो समाज की आधुनिक परिस्थितियो मे अनिवार्यतः आवश्यक बनता जा रहा है और जो राज्य का वह एकमात्र रूप है जिसमें ही सर्वहारा तथा पूंजीपति वर्ग का अन्तिम और निर्णायक संघर्ष लड़ा जा सकता है- यह जनवादी जनतंत्र औपचारिक रूप से सम्पत्ति के अन्तर का कोई खयाल नही करता। उसमें दौलत अप्रत्यक्ष रूप से, पर और भी ज्यादा कारगर ढंग से, अपना असर डालती है। एक तो दौलत सीधे-सीधे राज्य के अधिकारियों को भ्रष्ट करती है, जिसका सबसे अच्छा उदाहरण अमरीका है। दूसरे, सरकार तथा स्टॉक एक्सचेंज के बीच गठबंधन हो जाता है। जितना ही सार्वजनिक क़र्जा बढ़ता जाता है और जितनी ही अधिक ज्वाइंट स्टॉक कम्पनिया स्टॉक एक्सचेंज को अपने केन्द्र के रूप में इस्तेमाल करते हुए न केवल यातायात को, बल्कि उत्पादन को भी अपने हाथ में केन्द्रित करती जाती हैं, उतनी ही अधिक आसानी से यह गठबंधन होता जाता है। अमरीका और उसी तरह नवीनतम फ़्रांसीसी जनतंत्र इसके ज्वलत उदाहरण है और किसी जमाने में स्विट्ज़रलैंड ने भी इस क्षेत्र मे काफी मार्के की कामयाबी हासिल की है। परन्तु सरकार तथा स्टॉक एक्सचेंज में यह बंधुत्व-पूर्ण गठबंधन स्थापित करने के लिये जनवादी जनतंत्र आवश्यक नही है। इसके प्रमाण मे इंगलैंड और नवीन जर्मन साम्राज्य की मिसाल दी जा सकती है, जहा कोई नही कह सकता कि सार्विक मताधिकार लागू करने से किसका स्थान अधिक ऊंचा हुआ है—बिस्मार्क का या ब्लाइख़रोडर का। अन्तिम बात यह है कि मिल्की वर्ग सार्विक मताधिकार के द्वारा सीधे शासन करता है। जब तक कि उत्पीडित वर्ग, यानी आजकल सर्वहारा वर्ग, इतना परिपक्व नही हो जाता कि अपने को स्वतंत्र करने के योग्य हो जाये, तब तक उसका अधिकांश भाग वर्तमान सामाजिक व्यवस्था को ही एकमात्र सम्भव व्यवस्था समझता रहेगा और इसलिये वह राजनीतिक रूप से पूंजीपति वर्ग का दुमछल्ला, उसका उग्र वामपक्ष बना रहेगा। लेकिन जिस हद तक यह वर्ग परिपक्व होकर स्वयं अपने को मुक्त करने के योग्य बनता जाता है, उसी हद तक वह अपने को खुद अपनी पार्टी के रूप में सगठित करता है, और पूंजीपतियों के नही, बल्कि खुद अपने प्रतिनिधि चुनता

है। अतएव, सार्विक मताधिकार मजदूर वर्ग की परिपक्वता की कसौटी है। वर्तमान राज्य मे वह इससे अधिक कुछ नही है और न कभी हो सकता है; परन्तु इतना काफ़ी है। जिस दिन सार्विक मताधिकार का थर्मामीटर यह सूचना देगा कि मजदूरों में उबाल आनेवाला है, उस दिन मजदूर तथा पूंजीपति दोनों जान जायेंगे कि उन्हें क्या करना है।

अतएव, राज्य अनादि काल से नही चला आ रहा है। ऐसे समाज भी हुए है जिन्होंने बिना राज्य के अपना काम चलाया और जिन्हे राज्य और राज्य-सत्ता की कोई धारणा न थी। आर्थिक विकास की एक निश्चित अवस्था मे, जो समाज के वर्गों मे बंट जाने के साथ अनिवार्य रूप से जुड़ा हुआ था, इस बंटवारे के कारण राज्य अनिवार्य बन गया। अब हम उत्पादन के विकास की ऐसी अवस्था की ओर तेजी से बढ़ रहे हैं, जिसमे इन वर्गों का अस्तित्व न केवल आवश्यक नही रहेगा, बल्कि उत्पादन के लिये निश्चित रूप से एक बाधा बन जायेगा। तब इन वर्गों का उतने ही अवश्यम्भावी ढंग से विनाश हो जायेगा जितने अवश्यम्भावी ढंग से एक पहले वाली अवस्था में उनका जन्म हुआ था। उनके साथ-साथ राज्य भी अनिवार्य रूप से मिट जायेगा। जो समाज उत्पादकों के स्वतंत्र तथा समान सहयोग की बुनियाद पर उत्पादन का संगठन करेगा, वह समाज राज्य की पूरी मशीनरी को उठाकर उस स्थान में रख देगा जो उस समय उसके लिये सबसे उपयुक्त होगा: यानी वह राज्य को हाथ के चर्खे और कांसे की कुल्हाड़ी के साथ-साथ प्राचीन वस्तुओं के अजायबघर में रख देगा।

* * *

इस प्रकार, उपरोक्त विश्लेषण यह बताता है कि सभ्यता समाज के विकास की वह अवस्था है, जिसमे श्रम-विभाजन, उसके परिणामस्वरूप व्यक्तियों के बीच होनेवाला विनिमय और इन दोनों चीजों को मिलानेवाला माल-उत्पादन अपने पूर्ण विकास पर पहुंच जाते हैं और पहले से चलते आये पूरे समाज को क्रान्तिकारी रूप से बदल डालते हैं।

समाज की पहलेवाली सभी अवस्थाओं में उत्पादन मूलभूत रूप से सामूहिक था और इसलिये उसे उपभोग के लिये, छोटे या बड़े आदिम सामुदायिक कुटुम्बों मे, सीधे-सीधे बांट लिया जाता था। यह साझे का उत्पादन अत्यन्त संकुचित सीमाओं के भीतर होता था, परन्तु साथ ही उसमे उत्पादकगण उत्पादन की क्रिया के और अपनी पैदावार के खुद मालिक

रहते थे। वे जानते थे कि उनकी पैदावार का क्या होता है। वे उसका उपभोग करते थे, वह उनके हाथ में ही रहती थी। जब तक इस आधार पर उत्पादन चलता रहा, तब तक वह उत्पादकों के नियंत्रण से बाहर नहीं निकल पाया और उनके खिलाफ वैसी अजीव, प्रेत शक्तियो को नहीं खड़ा कर सका, जैसी कि सभ्यता के युग में नियमित और अवश्यम्भावी रूप से खड़ी होती रहती हैं।

परन्तु धीरे-धीरे उत्पादन की इस क्रिया मे श्रम-विभाजन घुस आया। उसने उत्पादन तथा हस्तगतीकरण के सामूहिक रूप की नीव खोद डाली। उसने अलग-अलग व्यक्तियो द्वारा हस्तगतीकरण को मुख्यतया प्रचलित नियम बना दिया और इस प्रकार व्यक्तियो के बीच विनिमय का श्रीगणेश किया। यह सब कैसे हुआ, यह हम ऊपर देख चुके है। धीरे-धीरे माल-उत्पादन मुख्य रूप बन गया।

माल-उत्पादन शुरू होने पर जब उत्पादन खुद उत्पादक के उपयोग के लिये नही, बल्कि विनिमय के लिये होता है, तब पैदावार का एक हाथ से दूसरे हाथ मे जाना अनिवार्य हो जाता है। विनिमय के दौरान उत्पादक के हाथ से उसकी पैदावार निकल जाती है। अब वह नही जानता कि उसकी पैदावार का क्या हुआ। और जैसे ही मुद्रा तथा उसके साथ व्यापारी आकर उत्पादको के बीच बिचवइये के रूप में खड़े हो जाते हैं, वैसे ही विनिमय की क्रिया और भी अधिक जटिल हो जाती है और पैदावार का अन्त में क्या होगा, यह बात और भी अनिश्चित बन जाती है। व्यापारियों की संख्या बहुत बड़ी होती है और एक व्यापारी यह नही जानता कि दूसरा क्या कर रहा है। अब माल एक हाथ से निकलकर दूसरे हाथ मे ही नही जाता है, बल्कि वह एक बाजार से दूसरे बाजार मे भी घूमता रहता है। अब उत्पादको का अपने जीवन के लिये आवश्यक वस्तुओ के कुल उत्पादन पर नियंत्रण नही रह गया है और व्यापारियों के हाथ मे भी यह नियंत्रण नहीं आया है। उपज और उत्पादन संयोग के अधीन हो जाते हैं।

किन्तु संयोग अन्तर्सम्बन्ध का एक छोर है, जिसका दूसरा छोर आवश्यकता कहलाता है। प्रकृति में भी संयोग का राज मालूम पड़ता है, परन्तु हम बहुत दिन हुए उसके हर क्षेत्र में यह दिखा चुके है कि इस संयोग के आवरण में अन्तर्निहित आवश्यकता और नियमितता काम करती है। पर

जो प्रकृति के लिये सत्य है, वही समाज के लिये भी सत्य है। किसी सामाजिक क्रिया पर, या सामाजिक क्रियाओं के किसी क्रम पर मनुष्यों का सचेत नियन्त्रण रखना जितना ही अधिक कठिन बनता जाता है, जितनी ही ये क्रियायें मनुष्यों के नियंत्रण के बाहर निकलती जाती हैं, उतना ही अधिक यह मालूम पड़ता है कि ये क्रियायें केवल संयोगवश घटित होती हैं और उतना ही अधिक इनमे निहित विशिष्ट नियम इस संयोग के रूप मे प्रकट होते हैं, मानो ये क्रियायें स्वाभाविक आवश्यकता के कारण हो रही हो। माल-उत्पादन तथा विनिमय मे जो सायोगिकता दिखायी देती है, वह भी ऐसे ही नियमो के अधीन है। अलग-अलग उत्पादको और विनिमय कर्त्ताओं को ये नियम एक विचित्र, और आरम्भ मे अज्ञात शक्ति मालूम पडते हैं, जिसकी असलियत का पता लगाने के लिए पहले बड़ी मेहनत के साथ खोज और छान-बीन करना आवश्यक होता है। माल-उत्पादन के आर्थिक नियम, उत्पादन के इस रूप के विकास की प्रत्येक अवस्था मे थोड़ा बहुत बदल जाते हैं। लेकिन मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि सभ्यता के पूरे युग मे ये नियम हावी रहे हैं। आज भी उपज उत्पादक के ऊपर हावी है; आज भी समाज का कुल उत्पादन किसी ऐसी योजना के अनुसार नही होता जिसे सामूहिक रूप से सोच-विचार कर तैयार किया गया हो, बल्कि वह अंधे नियमों द्वारा नियमित होता है जो प्राकृतिक शक्तियों की तरह काम करते हैं और अन्त में जाकर समय-समय पर आनेवाले व्यापारिक संकटो के तूफ़ानों के रूप मे प्रगट होते हैं।

हम ऊपर देख चुके हैं कि किस प्रकार उत्पादन के विकास की अपेक्षाकृत आरम्भ की ही एक अवस्था में मानव श्रम-शक्ति इस योग्य बन गयी थी कि उत्पादक के जीवन-निर्वाह के लिए जितना जरूरी था, उससे काफ़ी ज्यादा पैदा कर सके, और किस प्रकार, प्रधानतया इसी अवस्था में, श्रम-विभाजन और अलग-अलग व्यक्तियों के बीच विनिमय समाज मे पहली बार प्रगट हुआ था। अस्तु इसके कुछ ही समय के बाद इस महान् "सत्य" का भी आविष्कार हो गया कि स्वयं मनुष्य भी बिकाऊ माल हो सकता है, मनुष्य को दास बनाकर मानव-शक्ति का भी विनिमय और उपयोग किया जा सकता है। मनुष्यों ने विनिमय करना आरम्भ ही किया था कि खुद उनका भी विनिमय होना शुरू हो गया। इंसान ने यह चाहा हो या न चाहा हो, पर हुआ यही कि जो पहले साधक था वह अब साधन बन गया।

15—410

दास-प्रथा के साथ-साथ, जो सभ्यता के युग में अपने विकास के शिखर पर पहुंची थी, समाज का पहली बार शोषक और शोषित वर्गों में बड़ा विभाजन हुआ। यह विभाजन सभ्यता के पूरे युग में बराबर कायम रहा है। शोषण का पहला रूप दास-प्रथा था, जो प्राचीन काल के लिये विशिष्ट था। उसके बाद मध्य युग मे भूदास-प्रथा और आधुनिक काल में उजरती श्रम की प्रथा आयी। सभ्यता के तीन बड़े युगों की विशेषताओं के रूप मे अधीनता के ये तीन बड़े रूप रहे हैं; खुली, और बाद मे छिपी हुई दासता बराबर उनके साथ-साथ चलती आयी है।

सभ्यता का युग माल-उत्पादन की जिस अवस्था से आरम्भ हुआ था, उसकी आर्थिक विशेषताएं ये थीं: (१) धातु से बनी मुद्रा इस्तेमाल होने लगी थी और इस प्रकार मुद्रा के रूप मे पूंजी, सूद तथा सूदख़ोरी का चलन हो गया था; (२) उत्पादकों के बीच मे बिचवई करनेवाले व्यापारी आकर खड़े हो गये थे; (३) जमीन पर निजी स्वामित्व क़ायम हो गया था और रेहन की प्रथा जारी हो गयी; (४) उत्पादन का मुख्य रूप दास-श्रम का उत्पादन बन गया था। सभ्यता के युग के अनुरूप परिवार का रूप, जो इस युग में निश्चित तौर पर प्रचलित रूप बन गया, वह एक एकनिष्ठ विवाह है, पुरुष का स्त्री पर प्रभुत्व रहता है और हर अलग-अलग परिवार समाज की आर्थिक इकाई होता है। सभ्य समाज की संलागी शक्ति राज्य है, जो सामान्य कालों मे केवल शासक वर्ग का राज्य होता है और जो बुनियादी तौर पर सदा उत्पीड़ित एवं शोषित वर्ग को दबाकर रखने के यंत्र का काम करता है। सभ्यता की अन्य विशेषतायें ये है: एक ओर तो पूरे सामाजिक श्रम-विभाजन के आधार के रूप में शहर व देहात के बीच स्थायी विरोध क़ायम हो जाता है; दूसरी ओर वसीयत की प्रथा जारी हो जाती है, जिसके ज़रिये सम्पत्ति का मालिक अपनी मृत्यु के बाद भी अपनी जायदाद का जैसे चाहे निपटारा कर सकता है। यह प्रथा जो पुराने गोत्र-संघटन पर सीधे-सीधे प्रहार करती थी, सोलन के समय तक एथेंस में अज्ञात थी। रोम में वह प्रारंभिक काल में ही जारी हो गयी थी, पर हम ठीक-ठीक नही कह सकते कि कब हुई थी*; जर्मनों मे वसीयतनामे

---

* लासाल की पुस्तक 'अर्जित अधिकारों की व्यवस्था'[163] के दूसरे भाग का आधार मुख्यतया यह प्रस्थापना है कि रोम मे वसीयत की प्रथा

की प्रथा पादरियों ने जारी की थी, ताकि नेकी और सचाई की राह पर चलनेवाले जर्मन बिना किसी बाधा के अपनी सम्पत्ति गिरजाघर के नाम कर सके।

इस विधान को अपनी नीव बनाकर सभ्यता ने ऐसे-ऐसे काम कर दिखाये हैं, जो पुराने गोत्र-समाज की सामर्थ्य के बिलकुल बाहर थे। परन्तु ये काम उसने किये मनुष्य की सबसे नीच अन्तर्वृत्तियों और आवेगों को उभाड़कर और उन्हें इस प्रकार विकसित कर कि उसकी अन्य सभी क्षमतायें दब जायें। सभ्यता के अस्तित्व के पहले दिन से लेकर आज तक नग्न लोभ ही उसकी मूल प्रेरणा रहा है। धन कमाओ, और धन कमाओ और जितना बन सके उतना कमाओ! समाज का धन नही, एक अकेले क्षुद्र व्यक्ति का धन–बस यही सभ्यता का एकमात्र और निर्णायक उद्देश्य रहा है। यदि इस उद्देश्य को पूरा करने की कोशिशों के दौरान विज्ञान का अधिकाधिक विकास होता गया और समय-समय पर कला के पूर्णतम विकास के युग भी बार-बार आते रहे, तो इसका कारण केवल यह था कि धन बटोरने में आज जो भारी सफलतायें प्राप्त हुई हैं, वे विज्ञान और कला की इन उपलब्धियो के बिना प्राप्त नही की जा सकती थी।

सभ्यता का आधार चूंकि एक वर्ग का दूसरे वर्ग द्वारा शोषण है, इसलिये उसका सम्पूर्ण विकास सदा अविरत अंतर्विरोध के अविच्छिन्न क्रम मे होता रहा है। उत्पादन में हर प्रगति साथ ही साथ उत्पीड़ित वर्ग की, यानी समाज के बहुसंख्यक भाग की अवस्था मे पश्चादगति भी होती है।

उतनी ही पुरानी है जितना पुराना खद रोम है, कि रोम के इतिहास मे "ऐसा कोई समय नही रहा है जब वसीयतनामे न होते रहे हों," बल्कि सच बात तो यह है कि वसीयत की प्रथा पूर्वरोमन काल में मृतात्माओं की पूजा से उत्पन्न हुई थी। पुराने ढग के कट्टर हेगेलवादी होने के नाते लासाल ने रोमन क़ानून की व्यवस्थाओं का स्रोत रोमवासियों की सामाजिक अवस्थाओं को नही, बल्कि इच्छा की "परिकल्पी अवधारणा को" माना और इसलिये इस सर्वथा ग़ैर-ऐतिहासिक निष्कर्ष पर पहुंचे। पर जिस किताब में इसी परिकल्पी अवधारणा के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया हो कि सम्पत्ति के हस्तांतरण का रोमन उत्तराधिकार प्रथा में केवल एक गौण स्थान था, उसमें यदि यह बात लिखी गयी हो तो कोई आश्चर्य की बात नही है। लासाल न केवल रोमन न्यायशास्त्रियों की, विशेषकर पहले के काल के न्यायशास्त्रियो की, भ्रान्त धारणाओं में विश्वास करते हैं, बल्कि इस मामले मे उनसे भी आगे निकल जाते है। (एंगेल्स का नोट)

दास-प्रथा के साथ-साथ, जो सभ्यता के युग में अपने विकास के शिखर पर पहुची थी, समाज का पहली बार शोषक और शोषित वर्गो मे बड़ा विभाजन हुआ। यह विभाजन सभ्यता के पूरे युग मे बराबर कायम रहा है। शोषण का पहला रूप दास-प्रथा था, जो प्राचीन काल के लिये विशिष्ट था। उसके बाद मध्य युग मे भूदास-प्रथा और आधुनिक काल मे उजरती श्रम की प्रथा आयी। सभ्यता के तीन बड़े युगों की विशेषताओं के रूप मे अधीनता के ये तीन बड़े रूप रहे हैं; खुली, और बाद में छिपी हुई दासता बराबर उनके साथ-साथ चलती आयी है।

सभ्यता का युग माल-उत्पादन की जिस अवस्था से आरम्भ हुआ था, उसकी आर्थिक विशेषताएं ये थी: (१) धातु से बनी मुद्रा इस्तेमाल होने लगी थी और इस प्रकार मुद्रा के रूप मे पूजी, सूद तथा सूदखोरी का चलन हो गया था; (२) उत्पादकों के बीच में बिचवई करनेवाले व्यापारी आकर खड़े हो गये थे; (३) ज़मीन पर निजी स्वामित्व क़ायम हो गया था और रेहन की प्रथा जारी हो गयी; (४) उत्पादन का मुख्य रूप दास-श्रम का उत्पादन बन गया था। सभ्यता के युग के अनुरूप परिवार का रूप, जो इस युग मे निश्चित तौर पर प्रचलित रूप बन गया, वह एकनिष्ठ विवाह है, पुरुष का स्त्री पर प्रभुत्व रहता है और हर अलग-अलग परिवार समाज की आर्थिक इकाई होता है। सभ्य समाज की संलागी शक्ति राज्य है, जो सामान्य कालो में केवल शासक वर्ग का राज्य होता है और जो बुनियादी तौर पर सदा उत्पीडित एवं शोषित वर्ग को दबाकर रखने के यंत्र का काम करता है। सभ्यता की अन्य विशेषतायें ये हैं: एक ओर तो पूरे सामाजिक श्रम-विभाजन के आधार के रूप मे शहर व देहात के बीच स्थायी विरोध क़ायम हो जाता है; दूसरी ओर वसीयत की प्रथा जारी हो जाती है, जिसके ज़रिये सम्पत्ति का मालिक अपनी मृत्यु के बाद भी अपनी जायदाद का जैसे चाहे निपटारा कर सकता है। यह प्रथा जो पुराने गोत्र-संघटन पर सीधे-सीधे प्रहार करती थी, सोलन के समय तक एथेंस में अज्ञात थी। रोम मे वह प्रारंभिक काल मे ही जारी हो गयी थी, पर हम ठीक-ठीक नही कह सकते कि कब हुई थी*; जर्मनों में वसीयतनामे

* लासाल की पुस्तक 'अर्जित अधिकारो की व्यवस्था'[163] के दूसरे भाग का आधार मुख्यतया यह प्रस्थापना है कि रोम मे वसीयत की प्रथा

की प्रथा पादरियों ने जारी की थी, ताकि नेकी और सचाई की राह पर चलनेवाले जर्मन बिना किसी बाधा के अपनी सम्पत्ति गिरजाघर के नाम कर सकें।

इस विधान को अपनी नींव बनाकर सभ्यता ने ऐसे-ऐसे काम कर दिखाये हैं, जो पुराने गोत्र-समाज की सामर्थ्य के बिलकुल बाहर थे। परन्तु ये काम उसने किये मनुष्य की सबसे नीच अन्तर्वृत्तियों और आवेगों को उभाड़कर और उन्हें इस प्रकार विकसित कर कि उसकी अन्य सभी क्षमतायें दब जायें। सभ्यता के अस्तित्व के पहले दिन से लेकर आज तक नग्न लोभ ही उसकी मूल प्रेरणा रहा है। धन कमाओ, और धन कमाओ और जितना *बन सके उतना कमाओ! समाज का धन नहीं, एक अकेले क्षुद्र व्यक्ति* का धन—बस यही सभ्यता का एकमात्र और निर्णायक उद्देश्य रहा है। यदि इस उद्देश्य को पूरा करने की कोशिशों के दौरान विज्ञान का अधिकाधिक विकास होता गया और समय-समय पर कला के पूर्णतम विकास के युग भी बार-बार आते रहे, तो इसका कारण केवल यह था कि धन बटोरने मे आज जो भारी सफलतायें प्राप्त हुई हैं, वे विज्ञान और कला की इन उपलब्धियों के बिना प्राप्त नहीं की जा सकती थीं।

सभ्यता का आधार चूंकि एक वर्ग का दूसरे वर्ग द्वारा शोषण है, इसलिये उसका सम्पूर्ण विकास सदा अविरत अतर्विरोध के अविच्छिन्न क्रम मे होता रहा है। उत्पादन में हर प्रगति साथ ही साथ उत्पीड़ित वर्ग की, यानी समाज के बहुसंख्यक भाग की अवस्था मे पश्चादगति भी होती है।

उतनी ही पुरानी है जितना पुराना खद रोम है, कि रोम के इतिहास मे "ऐसा कोई समय नहीं रहा है जब वसीयतनामे न होते रहे हों," बल्कि सच बात तो यह है कि वसीयत की प्रथा पूर्वरोमन काल में मृतात्माओं की पूजा से उत्पन्न हुई थी। पुराने ढंग के कट्टर हेगेलवादी होने के नाते लासाल ने रोमन क़ानून की व्यवस्थाओं का स्रोत रोमवासियों की सामाजिक अवस्थाओं को नहीं, बल्कि इच्छा की "परिकल्पी अवधारणा को" माना और इसलिये इस सर्वथा ग़ैर-ऐतिहासिक निष्कर्ष पर पहुंचे। पर जिस किताब मे इसी परिकल्पी अवधारणा के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया हो कि सम्पत्ति के हस्तांतरण का रोमन उत्तराधिकार प्रथा मे केवल एक गौण स्थान था, उसमें यदि यह बात लिखी गयी हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। लासाल न केवल रोमन न्यायशास्त्रियों की, विशेषकर पहले के काल के न्यायशास्त्रियों की, भ्रान्त धारणाओं में विश्वास करते है, बल्कि इस मामले मे उनसे भी आगे निकल जाते हैं। (एंगेल्स का नोट)

एक के लिये जो वरदान है, वह दूसरे के लिये ग्रावश्यक रूप से अभिशाप बन जाता है। जब भी किसी वर्ग को नयी स्वतंत्रता मिलती है, तो वह किसी दूसरे वर्ग के लिये नये उत्पीड़न का कारण बन जाती है। इसकी सबसे अच्छी मिसाल मशीनो के प्रयोग के रूप मे हमे मिलती है, जिसके परिणामों से ग्राज सभी लोग अच्छी तरह परिचित हैं। जहां, जैसा कि हम देख चुके है, बर्बर *लोगो मे अधिकारों और कर्त्तव्यो के बीच भेद* की कोई रेखा नही खीची जा सकती थी, वही सभ्यता एक वर्ग को लगभग सारे अधिकार देकर और दूसरे वर्ग पर लगभग सारे कर्त्तव्यो का बोझ लादकर अधिकारो और कर्त्तव्यों के भेद एवं विरोध को इतना स्पष्ट कर देती है कि मूर्ख से मूर्ख ग्रादमी भी उन्हें समझ सकता है।

लेकिन ऐसा होना नही चाहिये। जो शासक वर्ग के लिये कल्याणकारी है, उसे पूरे समाज के लिये कल्याणकारी होना चाहिये, जिससे शासक वर्ग अपने को अभिन्न समझता है। अतएव, सभ्यता जैसे-जैसे प्रगति करती है, वैसे-वैसे उसे उन बुराइयों पर जिन्हे वह ग्रावश्यक रूप से पैदा करती है, प्रेम का परदा डालना पड़ता है, उन पर क़लई करनी होती है, या फिर उनके अस्तित्व से इनकार करना पड़ता है। संक्षेप में, सभ्यता को ढोंग व मिथ्याचार का चलन ग्रारम्भ करना पड़ता है, जो पुरानी सामाजिक व्यवस्थाग्रो में, और यहा तक कि सभ्यता की प्रारम्भिक अवस्थाओ में भी, अज्ञात था और जिसकी परिणति इस घोषणा में होती है: शोषक वर्ग *शोषित वर्ग का शोषण केवल और सर्वथा स्वयं शोषितो के कल्याण के लिये* करता है, और यदि शोषित वर्ग इस सत्य को नही देख पाता और विद्रोही तक बन जाता है, तो इस तरह वह अपने हितैषियों के, शोषकों के प्रति हद दर्जे की कृतघ्नता का ही परिचय देता है।*

और अब अन्त मे मैं सभ्यता के बारे मे मोर्गन का निर्णय उद्धृत कर दूं:

---

* शुरू मे मेरा इरादा यह था कि सभ्यता की जो अद्भुत समीक्षा फ़ूरिये की रचनाओ में बिखरी हुई मिलती है, उसे मोर्गन की तथा अपनी ग्रालोचना के साथ-साथ पेश करूं। पर दुर्भाग्यवश इसके लिये समय निकालना असम्भव है। मैं केवल यही कहना चाहता हूं कि फ़ूरिये ने एक एकनिष्ठ विवाह तथा भूमि पर निजी स्वामित्व को सभ्यता की मुख्य विशेषतायें माना था और उसे ग़रीबो के खिलाफ़ धनिको का युद्ध कहा

"सम्यता के आने के बाद से सम्पत्ति इतने विशाल पैमाने पर बढ़ी है, उसके इतने विविध रूप हो गये है, उसके इस्तेमाल के ढंग इतने अधिक हो गये है और उसका प्रबंध उसके मालिक अपने हित मे इतनी बुद्धिमानी से करने लगे है कि वह जनता के लिये एक **दुर्द्धर्ष शक्ति बन गयी है। खुद अपनी कृति के सामने आज मानव मस्तिष्क हतबुद्धि-सा खड़ा है।** परन्तु एक दिन वह समय आयेगा जब मानव बुद्धि सम्पत्ति को अपने वश मे करने में सफल होगी और जिस सम्पत्ति की राज्य रक्षा करता है, उसके साथ राज्य के सम्बन्ध को निरूपित करने में तथा उसके मालिकों के कर्त्तव्यों को और उनके अधिकारों की सीमाओं को निश्चित करने में कामयाब होगी। समाज के हित व्यक्ति के हितों से ऊंचे हैं और इन दोनों के बीच न्यायोचित एवं सामंजस्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक है। यदि भूत काल की तरह भविष्य काल का भी नियम प्रगति का होना है, तो केवल साम्पत्तिक जीवन ही मानवजाति का अन्तिम भविष्य नहीं हो सकता। जब से सभ्यता आरम्भ हुई है, तब से जो समय गुज़रा है, वह मनुष्य के पिछले इतिहास का एक छोटा-सा टुकड़ा भर है और वह आनेवाले युगों का भी एक छोटा-सा टुकड़ा ही है। सम्पत्ति बटोरना ही जिस का लक्ष्य और ध्येय है, उसका अन्त समाज के विघटन में होना है, क्योंकि ऐसा जीवन अपने विनाश के तत्वों को अपने अन्दर छिपाये रहता है। शासन में लोकतंत्र, समाज मे भ्रातृत्व, समान अधिकार तथा सार्वजनिक शिक्षा समाज की अगली, उच्चतर अवस्था के पूर्वसूचक हैं, जिसकी ओर अनुभव, बुद्धि और ज्ञान लगातार ले जा रहे है। **यह प्राचीन गोत्रों की स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व का पहले से उच्चतर रूप में पुनर्जन्म होगा।**" (मौर्गन, 'प्राचीन समाज', पृष्ठ ५५२।)[161]

मार्च के अंत–२६ मई, १८८४, मे लिखित। अलग किताब के रूप में १८८४ मे ज़ूरिच से प्रकाशित।
हस्ताक्षर: फ्रेडरिक एंगेल्स

१८९१ के चौथे जर्मन संस्करण के मूलपाठ के अनुसार मुद्रित।
मूल जर्मन

था। इसके अलावा उनकी रचनाओ मे इस सत्य की भी गहरी समझ प्रकट होती है कि इस तरह के सभी समाजो मे, जो अपरिपूर्ण है और जो परस्पर विरोधी हितों से विदीर्ण है, अलग-अलग परिवार (les familles incohérentes) समाज की आर्थिक इकाई होते है। (**एंगेल्स का नोट**)

टिप्पणियां

[1] यहां इशारा कार्ल मार्क्स द्वारा मौर्गन के 'प्राचीन समाज' के बारे मे बनाये गये नोट्स से है। – पृ० ६

[2] E. A. Freeman. *Comparative Politics.* London, 1873. – पृ० ११

[3] E. B. Tylor. *Researches into the Early History of Mankind and the Development of Civilization.* London, 1865 – पृ० १४

[4] J.J. Bachofen. *Das Mutterrecht. Eine Untersuchung über die Gynaikokratie der alten Welt nack ihrer religiosen und rechtlichen Natur».* Stuttgart, 1861. – पृ० १४

[5] Aeschylus, *Oresteia,* Eumenides. – पृ० १६

[6] J.F. Mac-Lennan. *Studies in Ancient History comprising a Reprint of Primitive Marriage. An Inquiry into the Origin of the Form of Capture in Marriage Ceremonies* London, New York, 1886. p. 124-125 – पृ० १८

[7] R. G. Latham. *Discriptive Ethnology.* Vol. I-II, London, 1859. – पृ० १८

[8] L.H. Morgan. *League of the Ho-dé-no-sau-nee or Iroquois.* Rochester, 1851. – पृ० २०

[9] J. Lubbock. *The Origin of Civilisation and the Primitive Condition of Man Mental and Social Condition of Savages* London, 1870. – पृ०२२

[10] L. H. Morgan. *Systems of Consanguinity and Affinity of the Human Family.* Washington, 1871.—पृ० २२

[11] P. C. Tacitus, *De Origine, Setu, Moribus as Populus Germanorum* और G. T. Caesar, Cammentarii de Bello Galiso. —पृ० २३

[12] A. Giraud-Teulon. *Les origines de la famille.* Genéve, Paris, 1874. J. Lubbock. *The Origin of Civilisation and the Primitive Condition of Man. Mental and Social Condition of Savages.* Fourth Ed. London, 1882.—पृ० २४

[13] L H. Morgan. *Ancient Society, or Researches in the Lines of Human Progress from Savagery through Barbarism to Civilization.* London, 1877.—पृ० २४

[14] L.H. Morgan. *Ancient Society.* London, 1877. p. 19-28. —पृ० २६

[15] पुएब्लो—उत्तरी अमरीका के इंडियन कबीलों का एक समूह; ये कबीले, जिनका इतिहास एक और जिनकी संस्कृति भी एक रही है, न्यू-मैक्सिको (इस समय संयुक्त राज्य अमरीका का दक्षिण-पश्चिमी भाग तथा उत्तर मैक्सिको) मे बसते थे। इस प्रदेश मे आनेवाले स्पेनी आबादकारों ने इन इंडियनों और उनके गावों को "पुएब्लो" कहना शुरू किया (जिसका अर्थ स्पेनी भाषा में जाति, समुदाय, गांव है), और इस तरह उनका नाम "पुएब्लो" पड़ गया। पुएब्लो लोग बड़े पाच-छः मंजिला सामुदायिक घरों मे रहा करते थे। हर घर छोटी-मोटी गढी जैसा होता था और उसमे लगभग एक हजार आदमी—पूरा का पूरा समुदाय—रहते थे।—पृ० ३३

[16] ओक्सस और जक्सारटिस—सिर और अमू दरियाओं के यूनानी नाम। दोन और द्नेपर—पूर्वी रूस की दो बड़ी नदियों के नाम हैं।—पृ० ३४

[17] L.H. Morgan. *Ancient Society.* London, 1877, p. 435-436.—पृ० ३६

[18] J.J. Bachofen. *Das Mutterrecht.* Stuttgart. 1861. – पृ० ४१

[19] Ch. Letourneau. *L'évolution du mariage et de la famille.* Paris. 1888. – पृ० ४२

[20] A. Giraud-Teulon. *Les origines du mariage et de la famille. Genève, Paris, 1884,* p. *XV.* – पृ० ४३

[21] E. Westermarch. *The History of Human Marriage.* London and New York, 1891. – पृ० ४३

[22] Ch. Letourneau. *L' évolution du mariage et de la famille.* p. 41. – पृ० ४३

[23] A. Espinas. *Des sociétés animales.* Paris, 1877. – पृ० ४३

[24] H.H. Bancroft. *The Native Races of the Pacific States of North America.* Vol. I-V, New York, 1875. – पृ० ४६

[25] E. Westermarch. *The History of Human Marriage.* London and New York, 1891, p.70-71. – पृ० ४७

[26] मार्क्स का यह पत्र नष्ट हो गया है। एंगेल्स ने कार्ल काउत्स्की के नाम ११ अप्रैल, १८८४ के अपने पत्र मे मार्क्स के इस पत्र का उल्लेख किया था। – पृ० ४८

[27] यहां संकेत आर० वैगनर के आपेरा-चतुष्टय 'नीबेलुगेनरिंग' के टेक्स्ट से है, जिसे संगीतकार ने स्वयं ही स्कैंडिनेवियन काव्य 'एड्डा' और जर्मन काव्य 'नीबेलुगेनलीड' के आधार पर तैयार किया था।

महान जर्मन वीरकाव्य 'नीबेलुंगेनलीड' उस काल की जर्मन किंवदंतियो और लोक-कथाओ पर आधारित है, जब बड़े पैमाने पर लोग दूसरे स्थानों पर जाकर बसे थे (३–५वी सदी)। अपने वर्तमान रूप मे काव्य सन् १२०० के आसपास रचा गया था। – पृ० ४८

[28] 'एड्डा' (Edda) स्कैंडिनेवियन जातियों की पौराणिक गाथाओं, जनश्रुतियो और गीतो का संकलन है। इस काव्य के आज दो रूपान्तर उपलब्ध है:

'महा एड्डा' और 'लघु एड्डा'। पहले की तेरहवी सदी की एक हस्तलिखित प्रति १६४३ में आइसलैण्ड के एक पादरी स्वेइन्सन द्वारा प्रकाश मे लायी गयी थी। दूसरे का संकलन (स्काल्दों के गीतो की किताब के रूप में) तेरहवी सदी के प्रारम्भ मे कवि तथा इतिहासकार स्नोरी स्तुरलुसन ने किया था। 'एड्डा' के गीतो में गोत्र-व्यवस्था के भग और लोगों के दूसरी जगहो पर जाकर बसने के काल के स्कैंडिनेवियन समाज की स्थिति प्रतिविंबित हुई है। उनमे प्राचीन जर्मनो की लोकगाथाओ की झलक भी मिलती है।

'ओगिस्ड्रेका' (Ögisdrecka) 'महा एड्डा' का एक गीत है। यह काव्य के परवर्ती टेक्स्टो मे ही मिलता है। एंगेल्स ने यहां गीत की ३२ वी और ३६ वी पंक्तिया उद्धृत की है।—पृ० ४८

[29] **"आसा"** और **"वाना"**—स्कैंडिनेवियाई पुराणकथाओ में देवताओ के दो समूह।

'इंगलिंग वीर-गाथा'—आइसलैण्ड के मध्ययुगीन कवि तथा वृत्तकार स्नोरी स्तुरलुसन की प्राचीन काल से लेकर १२ वी शताब्दी तक के नार्वेजियन राजाओं के बारे मे लिखी पुस्तक की पहली गाथा।—पृ० ४८

[30] L H. Morgan. *Ancient Society*. London, 1877, p. 425.—पृ० ५०

[31] J. J. Bachofen. *Das Mutterrecht*. XXIII, 385 आदि।—पृ० ५२

[32] का० मार्क्स के मोर्गन के 'प्राचीन समाज' विषयक नोट्स।—पृ० ५२

[33] Caesar, *Bello Galico*.—पृ० ५२

[34] *The People of India*. Edited by J. F. Watson and J. W. Kaye. Vol. I-V. London. 1868-1872.—पृ० ५३

[35] यहा इशारा आस्ट्रेलिया के अधिकांश आदिवासी क़बीलों मे पाये जाने-वाले दो विशेष समूहो की ओर है, जिनमे प्रत्येक के पुरुष एक निश्चित समूह की स्त्रियो के साथ विवाह कर सकते थे। हर क़बीले मे ऐसे समूहो की संख्या चार से लेकर आठ तक होती थी।—पृ० ५३

[36] L.H. Morgan. *Systems of Consanguinity and Affinity of the Human Family*. Washington, 1871. –पृ० ५५

[37] L. Fison and A.W. Howitt. *Kamilaroi and Kurnai*. Melbourne, Sydney, Adelaide and Brisbane, 1880. –पृ० ५५

[38] L.H. Morgan. *Ancient Society*. London. 1877, p. 459. –पृ० ६०

[39] एंगेल्स ने यहां मोर्गन की पुस्तक *Ancient Socety*. p. 455 के आधार पर ए० राइट के पत्र को उद्धृत किया है। इस पत्र का पूर्ण टेक्स्ट (यह १८७४, १९ मई को लिखा गया था, हालांकि मोर्गन ने गलती से १८७३ लिखा है) *American Anthropologist*. USA, Wisconsin, 1933, में प्रकाशित हुआ है। –पृ० ६२

[40] H.H. Bancroft. *The Native Races of the Pacific States of North America*. Vol. I, New York, 1875, p. 352-353. –पृ० ६३

[41] Saturnalia – प्राचीन रोम में मध्य दिसंबर में सौनी के अवसर पर मनाया जानेवाला शनि-महोत्सव; महोत्सव में लोगों को यौन-संबंध तथा संभोग की पूर्ण स्वतंत्रता होती थी। अब यह शब्द स्वच्छंद रंगरेलियों और बदमस्तियों की व्यंजना के लिये प्रयुक्त होता है। –पृ० ६४

[42] Professor and Mrs. Louis Agassiz. *A Journey in Brazil*. Boston and New York, 1886. –पृ० ६५

[43] लेखक का संकेत यहां कैटेलोनिया के किसान विप्लव के दबाव में आकर स्पेनी सम्राट फर्दीनांद पंचम कैथोलिक द्वारा दिये गये २१ अप्रैल, १४८६ के पंचाट से है, जिसे इतिहास में "ग्वैडेलूप के फ़ैसले" के नाम से जाना जाता है। सम्राट को विप्लवी किसानों और ज़मींदारों के बीच मध्यस्थता करनी पड़ी थी। पंचाट के अनुसार किसानों के किसी भूमि विशेष से बंधे होने का नियम बदला जाना था और पहली रात्रि के अधिकार समेत जमींदारों के ऐसे बहुत से विशेषाधिकारों को खत्म किया जाना था, जिन्हें किसान और सहने के लिये तैयार नहीं थे। इन सबके बदले में किसानों को मुआवज़े के तौर पर काफी बड़ी रकम देनी थी। –पृ० ६६

[44] S. Sugenheim. *Geschichte der Aufhebung der Leibeigenschaft und Hörigkeit in Europa bis um die Mitte des neunzehnten Jahrhunderts.* St. Petersburg, 1861. —पृ० ६७

[45] का० मार्क्स के मौर्गन के 'प्राचीन समाज' विषयक नोट्स। —पृ० ७२

[46] का० मार्क्स के मौर्गन के 'प्राचीन समाज' विषयक नोट्स। —पृ० ७२

[47] M. Kovalevsky. *Tableau des Origines et de l'évolution de la famille et de la propriété,* Stockholm, 1890. —पृ० ७२

[48] L. H. Morgan. *Ancient Society.* p. 465-466. —पृ० ७२

[49] L. H. Morgan. *Ancient Society.* p. 470. —पृ० ७३

[50] का० मार्क्स के मौर्गन के 'प्राचीन समाज' विषयक नोट्स। —पृ० ७३

[51] यहा इशारा म० म० कोवालेव्स्की की पुस्तक 'आदिम क़ानून, भाग १, गोत्र' (मास्को, १८८६) की ओर है। लेखक ने रूस में कुटुंब-समुदाय के बारे में ओर्शान्स्की द्वारा १८७५ में और येफिमेन्को द्वारा १८७८ में संग्रहीत तथ्य-सामग्री दी है। —पृ० ७५

[52] यारोस्लाव का 'प्राव्दा' — प्राचीन रूस की विधि-संहिता, 'रूसी प्राव्दा' के पुराने पाठ में संहिता का पहला भाग। यह संहिता ११ वीं और १२ वी शताब्दियों में उन परंपरागत नियमों के आधार पर तैयार की गयी थी जो अभी भी प्रचलित थे और जो तत्कालीन समाज के सामाजिक आर्थिक संबंधों को प्रतिबिंबित करते थे। —पृ० ७५

[53] डाल्मेशियन क़ानून — ये कानून पालिट्ज़ (डाल्मेशिया का एक भाग) में १५ वी से १७ वी शताब्दियों तक लागू रहे और पालिट्ज़-संविधि के नाम से जाने जाते थे। —पृ० ७५

[54] A. Heusler. *Institutionen des Deutschen Privatrechts.* Bd. II, Leipzig, 1886, s. 271. —पृ० ७५

[55] Strabonus, *Geographia*, XV, I.—पृ० ७५

[56] Calpullis—स्पेन द्वारा मैक्सिको-विजय के समय मैक्सिको के इंडियनो के कुटुंब-समुदाय, जिनके सदस्य एक ही पूर्वज के वंशज होते थे। हर समुदाय (calpulli) के पास अपनी सामूहिक जमीन होती थी, जो हस्तान्तरित या वारिसो के बीच बांटी न जा सकती थी।—पृ० ७६

[57] Des Ausland (इतर देश)—एक जर्मन पत्रिका, जिसका विषय भूगोल, मानवजाति-वर्णन और प्रकृतिविज्ञान था। वह १८२८ से १८६३ तक (१८७३ से स्टुटगार्ट से) प्रकाशित होती रही।—पृ० ७६

[58] यहा इशारा उस कानून की धारा २३० की ओर है।—पृ० ७८

[59] का० मार्क्स के मौर्गन के 'प्राचीन समाज' विषयक नोट्स।—पृ० ७८

[60] Homer. *Odyssey*, I.—पृ० ७८

[61] Aeschylus, *Oresteia*, *Agamemnon*.—पृ० ७९

[62] G. F. Schoemann. *Griechische Alterthümer*. Bd. I, Berlin, 1855, s. 268.—पृ० ८०

[63] स्पार्टियेट—प्राचीन स्पार्टा मे नागरिकों का एक वर्ग जिसे पूरे नागरिक अधिकार प्राप्त थे।

हेलोट—प्राचीन स्पार्टा के अधिकारहीन निवासियों का एक वर्ग। ये लोग भूदास थे, जो भूमि के साथ संलग्न थे और स्पार्टा के जमीदारों को बेगार देने के लिए बाध्य थे।—पृ० ८०

[64] Aristophânes, *Thesmophoria zuasae*.—पृ० ८१

[65] W. Wachsmuth. *Hellenische Alterthumskunde aus dem Gesicht-spunkte des Staates*, Th. II, Abth. II, Halle, 1830, s. 77.—पृ० ८१

[66] Euripides, *Orestes*—पृ० ८१

[67] का० मार्क्स, फ़्रे० एंगेल्स, 'जर्मन विचारधारा'।—पृ० ८२

[68] L. H. Morgan. *Ancient Society*, p. 504.—पृ० ८३

[69] हायरोड्यूलें – प्राचीन यूनान तथा यूनानी उपनिवेशो की देवदासियां। अनेक स्थानों मे, जैसे एशिया माइनर तथा कोरिन्थ मे ये देवदासिया वेश्या-जीवन व्यतीत करती थी। – पृ० ८३

[70] Tacitus, *Germania*. XIII—XIX. – पृ० ८६

[71] ११ वी सदी के अंत तथा १३ वीं सदी के आरभ मे दक्षिणी फ़ांस के प्रेम-गीत। – पृ० ८८

[72] Ch. Fourier. *Théorie de l'unité universelle*, vol. III, 2-me ed., Oeuvres complètes, t. IV, Paris, 1841, p. 120. – पृ० ९०

[73] डाफ़निस और क्लोए – २-३ सदी के प्राचीन यूनानी नाटक के नायक। उनके लेखक लांगस के बारे में कुछ भी मालूम नही – । पृ० ९६

[74] *Nibelungenlied*, Song X. – पृ० ९८

[75] *Gudrun* – १३ वी शताब्दी का जर्मन महाकाव्य। – पृ० ९८

[76] H. S. Maine. *Ancient Law: its Connection with the Early History of Society, and its Relation to Modern Ideas* – पृ० १००

[77] का० मार्क्स, फ़्रे० एंगेल्स, 'कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र'। – पृ० १००

[78] L. H. Morgan. *Ancient Society*. p 491-492. – पृ० १०५

[79] देखिये टिप्पणी 36। – पृ० १०६

[80] का० मार्क्स के मोर्गन के 'प्राचीन समाज' विषयक नोट्स। – पृ० ११२

[81] १५१९–१५२१ में स्पेनियों द्वारा मैक्सिको की विजय। – पृ० ११४

[82] L. H. Morgan. *Ancient Society*. p. 115. – पृ० ११६

[83] Tacitus, *Germania*. – पृ० ११७

[84] Ammianus Marcellinus, *Historia*. – पृ० ११८

[85] न्यू-मैक्सिको – देखिये टिप्पणी 15। – पृ० ११९

[86] G. L. Maurer. *Einleitung zur Geschichte der Mark-, Hof-, Dorf- und Stadt-Verfassung und der öffentlichen Gewalt.* München, 1854. *Geschichte der Markenverfassung in Deutschland.* Erlangen, 1856. *Geschichte der Fronhöfe, der Bauernhöfe und der Hofverfassung in Deutschland,* Bd. I-IV, Erlangen, 1862-1863. *Geschichte der Dorfverfassung in Deutschland,* Bd. I-II, Erlangen, 1865-1866. *Geschichte der Städteverfassung in Deutschland,* Bd. I-IV, Erlangen, 1869-1871. —पृ० १२१

[87] "तटस्थ जाति"—एक सैनिक संश्रय, जिसे १७वीं शताब्दी में कुछ इंडियन कबीलों ने स्थापित किया था। ये कबीले इरोक्वा लोगों से मिलते-जुलते थे और इरी झील के उत्तरी तट पर रहते थे। फ़ांसीसी उपनिवेशकों ने उनके लिये इस नाम का प्रयोग इसलिये किया कि ये लोग असली इरोक्वा कबीले और हूरोन लोगों के बीच होनेवाली लड़ाइयों में तटस्थ रहे। —पृ० १२३

[88] यहां इशारा ब्रिटिश उपनिवेशवादियों के विरुद्ध जूलुओं और नूबियन कबीलों के जातीय मुक्ति संग्राम से है।

जनवरी, १८७६ में अंग्रेज़ों के हमले के बाद केचवाइयो के नेतृत्व मे जूलुओं ने आधे वर्ष तक डटकर उपनिवेशवादियों का सामना किया। अंग्रेज़ कई लड़ाइयों के बाद और अपने उत्कृष्ट हथियारों के बल पर ही विजय प्राप्त कर सके। वे जूलुओं पर अपना पूर्ण आधिपत्य काफ़ी बाद में, १८८७ में जाकर ही स्थापित कर सके। इसमें अंग्रेज़ों ने विभिन्न ज़ूलू क़बीलों के बीच अन्तर्कबीला लड़ाइयों का सहारा भी लिया, जो कई वर्ष तक जारी रहीं।

मौलवी मुहम्मद अहमद के नेतृत्व मे, जो अपने को "महदी" कहता था, नूबियन क़बीलों, अरबों और सूडान की अन्य क़ौमों का राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष १८८१ मे शुरू हुआ। १८८३—१८८४ में उसे कई सफलताएं प्राप्त हुईं और लगभग सारे सूडान को ब्रिटिश उपनिवेशवादियों से मुक्त करा लिया गया, जो आठवें दशक में उसमें

घुस आये थे। विद्रोह के दौरान एक स्वतंत्र केन्द्रीय महदियाई राज्य की स्थापना की गयी थी। किन्तु विभिन्न कबीलों के बीच आपसी कलह के कारण यह राज्य शीघ्र ही निःशक्त हो गया और अपनी श्रेष्ठ सैन्य शक्ति के बल पर ब्रिटिश उपनिवेशवादियों ने १८९९ में सारे सूडान पर क़ब्ज़ा कर लिया।–पृ० १२३

[89] G. Grote. *A History of Greece. Vol. I-XII.*–पृ० १२७

[90] यहां लेखक का तात्पर्य न्यायालय में इयुबुलिडीज़ के विरुद्ध डेमोस्थेनीज़ द्वारा दिये गये भाषण से है। इस भाषण में किसी एक कुल के व्यक्तियों को उस गोत्र की कब्रों में ही दफनाने की प्राचीन प्रथा का उल्लेख है।–पृ० १२७

[91] का० मार्क्स के मोर्गन के 'प्राचीन समाज' विषयक नोट्स।–पृ० १२७

[92] एंगेल्स ने प्राचीन यूनानी दार्शनिक डिकिआरकीज़ का यह उद्धरण वाक्समुथ की पुस्तक (देखिये टिप्पणी 65), S. 312, से लिया है। डिकिआरकीज़ की रचना आज उपलब्ध नहीं है।–पृ० १२७

[93] W. A. Becker. *Charikles. Bilder altgriechischer Sitte. Zur genaueren Kenntniss des griechischen Privatlebens.* Th. II, Leipzig, 1840, S. 447.–पृ० १२८

[94] का० मार्क्स के मोर्गन के 'प्राचीन समाज' विषयक नोट्स।–पृ० १२९

[95] G. Grote. *A History of Greece*, p. 66.–पृ० १२९

[96] का० मार्क्स के मोर्गन के 'प्राचीन समाज' विषयक नोट्स।–पृ० १२९

[97] G. Grote. *A History of Greece*, p. 60.–पृ० १३०

[98] का० मार्क्स के मोर्गन के 'प्राचीन समाज' विषयक नोट्स।–पृ० १३१

[99] G. Grote. *A History of Greece*. p. 58-59.–पृ० १३१

[100] Homer, *Iliad*, Ode II.–पृ० १३१

[101] Fustel de Coulanges. *La cité antique*, livre III, chap. I.–पृ० १३२

[102] Dionysius of Helicarnassus, *Roman Ancient History*.–पृ०

[103] Aeschylus, Seven against Thebes. – पृ० १३३

[104] G. F. Schoemann *Griechische Allerthümer*, Bd. I, Berlin, 1855, S 27. – पृ० १३४

[105] W. E. Gladstone. *Juventus Mundi. The Gods and Men of the Heroic Age*, chap 11. – पृ० १३४

[106] L. H. Morgan. *Ancient Society*. London, 1877, p 248. – पृ० १३४

[107] देखिये टिप्पणी 100. – पृ० १३५

[108] का० मार्क्स के मॉर्गन के 'प्राचीन समाज' विषयक नोट्स। – पृ० १३६

[109] Thucydides, *The History of the Peloponnesian War*. – पृ० १३६

[110] Aristotle, *Politica*, III, 10. – पृ० १३६

[111] यह चर्चा एथेंस के चौथी श्रेणी के नागरिकों – थेटों – को नागरिक पदों पर नियुक्ति का अधिकार देने के बारे में है, जो स्वतंत्र तो थे, पर संपत्तिशाली नहीं थे। कतिपय स्रोतों के अनुसार इसकी जानकारी हमें एरिस्टीडिज (पांचवीं सदी ई० पू०) की रचनाओं से मिलती है। – पृ० १४८

[112] यहां इशारा तथाकथित "मेटोइकाओ", यानी विदेशियों से है जो ऐटिका राज्य में स्थायी रूप से बस गये थे। वे गुलाम तो न थे पर उन्हें एथेनी नागरिकों के पूर्ण अधिकार प्राप्त न थे। ये लोग मुख्यतः दस्तकारी का धंधा करते थे और उन्हें जिज़िया जैसा एक विशेष कर देना पड़ता था तथा विशेषाधिकारसंपन्न नागरिकों में किन्हीं को अपना "संरक्षक" मानना पड़ता था; इन "संरक्षकों" की मारफ़त ही वे सरकार से कोई दरख़ास्त कर सकते थे। – पृ० १४६

[113] ५१०–५०७ ई० पू० में एथेंस की जनता ने एल्कमियोनीडों के वंशधर क्लाइस्थीनीज के नेतृत्व में पुराने कुलीन खानदानों की सत्ता के विरुद्ध

संघर्ष कर उन्हें अपदस्थ किया और सुधार लागू किये, जिनका उद्देश्य गोत्र-व्यवस्था के अवशेषों का उन्मूलन करना था।–पृ० १४६

[114] L. H. Morgan. *Ancient Society*. p. 271.–पृ० १५०

[115] ५६० ई० पू० में निर्धनता को प्राप्त एक अभिजात गोत्र के वंशधर पिसिस्ट्रैटस ने एथेंस में सत्ता पर क़ब्जा करके अपना निरंकुश शासन स्थापित किया। कतिपय अन्तरालों के बावजूद यह शासन ५२७ ई० पू० मे पिसिस्ट्रैटस की मृत्यु (पिसिस्ट्रैटस दो बार एथेंस से निष्कासित हुआ और वापस आया) और उसके बाद ५१० ई० पू० तक जारी रहा, जब उसके बेटे हिपीयस को निष्कासित किया गया। इसके कुछ ही समय बाद एथेंस में क्लाइस्थीनीज के नेतृत्व मे दासस्वामी जनवादियो की सत्ता स्थापित हो गयी। पिसिस्ट्रैटस की छोटे तथा मंझोले भूमिपति समर्थक नीति से एथेंस राज्य के राजनीतिक ढाचे में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नही आये।–पृ० १५३

[116] **"बारह पट्टिकाओं वाले क़ानून"**–रोमन विधि-सहिता, जो पेट्रीशियनों के खिलाफ प्लेबियनों के सघर्ष के फलस्वरूप पांचवी शताब्दी ई० पू० के मध्य में सूत्रबद्ध की गयी थी। इस संहिता मे हमें रोमन समाज का संपत्ति के अनुसार स्तरीकरण, दास-प्रथा के विकास तथा दासस्वामी राज्य की स्थापना का एक प्रतिबिंब मिलता है। चूंकि यह सहिता बारह पट्टिकाओ पर खुदी हुई थी, इसलिए वह "बारह पट्टिकाओं वाले कानून" के नाम से जानी जाती है।–पृ० १५५

[117] लेखक का संकेत यहां विद्रोही जर्मन कबीलों और रोमन फौजो की ट्यूटोबर्गर जंगल की लड़ाई (९ ई० पू०) से है, जिसमे रोमनों को बुरी तरह मुंह की खानी पड़ी और उनके सेनाध्यक्ष वारस को जान से हाथ धोना पड़ा।–पृ० १५५

[118] ४५१ और ४५० ई० पू० में एप्पियस क्लौडियस को दससदस्यीय आयोग का सदस्य निर्वाचित किया गया। इस आयोग को इतिहास मे "बारह पट्टिकाओंवाले क़ानून" के नाम से ज्ञात कानून बनाने का कार्यभार

सौंपा गया था। कानून निर्माण की अवधि में सारी सत्ता उसके अधिकार मे दे दी गयी थी। किन्तु ज्यों ही यह अवधि खत्म हुई, एप्पियस क्लौडियस और अन्य सदस्यों ने बलात् सत्ताग्रहण द्वारा आयोग के शासन को ४४९ ई० पू० को जारी रखने का प्रयत्न किया। इस पर प्लेबियनों ने उनकी निरंकुशता का विरोध किया, जिसकी परिणति आयोग की सत्ताच्युति में हुई। क्लौडियस को बंदी बना लिया गया और वहीं, बंदीगृह में ही उसकी मृत्यु हो गयी।—पृ० १५७

[119] प्युनिक युद्ध—पश्चिमी भूमध्यसागर के क्षेत्र मे प्रभुत्व तथा नये प्रदेशों और गुलामो पर अधिकार के लिये दो सबसे बड़े दासस्वामी राज्यों—रोम और कार्थेज के—बीच हुए युद्ध। दूसरे प्युनिक युद्ध (२१८–२०१ ई० पू०) की परिणति कार्थेज की घोर पराजय मे हुई।—पृ० १५७

[120] यूनानी गोत्र के बारे में मार्क्स का नोट।—पृ० १५७

[121] Th. Mommsen. *Römische Forschungen* 2. Aufl., Bd. I, Berlin, 1864.—पृ० १५७

[122] Titus Livius, *History of Rome from its Foundation.*—पृ० १५९

[123] लांगे अपनी पुस्तक *Römische Alterthümer.* Bd. I, Berlin, 1856, S. 195 मे हुशके के निबंध (*De Privilegiis Feceniae Hispalae senatusconsulto concessis*) की ओर संकेत है।—पृ० १६२

[124] B G. Niebuhr. *Römische Geschichte.*—पृ० १६३

[125] Th. Mommsen. *Römische Geschichte.*—पृ० १६४

[126] Dureau de la Malle. *Économie politique des Romains.* T. I-II, Paris, 1840.—पृ० १६६

[127] J. F. M'Lennan. *Primitive Marriage.*—पृ० १६८

[128] M. Kovalevsky. *Tableau des origines et de l'évolution de la famille et de la propriété.*—पृ० १६८

[129] अंग्रेजों ने अंततः १२८३ में वेल्स को जीत लिया परंतु फिर भी उसने अपनी स्वायत्तता सुरक्षित रखी। वह १६वी शताब्दी के मध्य मे ही पूरी तरह इंगलैंड के अधीन हुआ।—पृ० १६६

[130] १८६६—१८७० मे एंगेल्स आयरलैंड के इतिहास के बारे में एक ग्रंथ की रचना कर रहे थे, परंतु वह उसे पूरा न कर सके। केल्ट जाति के इतिहास के अध्ययन के सिलसिले में एंगेल्स ने वेल्स के प्राचीन कानूनो का विश्लेषण किया था।—पृ० १६६

[131] *Ancient Laws and Institutes of Wales.* Vol. I, 1841, p. 93. —पृ० १७०

[132] एंगेल्स ने स्काटलैंड और आयरलैंड का दौरा सितम्बर १८६१ मे किया था।—पृ० १७२

[133] १७४५—१७४६ में स्काटलैंड के पहाड़ी क़बीलों ने इंगलैंड और स्काटलैंड के सामतों और पूजीपतियों के ज़ोर-ज़ुल्म और बेदख़लियो से आजिज आकर विद्रोह कर दिया। पहाड़ियों ने समाज की परंपरागत क़बायली व्यवस्था को कायम रखने के लिए संघर्ष किया। विद्रोह कुचल दिया गया और स्काटलैंड के पहाड़ी इलाक़ों की कबायली व्यवस्था छिन्न-भिन्न कर दी गयी तथा भूमि के कबायली स्वामित्व के अवशेष निश्चिह्न कर दिये गये। स्काटलैंड के किसान अधिकाधिक संख्या में अपनी जमीनों से बेदख़ल किये जाने लगे। कबायली अदालती पंचायतें भंग कर दी गयी और कई कबायली रिवाजों पर रोक लगा दी गयी।—पृ० १७३

[134] L. H. Morgan. *Ancient Society.* p. 357-358.—पृ० १७३

[135] Beda Venerabilis. *Historia ecclesiastica gentis Anglorum.* —पृ० १७३

[136] Caesar. *Commentarii de Bello Galico.*—पृ० १७४

[137] 'एलामान्नी क़ानून'—एलामान्नों के जर्मनीय कबायली संघ के पंचायती क़ानून। ये क़बीले पांचवी शताब्दी में आजकल के अल्सास, पूर्वी स्विट्जरलैंड और दक्षिण-पश्चिमी जर्मनी के इलाक़े में बस गये थे। एला-

मान्नी कानून की रचना छठी शताब्दी के अंत, सातवीं के आरंभ में तथा आठवीं शताब्दी में हुई थी। यहां एंगेल्स का इशारा 'एलामान्नी कानून' की ३१ वीं (३४ वीं) धारा की ओर है।—पृ० १७४

[138] *Tableau des origines et de l'évolution de la famille et de la propriété.*—पृ० १७४

[139] 'हिल्डेब्रांड का गीत'—एक वीरगाथा, जो आठवीं शताब्दी के प्राचीन जर्मनीय वीरकाव्य का एक नमूना है, जिसके कुछ छिटफुट अंश ही अवशिष्ट रह गये हैं।—पृ० १७५

[140] Tacitus. *Germania.* VII.—पृ० १७६

[141] Diodorus Siculus. Historical Library, IV, 34, 43—44. —पृ० १७६

[142] *Völuspâ* (दिव्य-दर्शिणी की भविष्यवाणी)—'महा एड्डा' का एक गीत। —पृ० १७७

[143] A. Ch. Bang *Völuspâ og de sibyllinske orakler, 1879* और S. Bugge, *Studier over de nordiske Gude—og Heltesagns Oprindelse.* Kristianis, 1881-1889.—पृ० १७७

[144] G. L. Mourer. *Geschichte der Städteverfassung in Deutschland.* —पृ० १७८

[145] रोम के आधिपत्य के ख़िलाफ़ जर्मनीय और गालीय कबीलों का विद्रोह ६६—७६ ई० में (कुछ सूत्रों के अनुसार ६६—७१ ई० में) हुआ था। सिविलिस के नेतृत्व में यह विद्रोह रोमन साम्राज्य के गालीय और जर्मनीय क्षेत्रों के एक बड़े भाग में फैल गया और उसने यह ख़तरा पैदा कर दिया कि रोमन साम्राज्य इन इलाकों से हाथ धो बैठेगा। परंतु विद्रोहियों की हार हुई और उन्हें रोम के साथ समझौता करने पर विवश होना पड़ा।—पृ० १७८

[146] Caesar. *Commentarii de Bello Galico.*—पृ० १८०

[147] Tacitus. *Germania,* XXVI.—पृ० १८०

[148] *Codex Loureshamensis* – लार्श मठ के अधिकारपत्रों का एक संग्रह, जो १२ वीं शताब्दी में तैयार किया गया था। यह एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज है जिससे ८ वीं – ९ वीं शताब्दियों में किसानी और सामंती भूमि-संपत्ति व्यवस्था पर प्रकाश पडता है। – पृ० १८२

[149] Plinius, *Natural History*, XVIII, 17. – पृ० १८३

[150] Plinius, Natural History, IV, 14. – पृ० १८९

[151] Liutprand, *Recompence*, VI, 6. – पृ० १९३

[152] Salvianus, De gubernatione Dei, V, 8. – पृ० १९४

[153] अग्रहार (Beneficium) भूमि के रूप दिये जानेवाले वेतन अथवा वृत्ति का एक रूप था। तेरहवी सदी के पूर्वार्ध मे फ्रैंकों के राज्य मे इसका व्यापक प्रचलन था। इसके अनुसार वेतन अथवा वृत्ति के रूप में प्रदत्त भूमि और उस पर काश्त करनेवाले किसान जीवनपर्यन्त अग्रहार पानेवाले के अधिकार क्षेत्र में आ जाते थे। किसानों को उसके लिये अपनी कुछ सेवायें, मुख्यतः सैनिक सेवा, अर्पित करनी पडती थी। अग्रहार पानेवाले की मृत्यु पर या उसके अपने कर्तव्यों को न निभाने और भूमि को बंजर छोड़ने पर भूमि उसके मालिक अथवा उसके उत्तराधिकारी को वापस दे दी जाती थी, और अग्रहार के नवीकरण के लिये नये अधिकारपत्र की जरूरत होती थी। अग्रहार पाने के लिये न केवल शासकीय कर्मचारी, बल्कि चर्च और बड़े भी लालायित रहते थे। अग्रहार की प्रथा ने सामंतों, विशेषतः निम्न तथा मध्यम दरबारियों के वर्ग के आविर्भाव, किसानों के भूमिदासों में परिवर्तन और सामंती संबंधों तथा सामंती अधिक्रम के विकास मे सहायता दी। परिणामस्वरूप अग्रहार खानदानी जागीरों में परिवर्तित हो गये। एंगेल्स ने अपनी 'फ्रैंक काल' शीर्षक रचना मे सामंतवाद के अभ्युदय मे अग्रहार प्रथा की भूमिका का विस्तार से विवेचन किया है। – पृ० १९६

[154] जिलों के काउंट (Gaugrafen) – फ्रैंक राज्य में काउटियों – जिलों – के प्रशासन के लिए नियुक्त शाही अफसर, जिन्हें मुकदमे का फैसला

करने का अधिकार दिया गया था। ये लोग टैक्स वसूल करते थे और सैनिक अभियानों मे सैनिक टुकड़ियों की कमान भी इनके हाथ में रहती थी। उन्हे अपनी सेवाओ के लिये जिले मे वसूल हुई शाही आमदनी का एक-तिहाई भाग दिया जाता था और इनाम में जागीरे भी बख्शी जाती थीं। विशेष रूप से ८७७ के बाद, जब इस पद को उत्तराधिकार द्वारा हस्तांतरणीय बना दिया गया, ये काउंट धीरे-धीरे शक्तिशाली मौरूसी जमींदार बनते गये। – पृ० १६७

[155] यहा लेखक का संकेत सेंट-जेरमें-द-प्रे मठ के नौवी सदी मे रचित "पोलिप्तिक" (भूमि संपत्ति, आबादी तथा आय का वृतान्त) से है, जो इतिहास में "पादरी इर्मिनोन के पोलिप्तिक" के नाम से जाना जाता है। एंगेल्स ने "पोलिप्तिक" से उद्धृत आकड़े संभवत: पी० रॉथ की पुस्तक *Geschichte des Beneficialwesens von den ältesten Zeiten bis ins zehnte Jahrhundert.* Erlangen, 1850, p. 378 से लिये हैं। – पृ० १६८

[156] Angariae – रोमन साम्राज्य के निवासियो द्वारा की जानेवाली अनिवार्य सेवायें। उन्हे राजकीय कार्यों के लिये घोडा, गाड़ी आदि की सप्लाई करनी पड़ती थी। कालांतर में ये सेवायें वृहत्तर पैमाने पर इस्तेमाल की जाने लगी और जनता के लिये बोझ बन गयी। – पृ० १६८

[157] सरपरस्ती (Commendation) – किसान या छोटे जमींदार का अपने को रक्षार्थ किसी प्रभुताशाली जमीदार के हाथों में सौंपना। सरपरस्ती निश्चित नियमों के अनुसार की जाती थी (जैसे सैनिक सेवा अर्पित करके, ठेके की जोत के बदले अपनी जमीन को हस्तातरित करके)। किसानों के लिये, जो अक्सर जोर-जबरदस्ती के जरिये ऐसा करने के लिये मजबूर किये जाते थे, इसका अर्थ था अपनी व्यक्तिगत स्वतंत्रता को खो बैठना; छोटे जमीदारों के लिये इसका अर्थ था बलशाली सामंती प्रभुओं का आश्रित हो जाना। सरपरस्ती की प्रथा, जो यूरोप में ८ वीं और ९ वीं शताब्दियों से खूब प्रचलित हुई, सामंती संबंधों के सुदृढ़ीकरण में सहायक सिद्ध हुई। – पृ० २००

[158] Ch. Fourier, *Théorie des quatre mouvements et des destinées*

générales, 3-me éd., Oeuvres complètes, t.I, Paris, 1846, p. 220.—पृ० २०१

[159] 'हिल्डेब्रांड का गीत'—देखिये टिप्पणी 139।

हेस्टिंग्स—वह स्थान जहां, १४ अक्तूबर १०६६ को नार्मंडी के ड्यूक विलियम ने आंग्ल-सैक्सन राजा हैरोल्ड को हराया था। आंग्ल-सैक्सन सैनिक संगठन में प्राचीन गोत्र-व्यवस्था के अवशेष मौजूद थे और उसके शस्त्रास्त्र भी पुराने-धुराने ही थे। इस विजय के फलस्वरूप विलियम इंगलैंड का राजा बन गया और विलियम प्रथम विजेता कहलाया।—पृ० २०६

[160] का० मार्क्स के मौर्गन के 'प्रचीन समाज' विषयक नोट्स।—पृ० २१२

[161] डियमार्शेन—आजकल के श्लेज़विग-होल्स्टिन प्रदेश का दक्षिणी-पश्चिमी भाग, जहा प्राचीन काल में सैक्सन लोग रहा करते थे। आठवीं शताब्दी मे उस पर कार्ल महान् ने कब्ज़ा कर लिया। बाद में वह विभिन्न धर्माधिकारियों और धर्मेतर सामंतों के हाथों में रहा। १२वी शताब्दी के मध्य में डियमार्शेन की जनता, जिसमें अधिकांश भूमिधर किसान थे, स्वतंत्रता प्राप्त करने लगी। १३ वीं और १६ वीं शताब्दियों के मध्य काल में वह वस्तुतः स्वतंत्रता का उपभोग करती थी। इस काल मे डियमार्शेन का समाज स्वशासी किसान समुदायो का, जो पुराने किसान-कुटुंबों पर आधारित थे, एक पुज था। १४वी शताब्दी तक सर्वोच्च सत्ता सभी स्वतंत्र भूमिधरों की एक सभा के हाथ में थी, बाद में वह तीन निर्वाचित मंडलों के हाथ मे अंतरित हो गयी। १५५९ में डेन राजा फ़्रेडरिक द्वितीय तथा होल्स्टिन के ड्यूक जोहान और अदोल्फ़ की सेनाओं ने डियमार्शेन की जनता के प्रतिरोध को चूर कर दिया और यह प्रदेश विजेताओ के बीच बांट दिया गया। फिर भी यहां पंचायती राज और आंशिक स्वशासन १९ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक चलता रहा।—पृ० २१८

[162] G. W. F. Hegel. *Grundlinien der Philosophie des Rechts.* §§ 257, 360.—पृ० २१८

[163] F. Lassalle. *Das System der erwerbenen Rechts* Th. II Das Wesen des Römischen und Germanischen Erbrechts in historisch-Philosophischer Entwickelung. —पृ० २२६

[164] का० मार्क्स के मौर्गन के 'प्राचीन समाज' विषयक नोट्स। —पृ० २२६

नाम-निर्देशिका

क्लाइस्थीनीज (Cleisthenes) – एथेन्स के राजनीतिज्ञ; ५१०–५०७ ई० पू० में उन सुधारों को सम्पन्न किया, जिनका उद्देश्य क़बायली व्यवस्था के अवशेषों को मिटाना तथा दास-स्वामित्व के आधार पर जनवाद की स्थापना करना था। – १४६

क्लौडिया (Claudia) – रोम के पेट्रीशियनों का एक कुलनाम। – १५५

क्विंक्टीलिया (Quinctilia) – रोम के पेट्रीशियनों का एक कुलनाम। – १५६

गायस (Gaius) (ईसवी की दूसरी शताब्दी) – रोम के न्यायशास्त्री, रोमन कानून संबंधी एक पुस्तक के संकलनकर्ता। – ७३

गेटे, जोहान वोल्फगाग (Goethe, Johann Wolfgang) (१७४६–१८३२) – जर्मनी के महाकवि तथा विचारक। – ४८-४६

ग्रिम, जैकब (Grimm Jacob) (१७८५–१८६३) – प्रसिद्ध जर्मन भाषाविज्ञानी; जर्मन भाषा के इतिहास से और कानून, पुराण तथा साहित्य से भी संबंधित कृतियों के रचयिता। – १७५

ग्रेगरी, तूर्स के; गेओर्गियस फ्लोरेंटियस (Gregory of Tours; Georgius Florentius) (अनुमानतः ५४०–५६४ ई०) – ईसाई पादरी, धर्मशास्त्री और इतिहासकार; ५७३ से तूर्स के बिशप) 'फ़्रैंक जन का इतिहास' तथा 'चमत्कार-सप्तक' नामक पुस्तकों के रचयिता। – १७६

ग्रोट, जार्ज (Grote, George) (१७६४–१८७१) – अंग्रेज पूंजीवादी इतिहासकार, बृहद्ग्रंथ 'यूनान का इतिहास' के रचयिता। – १२७-१३१

ग्लैडस्टन, विलियम एवर्ट (Gladstone, William Ewart) (१८०६–१८६८) – अंग्रेज राजनीतिज्ञ, १६ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में लिबरल पार्टी के नेता, प्रधानमंत्री (१८६८–१८७४, १८८०–१८८५; १८८६, १८६२–१८६४)। – १३४

जिरो-त्यूलों, अलेक्सिस (Giraud-Teulon, Alexis) (जन्म १८३६) – जेनेवा में इतिहास के प्राध्यापक, आदिम समाज के इतिहास से संबंधित पुस्तकों के रचयिता। – २४, २७, ४२, ७७

जुगेनहाइम, सेमुएल (*Sugenheim, Samuel*) (१८११–१८७७) – जर्मन इतिहासकार – ६६

जुरिता, अलोंसो (*Zurita, Alonso*) – १६वीं शताब्दी के मध्य में मध्य अमरीका में रहनेवाले एक स्पेनी अधिकारी। – ७६

जुलिया (Julia) – रोम के पेट्रीशियनों का एक कुलनाम। – १७४

टाइलर, एडुअर्ड बर्नेट (Tylor, Edward Burnett) (१८३२–१९१७)– विख्यात अंग्रेज़ मानवजाति-विज्ञानी, संस्कृति तथा मानवजाति-विज्ञान के इतिहास की विकासवादी शाखा के संस्थापक। – १४

टाइबीरियस (Tiberius) (४२ ई० पू० – ३७ ई०)– रोम के सम्राट (१४–३७ ई०)। – १६४

टारक्वीनियस सुपर्बस (Tarquinius Superbus) (५३४ से लगभग ५०६ ई० पू०)– रोम का राजा ; कहा जाता है कि जन-विद्रोह के फलस्वरूप यह राजा रोम से निकाल दिया गया और वहां जनतंत्रीय व्यवस्था स्थापित की गयी। – १६४, १६७

टेसिटस, पुब्लियस कार्नेलियस (Tacitus, Publius Cornelius) (अनुमानतः ५५ ई० – अनुमानतः १२० ई०) – रोमन इतिहासकार, 'जेर्मनिया', 'इतिहास' तथा 'इतिवृत्त' नामक ग्रंथो के रचयिता। – ११, २३, ३६, ८६, ११७, १७६–१८८

डायोनीसियस, हैलीकरनासिस निवासी (Dionysius of Halicarnassus) प्रथम शताब्दी ई० पू० – प्रथम शताब्दी ई०) – प्राचीन यूनान के इतिहासकार तथा अलंकारशास्त्री, 'प्राचीन रोम का इतिहास' के लेखक। – १३३

डार्विन, चार्ल्स रॉबर्ट (Darwin, Charles Robert) (१८०६–१८८२) – महान् अंग्रेज़ प्रकृति-विज्ञानी, विकासीय जीव-विज्ञान के प्रवर्त्तक। – २२५

डिकिआरकीज़ (Dicaerchus) (चौथी शताब्दी ई० पू०) – यूनानी विद्वान, अरस्तू के शिष्य, इतिहास, राजनीति, दर्शन, भूगोल आदि विषयों पर अनेक ग्रंथों के रचयिता। – १२८

डियोडोरस, सिसिली निवासी (Diodorus of Sicily) (लगभग ८०–२९ ई० पू०) – प्राचीन यूनान के इतिहासकार, विश्व-इतिहास संबंधी कृति, 'ऐतिहासिक पुस्तकालय' के रचयिता। – १७६, १८८

डेमोस्थेनीज़ (Demosthenes) (३८४–३२२ ई० पू०) – प्राचीन यूनान के विख्यात वाक्‌पटु वक्ता तथा राजनीतिज्ञ। – १२७

थियोडोरिक (Theodorich) – गोथ राजाओं का नाम, जिनमे दो पश्चिमी गोथ राजा हैं : थियोडोरिक प्रथम (शासन-काल लगभग ४१८–४५१)

तथा थियोडोरिक द्वितीय (शासन-काल लगभग ४५३–४६६) और एक पूर्वी गोथों का राजा, थियोडोरिक (४७४–५२६) है। – १६४

थियोक्रिटस (Theocritus) (तीसरी शताब्दी ई० पू०) – प्राचीन यूनान के कवि। – ६६

थ्युसीडिडीस (Thucydides) (अनुमानतः ४६०–३९५ ई० पू०) – प्राचीन यूनान के प्रसिद्ध इतिहासकार, 'पेलोपोनेसियाई युद्धों का इतिहास' के रचयिता। – १३६

द्यूरो दे ला माल, अदोल्फ (Dureau de la Malle, Adolphe) (१७७७–१८५७) – फ़्रांसीसी कवि तथा इतिहासकार। – १६६

निबूहर, बार्थोल्ड गेओर्ग (Niebuhr, Barthold Georg) (१७७६–१८३१) – जर्मन इतिहासकार, प्राचीन काल के इतिहास से संबंधित अनेक ग्रंथों के रचयिता। – १२८, १३१, १६३, २१८

नियार्कस (Nearchus) (अनुमानतः ३६०–३१२ ई० पू०) – मेसीडोनिया के नौसेनापति, जिन्होंने मेसीडोनियाई बेड़े के भारत से मेसोपोटामिया तक के अभियान (३२६–३२४ ई० पू०) का वर्णन किया है। – ७५

नेपोलियन प्रथम, बोनापार्त (Napoleon I, Bonaparte) (१७६९–१८२१) – फ़्रांस के सम्राट (१८०४–१८१४ तथा १८१५)। – ७८, ८५, १०६

पर्सियस (Perseus) (२१२–१६६ ई० पू०) – मेसीडोनिया के राजा (१७९–१६८ ई० पू०)। – १८६

पिसिस्ट्रेटस (Pisistratus) (लगभग ६००–५२७ ई० पू०) – एथेंस के राजा (५६० ई० पू० – ५२७ ई० पू०, पर लगातार नहीं)। – १५३

प्रोकोपियस, सीज़ेरिया निवासी (Procopius of Caesarea) (जीवनकाल: पांचवीं शताब्दी के अंत से लगभग ५६२ तक) – बजनतीनी इतिहासकार, 'फारसियों, वैंडलों तथा गोथों के साथ जस्टिनियन के युद्धों का इतिहास' नामक पुस्तक के रचयिता। – ८७

प्लिनी (गायस प्लिनी सेकेन्डस) (Pliny; Gaius Plinius Secundus) (२३–७९ ई०) – रोम के वैज्ञानिक, ३७ खंडों की पुस्तक, 'प्रकृति-इतिहास' के रचयिता। – १८३, १८६

प्लुटार्क (Plutarch) (अनुमानतः ४६–१२५) – प्राचीन यूनान के लेखक तथा भाववादी दार्शनिक। – ८०

साहित्यिक और पौराणिक पात्रों की सूची

अनाइतिस (Anaitis) (प्राचीन ईरानी पुराण में जल तथा उर्वरता की देवी अनाहिता का यूनानी नाम) – इस देवी की पूजा आर्मीनिया में प्रचलित थी, जहां उसे एशिया माइनर की मातृदेवी से अभिन्न माना गया। – ६४, ८३

अर्गोनाटस (Argonauts) (यूनानी पुराण) – नाग-रक्षित स्वर्ण मेषलोम के लिये "अर्गो" नामक जलपोत में कोलचिस की यात्रा करनेवाले पौराणिक वीर। – १७६

आल्थिया *(Althea)* *(यूनानी पुराण)* – *राजा थेस्टियस की बेटी,* मीलियागेर की मां। – १७६

इतियोक्लीज (Eteocles) (यूनानी पुराण) – थीबीस के राजा, ईडीपस का एक बेटा, जिसने सत्ता के लिये संघर्ष में अपने भाई को मार डाला और खुद इस लड़ाई में मारा गया; यह कथा ईस्खिलस के दुःखांत नाटक 'थीबीस के विरुद्ध सात' का आधार है। – १३३

इब्राहीम (Abraham) (बाइबिल) – यहूदी कुलपति। – ६६

ऊटा, नार्वेनिवासिनी (Ute the Norwegian) – प्राचीन जर्मन वीर-काव्य तथा १३ वीं शताब्दी के जर्मन काव्य 'गुड्रन' की एक नायिका। – ६८

एकिलस *(Achiles)* *(यूनानी पुराण)* – *ट्रोय की घेराबंदी करनेवाले* वीरों में परम साहसी वीर; होमर के महाकाव्य "इलियाड" का नायक। – ७६, १३५

एगामेम्नोन (Agamemnon) (यूनानी पुराण) – एर्गोलिस का राजा, होमर के महाकाव्य 'इलियाड' का नायक, ट्रोय युद्ध के समय

यूनानियों का नेता, ईस्खिलस के नाटक 'एगामेम्नोन' का नायक। —१५, ७६ १३१, १३५

एगीस्थस (Aegisthus) (यूनानी पुराण) —क्लिटेम्नेस्ट्रा का प्रेमी, एगामेम्नोन की हत्या मे शरीक; ईस्खिलस के दु:खांत नाटक, 'ओरेस्टिया' का पात्र। —१५

एटज़ेल (Etzel)—प्राचीन जर्मन वीर-काव्य तथा मध्ययुगीन जर्मन काव्य Nibelungenlied का नायक; हूणों का राजा। —६८

एथेना पोलास (Athene Pollas) (यूनानी पुराण) —एक प्रधान देवी, युद्ध की देवी, बुद्धि और प्रज्ञा की साक्षात् मूर्ति, एथेन्स राज्य की सरक्षिका-देवी। —१५, १६

एपोलो (Apollo) (यूनानी पुराण) —प्रकाश तथा सूर्य देवता, कलारक्षक। —१५, १६

एफ्रोडाइट (Aphrodite) (यूनानी पुराण) —प्रेम तथा सौंदर्य की देवी। —८३

एरिनी (Erinys) (यूनानी पुराण) —प्रतिशोध की देविया। ईस्खिलस के नाटक 'ओरेस्टीया' की नायिकायें। —१५, १६

ओडीसियस (Odysseus)—होमर के महाकाव्य 'इलियाड' और 'ओडीसी' का एक नायक, इथाका का पुराण-चर्चित राजा, जो ट्रोय-युद्ध में यूनानी सेना का एक नेता था और अपनी वीरता, कौशल तथा वक्तृता-शक्ति के लिये विख्यात था। —१३५

ओरेस्टस (Orestes) (यूनानी पुराण)—एगामेम्नोन तथा क्लिटेमनेस्ट्रा का पुत्र, जिसने अपनी मा और एगीस्थस से अपने पिता की हत्या का बदला लिया। ईस्ख़िलस के नाटक 'ओरेस्टीया' का पात्र। —१५, १६

कसांड्रा (Cassandra) (यूनानी पुराण) —ट्रोय के राजा प्रियाम की कन्या, ईशदूतिका, जिसे ट्रोय के ऊपर विजय के बाद एगामेम्नोन दासी के रूप में अपने साथ लेता गया; ईस्खिलस के नाटक 'एगामेम्नोन' की एक नायिका। —७६

क्लोए (Chloe)—प्राचीन यूनान (दूसरी-तीसरी शताब्दी) में लागस के 'डाफनिस और क्लोए' नामक उपन्यास की पात्री, प्रेमाविष्ट गड़ेरिन। —६६

क्राइमहिल्ड (Kriemhild)—प्राचीन जर्मन वीर-काव्य तथा मध्ययुगीन

जर्मन काव्य Nibelungenlied की नायिका, बर्गंडी के राजा गुंथर की बहन; सिगफ़ाइड की मंगेतर और बाद मे पत्नी; सिगफ़ाइड की मृत्यु के पश्चात् हूण राजा एटज़ेल की पत्नी। – ६८

क्लिटेमनेस्ट्रा (Clytaemnestra) (यूनानी पुराण) – एगामेम्नोन की पत्नी, जिसने ट्रोय-युद्ध से अपने पति के लौट आने पर उसको मार डाला; *ईस्खिलस के नाटक 'ओरेस्टीया' की नायिका।* – १५

क्लियोपैट्रा (Cleopatra) (यूनानी पुराण) – उत्तरी पवन-देव, बोरियस, की पुत्री। – १७६

गुंथर (Gunther) – प्राचीन जर्मन वीर-काव्य तथा मध्ययुगीन जर्मन काव्य Nibelungenlied का नायक, बर्गंडी का राजा। – ६८

गुडरुन (Gudrun) प्राचीन जर्मन वीर-काव्य तथा १३वीं शताब्दी के जर्मन काव्य 'गुडरुन' की नायिका; हेगेलिंगन के राजा हेटेल तथा आयर्लैंड की हिल्डा की बेटी, ज़ीलैंड के राजा हेरविग की दुलहन; नार्मंडी के राजा हार्टमुट ने उसे चुरा लिया और उसके साथ विवाह करने से इनकार करने के कारण उसे १३ वर्ष कारागार में रखा; अंत मे हेरविग के हाथो मुक्ति पाकर गुडरुन ने उसके साथ विवाह कर लिया। – ६८

गैनीमीड (Ganymede) (यूनानी पुराण) – ख़ूबसूरत नौजवान, जिसे चुराकर देवगण ओलिम्पस पर्वत ले आये, जहा वह ज़ीयस देवता का प्रेमी और साकी बन गया। – ८२

जार्ज दांदाँ (Georges Dandin) – मोलियेर के नाटक 'जार्ज दांदाँ' का पात्र; एक धनी पर मूर्ख किसान, जो कुलीन लेकिन निर्धन स्त्री से विवाह करता है और उसके द्वारा बेवकूफ बनाया जाता है। – २१५

ज़ीयस (Zeus) (यूनानी पुराण) – देवताओं का राजा। – १३६

टेलामोन (Telamon) (यूनानी पुराण) – ट्रोय-युद्ध मे भाग लेनेवाला एक वीर। – ७९

टेलेमाकस (Telemachus) – होमर के महाकाव्य 'ओडीसी' का नायक, ओडीसियस (इथाका के राजा) का पुत्र। – ७८

ट्यूक्रोस (Teukros) – होमर के 'इलियाड' का एक पात्र, ट्रोय-युद्ध मे भाग लेनेवाला वीर। – ७९

डाफ़निस (Daphnis) – प्राचीन यूनान में लांगस (दूसरी-तीसरी शताब्दी) के 'डाफनिस और क्लोए' नामक नाटक का पात्र, जिसमें हमें प्रेमाविष्ट गड़ेरिये का चित्र मिलता है। – ६६

डेमोडोकस (Demodocus) – होमर के महाकाव्य 'ग्रोडीसी' का एक पात्र; एल्किनग (फेशियनों के पुराणचर्चित राजा) के राजदरबार का ग्रंधा गवैया। – १३६

थीसियस (Theseus) (यूनानी पुराण) – एथेंस का राजा जिसने एथेंस की बुनियाद डाली थी, प्रमुख वीरों में एक। – १४०, १४१

थेस्टियस (Thestius) (यूनानी पुराण) – एयोलिया मे प्ल्यूरोन का पुराणचर्चित राजा। – १७६

नेस्टर (Nestor) (यूनानी पुराण) – ट्रोय-युद्ध में भाग लेनेवाले यूनानी वीरों मे सबसे बडा ग्रौर बुद्धिमान। – १३१

न्योर्द (Njord) (स्कैंडिनेवियाई पुराण) – उर्वरता का देवता, प्राचीन स्कैंडिनेविया के जातीय वीर-काव्य 'महा एड्डा' का पात्र। – ४८

पोलीनाइसीज़ (Polynieces) (यूनानी पुराण) – थीबीस के राजा ईडीपस का एक पुत्र; सत्ता के लिये संघर्ष मे उसने ग्रपने भाई इतिग्रोक्लीज़ को मार डाला ग्रौर इस लडाई में खुद भी मारा गया; यह कथा ईस्खिलस के नाटक 'थीबीस के विरुद्ध सात' का ग्राधार है। – १३३

फ़िनियस (Phineus) (यूनानी पुराण) – ग्रंधा पैग़म्बर; ग्रपनी दूसरी पत्नी के भड़कावे में ग्राकर उसने ग्रपनी पहली पत्नी क्लियोपैट्रा (बोरियस की लड़की) के बच्चों को यन्त्रणा दी, जिसके लिये देवताग्रों ने उसे दंड दिया। – १७६

फ़्रिया (Freya) (स्कैंडिनेवियाई पुराण) – प्रेम तथा उर्वरता की देवी, प्राचीन स्कैंडिनेवियाई जातीय वीर-काव्य 'महा एड्डा' की नायिका, ग्रपने भाई, फ़्रैर देवता की पत्नी। – ४८

बोरियेड (Boread) (यूनानी पुराण) – उत्तरी पवन-देव, बोरियस तथा एथेन्स की महारानी ग्रोरीथिया की संतान। – १७६

ब्रुनहिल्ड (Brunhild) – प्राचीन जर्मन वीर-काव्य तथा जर्मन मध्ययुगीन काव्य Nibelungenlied की नायिका, ग्राइसलैंड की महारानी, बाद मे बर्गण्डी के राजा गुंथर की पत्नी। – ६८

मिलिटा (Mylita) – बैबिलोनिया की पुराण कथाग्रो मे प्रेम तथा उर्वरता की देवी इश्तार (Ishtar) का यूनानी नाम। – ६४

मीलियागेर (Meleager) (यूनानी पुराण) – कैलीडन के पुराणचर्चित राजा ईनीयस तथा ग्रपनी मां के भाइयों का वध करनेवाली ग्राल्थिया का पुत्र। – १७६

मुलिग्रोस (Mulios) – होमर के महाकाव्य 'ओडीसी' का पात्र। – १३६

मूसा (Moses) (बाइबिल) – पैगम्बर, कानून बनानेवाले, जिन्होंने यहूदियो को मिस्रियो की क़ैद से रिहा किया और उनके लिये कानून बनाये। – १३, ६८

मेफ़िस्टोफ़ीलीस (Mephistopheles) – गेटे के दुःखांत नाटक 'फ़ाउस्ट' का पात्र। – ४८

यूमीयस (Eumeaus) – होमर के काव्य 'ओडीसी' का पात्र, इथाका के राजा ओडीसियस का चरवाहा, जो अपने स्वामी की अंतहीन यात्राओं के दौरान उसके प्रति वफ़ादार बना रहा। – १३६

रोमुलस (Romulus) – पुराण कथाओं के अनुसार प्राचीन रोम का संस्थापक और पहला राजा। – १५६

लोकी (Loki) (स्कैंडिनेवियाई पुराण) – दुष्ट राक्षस, अगियावैताल, प्राचीन स्कैंडिनेवियाई वीर-काव्य 'महा एड्डा' का पात्र। – ४८

सिगफ़ाइट (Siegfried) – प्राचीन जर्मन वीर-काव्य और मध्ययुगीन जर्मन काव्य Nibelungenlied का नायक। – ६८

सिगफ़ाइड, मोरलैंड का (Siegfried of Morland) – प्राचीन जर्मन जातीय वीर-काव्य तथा १३वी शताब्दी के मध्ययुगीन जर्मन काव्य 'गुडरुन' का पात्र; गुडरुन का मंगेतर जिसे तिरस्कृत कर दिया गया था। – ६८

सिगबांट, आयर्लैंड का (Sigebant of Ireland) – प्राचीन जर्मन वीर-काव्य तथा १३वी शताब्दी के मध्ययुगीन जर्मन काव्य 'गुडरुन' का नायक, आयर्लैंड का राजा। – ६८

सिफ (Sif) (स्कैंडिनेवियाई पुराण) – थोर (मेघराज) देवता की पत्नी, प्राचीन स्कैंडिनेवियन जातीय वीर-काव्य 'महा एड्डा' की पात्री। – १७५

हाडुब्रांड (Hadubrand) – प्राचीन जर्मन वीर-काव्य, 'हिल्डेब्राड का गीत' का पात्र, कथा-नायक हिल्डेब्राड का पुत्र। – १७५

हार्टमुट (Hartmut) – प्राचीन जर्मन वीर-काव्य तथा १३वी शताब्दी के जर्मन काव्य 'गुडरुन' का पात्र, ओर्मनी के राजा का पुत्र, गुडरुन के तिरस्कृत मंगेतरो मे एक। – ६८

हिल्डा (Hilde) – प्राचीन जर्मन वीर-काव्य तथा १३वी शताब्दी की जर्मन

गाथा 'गुडरुन' की पात्री, वीरांगना, आयरलैंड के राज्य की बेटी, हेगेलिंगेन के राजा हेटेल की पत्नी। – ६८

हिल्डेब्रांड (Hildebrand) – प्राचीन जर्मन वीर-काव्य, 'हिल्डेब्राड का गीत' का प्रधान नायक। – १७५

हेटेल (Hettel) – प्राचीन जर्मन वीर-काव्य तथा १३वीं शताब्दी की जर्मन गाथा 'गुडरुन' का नायक, हेगेलिंगेन का राजा। – ६८

हेरक्लीज (Heracles) (यूनानी पुराण) – लोकप्रिय वीर-नायक, जो अपने पौरुष तथा अतिमानवीय पराक्रम के लिये प्रसिद्ध है। – १७६

हेरविग (Herwig) – प्राचीन जर्मन वीर-काव्य और १३वीं शताब्दी के जर्मन काव्य 'गुडरुन' का पात्र, जीलैंड का राजा, गुडरुन का वरदत्त और फिर पति। – ६८

जाति नामानुक्रमणिका

के शुरू तक राइन नदी के बिचले और निचले भाग से लगे इलाक़ों में रहता था, तीसरी सदी से ये कबीले फ़्रैंक कहलाने लगे। – १६०

उत्तरी अमरीकी इंडियन – देखिये रेड इंडियन।

उसीपेट – राइन नदी के निचले भाग में दायें तट पर रहनेवाला एक जर्मन कबीला। पहली सदी ई० पू० के मध्य मे बायें तट पर आकर रहने लगा, मगर रोमनो से हारकर वापस दायें तट पर लौट गया। – १८८

एज़्टेक – १३७

एरी – उत्तरी अमरीका का एक रेड इंडियन कबीला। – १२३

एलामान्नी – जर्मन कबीलों का एक समूह, जो तीसरी-चौथी सदियो में ओडर और एल्बा के बीच के इलाके को छोडकर राइन के ऊपरी इलाकों में बस गया था और बाद में शनैः-शनैः वर्तमान एल्सास, पूर्वी स्विट्ज़रलैण्ड और दक्षिणी-पश्चिमी जर्मनी के क्षेत्र में फैल गया था। – ११८, १७४

ओजिब्वे (चिप्पेवा) – उत्तरी अमरीका का एक रेड इंडियन कबीला। – ४६,११२

ओनीडा – उत्तरी अमरीका का एक रेड इडियन कबीला। – ११६

ओनोनडेगा – इरोक्वा के समूह का एक उत्तरी अमरीकी रेड इंडियन कबीला। – ११६

ओमाहा – उत्तरी अमरीका का एक रडे इंडियन कबीला। – ११२

औजिल – औजिल नखलिस्तान (उत्तर-पूर्वी लीबिया) मे रहनेवाले बर्बर जाति के लोग। – ६६

क़बायल – अल्जीरिया के बर्बर कबीलो का एक समूह। – ७६

कराइब (कैरीब) – दक्षिणी अमरीकी रेड इडियन कबीलो का एक समूह, जो उत्तरी और मध्य ब्राज़ील और उससे लगे वेनेज़ुएला, गिनी और कोलंबिया के इलाक़े मे रहते थे। – ४६

क़ाफ़िर – ज़ूलू (सही नाम – ज़ूलू) – दक्षिण-पूर्वी अफ़्रीका में रहनेवाली एक छोटी जाति। – १२३

कामिलरोई – एक आस्ट्रेलियाई कबीला, जो डालिंग नदी की उपत्यका (पश्चिमी आस्ट्रेलिया) मे रहता था। – ५८

कारेन – दक्षिण-पूर्वी बर्मा में रहनेवाली एक छोटी जाति। – ४६

काल्मीक – एक मंगोल मूल की जाति, जो सोलहवीं सदी में जुंगारिया (मध्य एशिया) की स्तेपियों मे रहती थी और सत्रहवीं सदी के

उत्तरार्ध तक देशान्तरगमन करते-करते रूस में वोल्गा नदी के निचले भागों के इलाके में आ बसी।–१६८

काविग्रट (**कावियक**)–उत्तरी अमरीका में बेरिंग की खाड़ी के निकट रहनेवाला रेड इंडियन क़बीला।–४६

कूकू–दक्षिणी अमरीकी रेड इंडियनों का एक क़बीला, जो वर्तमान चिली के क्षेत्र पर रहता था।–४६

केल्ट–प्राचीन काल मे मध्य और पश्चिमी यूरोप मे रहनेवाले कबीलों का एक समूह, जिनका मूल एक ही था।–११, ६५, ७५, ११५, १६८–१७३, १७६, १८३, १८८

कैयूगा–उत्तरी अमरीका का एक रेड इंडियन कबीला, जो वर्तमान न्यूयार्क राज्य के क्षेत्र पर रहता था। यह कबीला इरोक्वों का एक वर्ग है।–११६

कोतार–नीलगिरि पहाड़ों (वर्तमान मद्रास राज्य का पश्चिमी भाग और मैसूर राज्य का दक्षिणी भाग) में रहनेवाला एक भारतीय कबीला।–६४

ख़ेवसूर,–जार्जियाई जाति का एक वर्ग, जो पूर्वी जार्जिया के पहाड़ी इलाकों में रहता है।–१६८

गाली केल्ट, **गाल**–केल्ट कबीलों का एक समूह, जो प्राचीन गाल प्रदेश (वर्तमान फ्रांस, उत्तरी इटली, बेल्जियम, लक्ज़ेमबर्ग, स्विट्ज़रलैण्ड और नीदरलैण्ड का कुछ हिस्सा) मे रहता था। ईस्वी संवत् के आरंभ तक रोमनों ने उन्हे जीत लिया।–१७८, १७९, १८८

गौड़–पश्चिमी बंगाल (भारत) में बसनेवाली ब्राह्मणों की एक उपजाति।–३८

गौथ–गौथ ग्रुप का मुख्य जर्मन कबीला, जो ईस्वी संवत् के शुरू तक स्कैण्डिनेविया को छोड़कर लोअर विस्चुला के इलाके मे और तीसरी सदी तक काले सागर के तटवर्ती क्षेत्र के उत्तरी भाग मे जा बसा था। वहां से चौथी सदी मे हूणों द्वारा निकाले जाने पर वह पूर्वी गौथ और पश्चिमी गौथ क़बीलों में बंट गया। पूर्वी गौथों ने पांचवी सदी में अपेनिन प्रायद्वीप पर अपने राज्य की स्थापना की और पश्चिमी गौथों ने पांचवी सदी के शुरू मे पहले दक्षिणी गाल प्रदेश में और फिर पिरिनेई प्रायद्वीप पर अपना राज्य बनाया।–१६४

गौथ क़बीले–जर्मन कबीलों का एक मूल समूह, जो ईस्वी संवत् के शुरू तक स्कैण्डिनेविया को छोड़कर विस्चुला और ओडर के इलाकों में बस गया।–१७५, १८६

चिप्पेवा (**चाइपेवाई**)–उत्तरी अमरीका का एक रेड इंडियन कबीला।–४६

चिरोकी – उत्तरी अमरीका का एक रेड इंडियन कबीला। – ११६

चेरकासियन – उत्तर-पश्चिमी काकेशिया की आदिम पहाड़ी जातियों (आदिगे, चेरकेसियन और कबारदीन) का समूह। – १६८

टस्करोरा – इरोक्वा समूह के उत्तरी अमरीकी रेड इंडियनों का एक कबीला। – १११

टिनेह – उत्तरी अमरीकी रेड इंडियन कबीलों का एक समूह, जो पश्चिमी कनाडा तथा आभ्यन्तर अलास्का में और प्रशान्त महासागर के तट पर केनाई प्रायद्वीप (दक्षिणी अलास्का) पर रहता था। – ४६

टेंक्टेर – राइन के दायें और निचले भागों में रहनेवाला एक जर्मन कबीला। पहली ई० पू० के मध्य में वह बायें तट पर बस गया, लेकिन रोमनों से हारने के बाद फिर दायें तट पर लौट गया। – १८८

ट्यूटन – प्राचीन काल में युटलैण्ड प्रायद्वीप और एल्बा के निचले भागों में रहनेवाले जर्मन कबीलों का समूह। दूसरी सदी ई० पू० के अन्त में सिम्बरियों के साथ वह भी दक्षिणी यूरोप में जाकर बसने लगा, जहा रोमनों से हारने के बाद मास, माइन और नेक्कर नदियों के इलाके में बिखर गया। – १७४

ठाकुर – उत्तर प्रदेश (भारत) के अवध इलाके की एक अब्रह्मण्य जाति। – ५३

डेलावेयर – उत्तरी अमरीका का एक रेड इंडियन क़बीला, जो सत्रहवीं सदी के आरंभ तक डेलावेयर नदी और हडसन नदी के निचले भाग से लगे इलाके (वर्तमान न्यूजर्सी, डेलावेयर, न्यूयार्क और पेंसिल्वेनिया राज्यों के क्षेत्र) में रहता था। – ७१

डेकोटा – उत्तरी अमरीकी रेड इण्डियनों के क़बीलों का एक समूह। – ११२, ११८

डोरियन – प्राचीन यूनानी क़बीलों का एक मुख्य समूह, जो बारहवीं-दसवीं सदी ई० पू० में पेलेपोनेसियाई प्रायद्वीप और एजीयन सागर के दक्षिणी द्वीपों पर रहता था। – ७९, १२६

ताइफल – गौथों से सम्बन्धित जर्मन कबीला, जो तीसरी सदी तक काले सागर के तटवर्ती उत्तरी इलाकों में बस गया था। वहां से चौथी सदी के उत्तरार्ध में हूणों ने उसे निकाल दिया। – ८७

तामिल – द्रविड़ जाति का एक वर्ग, जो आजकल भारत के धुर दक्षिण-पूर्वी हिस्से में रहता है। – ३८

ताहू – एक उत्तरी अमरीकी रेड इंडियन कबीला, जो वर्तमान मेक्सिको के उत्तरी भाग में रहता था। – ६६

तूरानी – मध्ययुग में मध्य एशिया के तूरान क्षेत्र के निवासियों का नाम। –२०५

थ्रेसियन – प्राचीन काल मे बाल्कन प्रायद्वीप के पूर्वी भाग में रहनेवाली कबीलो का एक समूह। – ६५

द्रविड़ – दक्षिणी भारत में रहनेवाला एक जातिसमूह। – ३८

नायर – भारत के मलाबार तट पर रहनेवाले भारतीयो की एक उच्चवर्गीय अब्रह्मण्य जाति। – ७७

नूटका – उत्तरी अमरीका के कुछ छोटे रेड इंडियन कबीलों का समूह। – २०५

नूबियन – पूर्वी सूडान के उत्तरी भाग और दक्षिणी मिस्र में रहनेवाली एक छोटी अफ़्रीकी जाति। – १२३

नेनेत्स – सोवियत संघ के उत्तरी इलाकों में रहनेवाली एक छोटी जाति। – १६८

नोर्मन – एक जर्मन कबीला, जो युटलैण्ड और स्कैण्डिनेविया में रहता था। पूर्व-मध्ययुग मे सभी प्राचीन नार्वेजियनो, स्वीडिशों और डेनिशो को उस नाम से पुकारा जाता था। – ३२, १६७

नौरिक – आइलिरी केल्टों का एक समूह, जो प्राचीन रोमन सामाज्य के नौरिक प्रान्त (वर्तमान स्तीरिया और अंशतः करीन्तिया) में रहता था। – १६०

न्यू-मेक्सिको – देखिये पुएब्लो।

पंजा – एक भारतीय कबीला। – ६४

पशाव – जार्जियाई जाति का एक वर्ग। – १६८

पार्थव – प्राचीन ईरानी कबीलो का एक समूह, जो प्रथम सहस्राब्दी ई० पू० के मध्य में ईरानी पहाड़ो के उत्तर-पूर्वी भाग में रहता था और बाद में पास-पड़ोस की जातियों में घुल-मिल गया। – ४६

पिक्ता – प्राचीन काल में स्काटलैण्ड में रहनेवाले कबीलों का समूह, जिसे नौवी सदी के मध्य में स्काटों ने जीत लिया। – १७३

पुएब्लो – उत्तरी अमरीका के रेड इंडियन कबीलो का एक समूह। – ३३, ३४, ११६, १३७

पेरुअन – पेरू के मूल निवासी। – ३३, ७६, ११६

बारिया – वर्तमान पश्चिमी ईथियोपिया और एरीत्रिया के क्षेत्र पर रहनेवाला कबीला। – ६६

बास्टर्न – गोथ ग्रुप का एक जर्मन क़बीला, जो ईस्वी संवत् के आरंभ तक कर्पेथिया और डेन्यूब के बीच रहता था। – १८६

बेल्जियन – गाली केल्ट कबीलों का एक समूह, जो उत्तरी गाल प्रदेश में और ब्रिटेन के पश्चिमी तट पर रहता था। – १७८

ब्रक्टेरिया – एक जर्मन कबीला, जो ईस्वी संवत् के शुरू में लिप्पे और एम्स नदियों के बीच के इलाके में रहता था। – १७८

ब्रिटन – ब्रिटेन में सबसे पहले बसनेवाले केल्ट कबीलों का एक समूह। एंग्लो-सैक्सनों की विजय के बाद इन कबीलों का एक हिस्सा एंग्लो-सैक्सनों में विलयित हो गया और एक हिस्सा वेल्स, स्काटलैण्ड तथा ब्रिटन प्रायःद्वीप (फ्रांस) पर जा बसा। – २३, ५२

भारतीय, भारतीय क़बीले – भारत के मूल निवासी। – ३८, १६८

मगर – पश्चिमी नेपाल में रहनेवाली एक छोटी जाति। – १६, १६८

मणिपुरी – भारत के मणिपुर राज्य की मूल आबादी। – १६८

मलय जाति। – ६५

मियामी – उत्तरी अमरीकी रेड इंडियनों का एक क़बीला, जो सत्रहवीं सदी में मिशीगन झील के पश्चिमी तट पर रहता था। – ७१

मेक्सिकोवासी – मेक्सिको की मूल आबादी। – ३३, ११६, १३७, १७५

मोहौक – इरोक्वा ग्रुप का एक उत्तरी अमरीकी रेड इंडियन कबीला। – ११८

रेड इंडियन – अमरीका के मूल निवासी – ११, २३–२५, ३१, ३२, ३४, ६५, ३८, ५५, ५६, ६१, ६५, ६६, ७१, ८६, १०६, ११२–१२३, १३४, १५४, १८०, १८४, १८४, २०३–२०५

लाइगूरियन – अत्यन्त प्राचीन काल में अपेन्निन (इतालवी) प्रायद्वीप के बड़े भाग पर रहनेवाले कबीलों का एक समूह। ईसापूर्व छठी सदी में इतालवी कबीलों ने उन्हें प्रायद्वीप के उत्तर पश्चिमी भाग और दक्षिण-पूर्वी गाल प्रदेश में खदेड़ दिया। ईस्वी संवत् के शुरू में वे रोमनों के हाथों पराजित होकर शनैः-शनैः उनमें घुल-मिल गये। – १९०

लैंगोबार्ड – *एक जर्मन कबीला, जो पांचवीं सदी के आरंभ तक एल्बा के* निचले भाग में बायें तट पर रहता था, जहां से वह पहले मध्य डेन्यूब

घाटी और फिर इटली के उत्तरी और केन्द्रीय भागों में जा बसा। –१७४

लैटिन क़बीले – प्राचीन इतालवी कबीलो के दो मुख्य समूहो मे से एक। प्राचीन रोमन इसी समूह के थे। – ७३, १५४, १६३

वारली – एक भारतीय जाति, जो वर्तमान महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश के उत्तरी जिलो मे रहती है। – १६८

वेल्स (वालियन) – केल्ट मूल की एक जाति, जो वेल्स प्रायद्वीप और ब्रिटिश द्वीपो पर रहती है। – १७३

शक (सीथियन) – सातवी सदी ई० पू० से ईस्वी संवत् की पहली कुछ सदियों तक काले सागर के तटवर्ती उत्तरी इलाको में रहनेवाले कबीलो का समूह। – ४६

शौनी – उत्तरी अमरीका का एक रेड इंडियन कबीला। – ७१

संथाल – एक भारतीय आदिम जाति, जो आजकल भारत के संथाल परगना इलाके मे रहती है। – ६४

सामी – उन्नीसवी सदी मे सामी-हामी भाषाभाषी जातियो की सामी शाखा के लिये व्यापक तौर पर प्रयुक्त नाम। – ३४, ६८, ७४, ७७, २०५

सालियन फ़्रैंक – फ़्रैंक ग्रुप के जर्मन कबीलो की दो मुख्य शाखाओ मे से, जो चौथी सदी के मध्य तक राइन के मुहाने और शेल्डा के बीच उत्तरी सागर के तट पर रहता था, जहा से बाद मे वह उत्तरी गाल प्रदेश में जाकर बस गया। – १६६

सामोयेदी – नेनेत्स जाति का पुराना नाम। देखिये **नेनेत्स**।

सिम्बरी – जर्मन कबीलो का एक समूह, जो यूटलैण्ड प्रायद्वीप पर रहता था। ईसा पूर्व दूसरी सदी में ये कबीले ट्यूटन कबीलों के साथ यूरोप के दक्षिणी भाग की ओर बढने लगे और रोमनों के हाथ पराजित होकर मास, माइन और नेक्कार नदियो से लगे इलाको मे बिखर गये। – १७४

सुएवी – ईस्वी सवत् के प्रारंभ तक एल्बा की उपत्यका मे रहनेवाले जर्मन कबीलो का एक समूह। – ११५, १७४, १८०, १८१

सेनेका – इरोक्वा समूह का एक उत्तरी अमरीकी रेड इंडियन कबीला, जो वर्तमान न्यूयार्क राज्य के इलाके मे रहता था। – ५७, ३८, ६२, १०८–११४, ११६

स्काट – केल्ट कबीलो का एक समूह, जो प्राचीन काल मे आयरलैण्ड में रहता

था। ५०० ई० के आसपास स्काटों का एक हिस्सा वर्तमान स्काटलैण्ड मे आकर बस गया। नौवी सदी के मध्य मे उसने पिक्तों को पराजित किया। – १७३

स्वान – जार्जियाई जाति का एक वर्ग, जो मुख्य काकेशिया पर्वतमाला के दक्षिण-पश्चिमी भाग में स्थित स्वानेतिया मे रहता है। – १६८

सेबील (सेबीलियन) – प्राचीन इतालवी कबीलो के दो मुख्य समूहों मे से एक। – १५४

हर्मीनोन – जर्मन कबीलो का एक मूल समूह, जो ईस्वी संवत् के शुरू तक एल्बा और माइन नदियों के बीच के इलाके मे रहता था। इस समूह मे सुएवी, लैंगोबार्ड, मर्कोमान, हात्त, आदि क़बीले आते हैं। –१७४, १६०

हूण – ईस्वी सवत् के प्रारंभ तक ह्वांग हो नदी से पश्चिम तथा उत्तर में रहनेवाली एक मध्य एशियाई घुमन्तू जाति। पहली सदी मे हूणो का एक हिस्सा पश्चिम की ओर बढने लगा और पांचवी सदी के मध्य तक गाल प्रदेश तक पहुंच गया, जहा उसे रोमनों और अन्य यूरोपियाई जातियो से पराजित होना पड़ा। – ४६

हेरुल – एक जर्मन कबीला, जो ईस्वी संवत् के शुरू तक स्कैण्डिनेविया प्रायद्वीप पर रहते थे। तीसरी सदी मे उनका एक हिस्सा काले सागर के तटवर्ती क्षेत्र के उत्तरी भाग मे जा बसा, जहा से बाद मे हूणो ने उन्हे निकाल दिया। – ८७

हैडा – उत्तरी अमरीका के रेड इडियनो का एक कबीला, जो क्वीन शर्लोट द्वीप और प्रिंस वेल्स द्वीप के दक्षिणी भाग में रहता था। – २०५

हो – एक भारतीय आदिम जाति। – ६४

पाठकों से

प्रगति प्रकाशन इस पुस्तक के अनुवाद और डिजाइन के बारे में आपके विचार जानकर अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त करके भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। हमारा पता है :

प्रगति प्रकाशन, २१,
ज़ूवोव्स्की बुलवार, मास्को,
सोवियत संघ।